

614

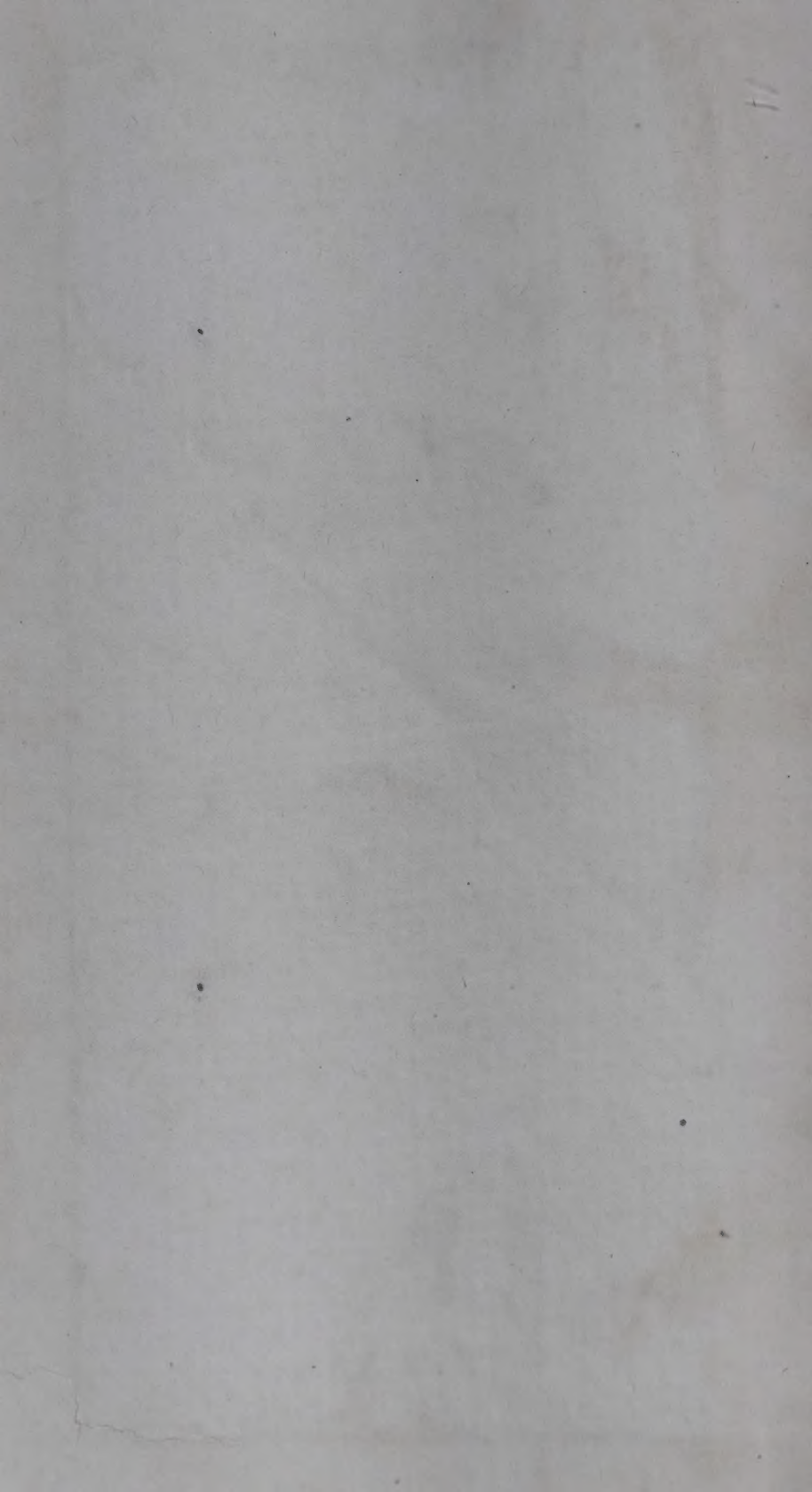
11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100 101 102 103 104 105 106 107 108 109 110 111 112 113 114 115 116 117 118 119 120 121 122 123 124 125 126 127 128 129 130 131 132 133 134 135 136 137 138 139 140 141 142 143 144 145 146 147 148 149 150 151 152 153 154 155 156 157 158 159 160 161 162 163 164 165 166 167 168 169 170 171 172 173 174 175 176 177 178 179 180 181 182 183 184 185 186 187 188 189 190 191 192 193 194 195 196 197 198 199 200 201 202 203 204 205 206 207 208 209 210 211 212 213 214 215 216 217 218 219 220 221 222 223 224 225 226 227 228 229 230 231 232 233 234 235 236 237 238 239 240 241 242 243 244 245 246 247 248 249 250 251 252 253 254 255 256 257 258 259 260 261 262 263 264 265 266 267 268 269 270 271 272 273 274 275 276 277 278 279 280 281 282 283 284 285 286 287 288 289 290 291 292 293 294 295 296 297 298 299 300 301 302 303 304 305 306 307 308 309 310 311 312 313 314 315 316 317 318 319 320 321 322 323 324 325 326 327 328 329 330 331 332 333 334 335 336 337 338 339 340 341 342 343 344 345 346 347 348 349 350 351 352 353 354 355 356 357 358 359 360 361 362 363 364 365 366 367 368 369 370 371 372 373 374 375 376 377 378 379 380 381 382 383 384 385 386 387 388 389 390 391 392 393 394 395 396 397 398 399 400 401 402 403 404 405 406 407 408 409 410 411 412 413 414 415 416 417 418 419 420 421 422 423 424 425 426 427 428 429 430 431 432 433 434 435 436 437 438 439 440 441 442 443 444 445 446 447 448 449 450 451 452 453 454 455 456 457 458 459 460 461 462 463 464 465 466 467 468 469 470 471 472 473 474 475 476 477 478 479 480 481 482 483 484 485 486 487 488 489 490 491 492 493 494 495 496 497 498 499 500 501 502 503 504 505 506 507 508 509 510 511 512 513 514 515 516 517 518 519 520 521 522 523 524 525 526 527 528 529 530 531 532 533 534 535 536 537 538 539 540 541 542 543 544 545 546 547 548 549 550 551 552 553 554 555 556 557 558 559 560 561 562 563 564 565 566 567 568 569 570 571 572 573 574 575 576 577 578 579 580 581 582 583 584 585 586 587 588 589 590 591 592 593 594 595 596 597 598 599 600 601 602 603 604 605 606 607 608 609 610 611 612 613 614 615 616 617 618 619 620 621 622 623 624 625 626 627 628 629 630 631 632 633 634 635 636 637 638 639 640 641 642 643 644 645 646 647 648 649 650 651 652 653 654 655 656 657 658 659 660 661 662 663 664 665 666 667 668 669 670 671 672 673 674 675 676 677 678 679 680 681 682 683 684 685 686 687 688 689 690 691 692 693 694 695 696 697 698 699 700 701 702 703 704 705 706 707 708 709 710 711 712 713 714 715 716 717 718 719 720 721 722 723 724 725 726 727 728 729 730 731 732 733 734 735 736 737 738 739 740 741 742 743 744 745 746 747 748 749 750 751 752 753 754 755 756 757 758 759 760 761 762 763 764 765 766 767 768 769 770 771 772 773 774 775 776 777 778 779 780 781 782 783 784 785 786 787 788 789 790 791 792 793 794 795 796 797 798 799 800 801 802 803 804 805 806 807 808 809 810 811 812 813 814 815 816 817 818 819 820 821 822 823 824 825 826 827 828 829 830 831 832 833 834 835 836 837 838 839 840 841 842 843 844 845 846 847 848 849 850 851 852 853 854 855 856 857 858 859 860 861 862 863 864 865 866 867 868 869 870 871 872 873 874 875 876 877 878 879 880 881 882 883 884 885 886 887 888 889 890 891 892 893 894 895 896 897 898 899 900 901 902 903 904 905 906 907 908 909 910 911 912 913 914 915 916 917 918 919 920 921 922 923 924 925 926 927 928 929 930 931 932 933 934 935 936 937 938 939 940 941 942 943 944 945 946 947 948 949 950 951 952 953 954 955 956 957 958 959 960 961 962 963 964 965 966 967 968 969 970 971 972 973 974 975 976 977 978 979 980 981 982 983 984 985 986 987 988 989 990 991 992 993 994 995 996 997 998 999 1000 1001 1002 1003 1004 1005 1006 1007 1008 1009 1010 1011 1012 1013 1014 1015 1016 1017 1018 1019 1020 1021 1022 1023 1024 1025 1026 1027 1028 1029 1030 1031 1032 1033 1034 1035 1036 1037 1038 1039 1040 1041 1042 1043 1044 10

॥ युद्धकाण्डः ॥

द्वितीयः खण्डः ॥

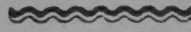
A detailed black and white woodcut-style illustration of a classical vase. The vase is filled with a bouquet of flowers, including what appears to be a carnation and a pansy, along with various leaves. A small, dark, rounded object, possibly a seed pod or a small fruit, lies on the surface in front of the vase.

Published by
The Educational Supplies Depot,
PALGHAT.



॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमद्वाल्मीकिरामायणम् ॥



॥ युद्धकाण्डः ॥

प्रथमः खण्डः ॥



YUDDHAKANDAM

PART I

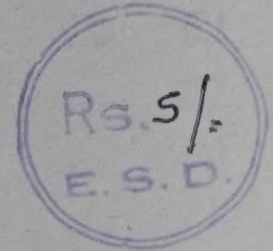
RAJARAM BOOK HOUSE
BOOKS ON PHILOSOPHY
No. 8/2, Nagappa Street, Seshadripuram,
BANGALORE-560 020.



Published by

The Educational Supplies Depot,

PALGHAT.



Price Rs. ~~3/-~~

॥ श्री ॥

॥ श्रीमद्भगवद्गीता ॥

॥ अष्टादशः ॥

॥ अष्टादशः ॥

YUDDHAKANDAM

PART I

PRINTED AT
THE VANI VILAS PRESS,
PALGHAT.



Published by

The Educational Supplies Depot

PALGHAT.

Price Rs. 2/-

॥ विषयानुक्रमणिका ॥

सर्गः	विषयः	पुटः
1	हनुमत्प्रशंसनम्	1
2	श्रीरामप्रोत्साहनम्	4
3	लङ्कादुर्गादिवर्णनम्	7
4	दण्डयात्रा	11
5	श्रीरामविलापः	27
6	रावणमन्त्रोपक्रमः	30
7	सचिवोक्तिः	33
8	प्रहस्तादिवाक्यम्	36
9	विभीषणप्रतीषेधोक्तिः	39
10	पथ्योपदेशः	42
11	द्वितीयमन्तारम्भः	47
12	कुम्भकर्णवाक्यम्	51
13	महापार्श्ववाक्यम्	57
14	विभीषण-प्रहस्ताविवादः	60
15	हन्द्रजित्-विभीषणविवादः	65
16	विभीषणनिन्दनम्	68
17	कारणागतिनिवेदनम्	72
18	संग्रहनिर्णयम्	81

सर्गः	विषयः	पुटः
19	शरतल्पशयनम्	86
20	सुग्रीवभेदनोपायः	91
21	समुद्रसंक्षोभः	96
22	सेतुबन्धः	101
23	महोत्पातदर्शनम्	113
24	शुकविमोचनम्	115
25	शुकसारणप्रेषणम्	121
26	कपियूथपनिरीक्षणम्	125
27	यूथपपराक्रमवर्णनम्	132
28	मैन्दादिपराक्रमम्	138
29	शार्दूलादिचारप्रेषणम्	144
30	शार्दूलवाक्यम्	148
31	सीतासम्मोहनम्	153
32	सीताप्रलापः	159
33	सीतासमाश्वासनम्	165
34	रावणनिश्चयकथनम्	170
35	माल्यवदुपदेशः	174
36	लङ्कापुरद्वाररक्षा	179
37	वानरसैन्यगुप्तिविधानम्	183
38	सुवेलारोहणम्	187
39	लङ्कादर्शनम्	190

सर्गः	विषयः	पुटः
40	रावणसुग्रीवनियुद्धम्	... 194
41	अङ्गददूत्यम्	... 199
42	युद्धारम्भः 212
43	द्वन्द्वयुद्धवर्णनम्	... 218
44	निशायुद्धम्	... 225
45	नागपाशबन्धः	... 231
46	सुग्रीवानुशोचनम्	... 234
47	नागपाशबन्धरामलक्ष्मणप्रदर्शनम्	... 241
48	सीताश्वासनम्	... 245
49	श्रीरामप्रबोधनम्	... 250
50	नागपाशविमोचनम्	... 255
51	धूम्राक्षनिर्गमः	... 263
52	धूम्राक्षवधः	... 268
53	वज्रदंष्ट्रयुद्धम्	... 273
54	वज्रदंष्ट्रवधः 277
55	अकम्पनयुद्धम्	... 282
56	अकम्पनवधः	... 287
57	प्रहस्तनिर्गमः 292
58	प्रहस्तवधः	... 298
59	रावणाभिषेकनम्	... 306
60	कुम्भकर्णप्रबोधनम् 331

सर्गः	विषयः	पुटः
61	कुम्भकर्णवरूपदर्शनम्	344
62	रावणाभ्यर्थता	350
63	कुम्भकर्णानुशो कः	353
64	महोदरवाक्यम्	360
65	कुम्भकर्णाभिषेकनम्	365
66	वानराणां पलायनान्निवर्तनम्	373
67	कुम्भकर्णवधः	378
68	रावणप्रलापः	406
69	नरान्तकवधः	409
70	देवान्तकादिवधः	423



॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमद्वाल्मीकिरामायणम् ॥



॥ युद्धकाण्डः ॥



प्रथमः सर्गः ॥



श्रुत्वा हनुमतो वाक्यं यथावदभिभाषितम् ।

रामः प्रीतिसमायुक्तो वाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥

१

कृतं हनुमता कार्यं सुमहद्भुवि दुष्करम् ।

मनसापि यदन्येन न शक्यं धरणीतले ॥

२

न हि तं परिपश्यामि यस्तरेत महार्णवम् ।

अन्यत्र गहडाद्वायोरन्यत्र च हनुमतः ॥

३

देवदानवयक्षाणां गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।

अप्रधृष्यां पुरीं लङ्कां रावणेन सुरक्षिताम् ॥

४

यो वीर्यबलसम्पन्नो द्विपद्भिरनिवारितः ।

प्रविष्टः सत्वमाश्रित्य जीवन् को नाम निष्क्रमेत् ॥ ५

को विशेत्सुदुराधर्षा राक्षसैश्च सुरक्षिताम् ।

यो वीर्यबलसम्पन्नो न सगः स्याद्धनूमतः ॥ ६

भृत्यकार्यं हनुमता सुग्रीवस्य कृतं महत् ।

एवं विधाय स्वबलं सदृशं विक्रमस्य च ॥ ७

यो हि भृत्यो नियुक्तः सन् भर्त्रा कर्मणि दुष्करे ।

कुर्यात्तदनुरागेण तमाहुः पुरुषोत्तमम् ॥ ८

भृत्यस्तु यः परं कार्यं न कुर्यान्नृपतेः प्रियम् ।

भृत्यकार्ये समर्थोऽपि तमाहुर्मध्यमं नरम् ॥ ९

नियुक्तो नृपतेः कार्यं न कुर्याद्यः समाहितः ।

भृत्यो युक्तः समर्थोऽपि तमाहुः पुरुषाधमम् ॥ १०

तन्त्रियोगे नियुक्तेन कृतं कर्म हनूमता ।

न चात्मा लघुतां नीतः सुग्रीवश्चापि तोषितः ॥ ११

अहं च रघुवंशश्च लक्ष्मणश्च महाबलः ।

वैदेह्या दर्शनेनाद्य धर्मतः परिरक्षिताः ॥ १२

इदं तु मम दीनस्य मनो भूयः प्रवक्ष्यति ।
यदिहास्य प्रियारुन्ध्यातुर्न कुर्मि सदृशं प्रियम् ॥ १३

एष सर्वस्वभूतस्तु परिष्वङ्गो हनूमतः ।
मया कालमिमं प्राप्य दत्तश्चास्य महात्मनः ॥ १४

इत्युक्त्वा प्रीतिहृष्टाङ्गो राघवः परिष्वजे ।
हनूमन्तं महात्मानं कृतकार्यमुपागतम् ॥ १५

ध्यात्वा पुनरुवाचेदं वचनं रघुसत्तमः ।
हरीणामीश्वरस्यैव सुग्रीवस्योपशृण्वतः ॥ १६

सर्वथा सुकृतं तावत् सीतायाः परिमार्गणम् ।
सागरं तु समासाद्य पुनर्नष्टं मनो मम ॥ १७

कथं नाम समुद्रस्य दुष्पारस्य महाम्भसः ।
हरयो दक्षिणं पारं गमिष्यन्ति समाहिताः ॥ १८

यद्यप्येवं तु वैदेह्या वृत्तान्तो गदितो मम ।
समुद्रपारगमने हरीणां किमिवोत्तरम् ॥ १९

इत्युक्त्वा शोकसंभ्रान्तो रामः शत्रुनिर्बहणः ।
हनूमन्तं महाबाहुस्ततो ध्यानमुपागमत् ॥ २०

इति प्रथमः सर्गः ॥



द्वितीयः सर्गः ॥

तं तु शोकपरिधूनं रामं दशरथात्मजम् ।

उवाच वचनं श्रीमान् सुग्रीवः शोकनाशनम् ॥ १

किं त्वं सन्तप्यसे वीर यथान्यः प्राकृतस्तथा ।

मैवं भूस्त्यज सन्तापं कृतघ्न इव सौहृदम् ॥ २

सन्तापस्य च ते स्थानं न हि पश्यामि राघव ।

प्रवृत्तावुपलब्धायां ज्ञाते च निलये रिपोः ॥ ३

मतिमाञ्छास्त्रवित्प्राज्ञः पण्डितश्चासि राघव ।

त्यजेमां प्राकृतां बुद्धिं कृतात्मेयात्मदूषणीम् ॥ ४

समुद्रं लङ्घयित्वा तु महानक्रसमाकुलम् ।

लङ्कामारोहयिष्यामो हनिष्यामश्च रावणम् ॥ ५

निरुत्साहस्य दीनस्य शोकपर्याकुलात्मनः ।

सर्वार्था ह्यवसीदन्ति व्यसनं चाधिगच्छति ॥ ६

इमे शूराः समर्थाश्च सर्वे ते हरियूथपाः ।

त्वत्प्रियार्थं कृतोत्साहाः प्रवेष्टुमपि पावकम् ॥ ७

एषां हर्षेण जानामि तर्कश्चास्ति दृढो मम ॥

विक्रमेण समानेष्ये सीतां हत्वा यथा रिपुम् ।

रावणं पापकर्माणं तथा त्वं कर्तुमर्हसि ॥

८

सेतुरत्र यथा बध्येद्यथा पश्येम तां पुरीम् ।

तस्य राक्षसराजस्य तथा त्वं कुरु राघव ॥

९

दृष्ट्वैव च पुरीं लङ्कां त्रिकूटशिखरे स्थिताम् ।

हतं च रावणं युद्धे दर्शनादुपधारय ॥

१०

अबद्ध्वा सागरे सेतुं घोरे तु वरुणालये ।

लङ्का न मर्दितुं शक्या सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥

११

सेतुर्बद्धः समुद्रे च यावलङ्कासमीपतः ।

सर्वं तीर्णं च वै सैन्यं जितमित्युपधारय ॥

१२

इमे हि समरे शूरा हरयः कामरूपिणः ॥

१३

तदलं विह्वला बुद्धी राजन् सर्वार्थनाशिनी ।

पुरुषस्य हि लोकेऽस्मिन् शोकः शौर्यापकर्षणः ॥

१४

यत्तु कार्यं मनुष्येण शौण्डीर्यमवलम्बता ।

तदलङ्कारणायैव कर्तुर्भवति सत्वरम् ॥

अस्मिन्काले महाप्राज्ञ सत्त्वमातिष्ठ तेजसा ॥

१५

- शूराणां हि मनुष्याणां त्वद्विधानां महात्मनाम् ।
 विनष्टे वा प्रणष्टे वा क्षमं नाप्यनुशोचितुम् ॥ १६
- त्वं तु बुद्धिमतां श्रेष्ठः सर्वशास्त्रार्थकोविदः ।
 मद्विधैः सचिवैः सार्धमरिं जेतुमिहार्हसि ॥ १७
- न हि पश्याम्यहं कञ्चित् त्रिषु लोकेषु राघव ।
 गृहीतधनुषो यस्ते तिष्ठेदभिमुखो रणे ॥ १८
- वानरेषु समासक्तं न ते कार्यं विपत्स्यते ।
 अचिराद्द्रक्ष्यसे सीतां तीर्त्वा सागरमक्षयम् ॥ १९
- तदलं शोकमालम्ब्य क्रोधमालम्ब्य भूपते ।
 निश्चेष्टाः क्षत्रिया मन्दाः सर्वे चण्डस्य बिभ्यति ॥ २०
- लङ्घनार्थं सुघोरस्य समुद्रस्य नदीपतेः ।
 सहास्माभिरिहोपेतः सूक्ष्मबुद्धिर्विचारय ॥ २१
- सर्वं तीर्णं च मे सैन्यं जितमित्युपधार्यताम् ॥ २२
- इमे च हरयः शूरा विक्रान्ताः कामरूपिणः ।
 तानरीन्विधमिष्यन्ति शिलापादपवृष्टिभिः ॥ २३
- कथञ्चित्परिपश्यामस्तं वयं वरुणालयम् ।
 हतमित्येव तं मन्ये मुद्धे समितिनन्दन ॥ २४

किमुक्त्वा बहुधा राम सर्वथा विजयी भवान् ।
निमित्तानि च पश्यामि मनो मे संप्रहृष्यति ॥ २५

इति द्वितीयः सर्गः ॥



तृतीयः सर्गः ॥

सुग्रीवस्य वचः श्रुत्वा हेतुमत्परमार्थवत् ।
प्रतिजग्राह काकुत्स्थो हनुमन्तमथाब्रवीत् ॥ १

तपसा सेतुबन्धेन सागरोच्छोषणेन वा !
सर्वथा सुसमर्थोऽस्मि सागरस्यास्य लङ्घने ॥ २

कति दुर्गाणि लङ्कायास्तत्त्वतस्तद्वतीहि मे ।
ज्ञातुमिच्छामि तत्सर्वं दर्शनादिव वानर ॥ ३

बलस्य परिमाणं च द्वारदुर्गक्रियामपि ।
गुप्तिकर्म च लङ्काया रक्षसां सदनानि च ॥ ४

यथासुखं यथावच्च लङ्कायामसि दृष्टवान् ।
सर्वमाचक्ष्व तत्त्वेन सर्वथा कुशलो ह्यसि ॥ ५

श्रुत्वा रामस्य वचनं हनूमान्मारुतात्मजः ।
वाक्यं वाक्यविदां श्रेष्ठो रामं पुनरथाब्रवीत् ॥ ६

श्रूयतां सर्वमाख्यास्ये दुर्गकर्मविधानतः ।
गुप्ता पुरी यथा लङ्का रक्षिता च यथा बलैः ॥ ७

राक्षसाश्च यथा स्निग्धा रावणस्य तु तेजसा ।
परां समृद्धिं लङ्कायाः सागरस्य च भीमताम् ॥ ८

विभागं च बलौघस्य निर्देशं वाहनस्य च ।
एवमुक्त्वा कपिश्रेष्ठः कथयामास तत्त्वतः ॥ ९

दृष्टा प्रमुदिता लङ्का भूतद्विपसमाकुला ।
महती रथसंपूर्णा रक्षोगणसमाकुला ॥
वाजिभिश्च सुसंपूर्णा सा पुरी दुर्गमा परैः ॥ १०

दृढबद्धकवाटानि महापरिघवन्ति च ।
चत्वारि विपुलान्यस्या द्वाराणि सुमहान्ति च ॥ ११

तलेषूपलयन्त्राणि बलवन्ति महान्ति च ।
आगतं परसैन्यं तैस्तत्र प्रतिनिवार्यते ॥ १२

द्वारेषु सुकृता भीमाः कालायसमयाः शिताः ।
शतशो रचिता वीरैः शतस्यो रक्षसां गणैः ॥ १३

स सौवर्णमयस्तस्याः प्राकारो दुष्प्रधर्षणः ।

मणिविद्रुमवैडूर्यमुक्ताविरचितान्तरः ॥

१४

सर्वतश्च महाभीमाः शीततोयवहाः शुभाः ।

अगाधा ग्राहवत्यश्च परिधा मीनसेविताः ॥

१५

द्वारेषु तासां चत्वारः संक्रमाः परमायताः ।

यन्त्रैरुपेता बहुभिर्महद्भिर्गृहपङ्क्तिभिः ॥

१६

त्रायन्ते संक्रमास्तत्र परसैन्यागमे सति ।

यन्त्रैस्तैरवकीर्यन्ते परिखासु समन्ततः ॥

१७

एकस्त्वक्रम्यो बलवान्संक्रमः सुमहान्दृढः ।

काञ्चनैर्बहुभिःस्तम्भैर्वेदिकाभिश्च शोभितः ॥

१८

स्वयं प्रकृतिसम्पन्नो युयुत्सू राम रावणः ।

उत्थितश्चाप्रमत्तश्च बलानामनुदर्शने ॥

१९

लङ्का पुनर्निरालम्बा देवदुर्गा भयावहा ।

नादेयं पार्वतं वान्यं कृत्रिमं च चतुर्विधम् ॥

२०

स्थिता पारे समुद्रस्य दूरपारस्य राघव ।

नौपथश्चापि नास्त्यत्र निरादेशश्च सर्वतः ॥

२१

शैलाग्रे रचिता दुर्गा सा पूर्वेवपुरोपमा ।

वाजिवारणसंपूर्णा लङ्का परमदुर्गमा ॥

२२

परिघाश्च शतघ्न्यश्च यन्त्राणि विविधानि च ।

शोभयन्ति पुरीं लङ्कां रावणस्य दुरात्मनः ॥

२३

अयुतं रक्षसामत्र पश्चिमद्वारमाश्रितम् ।

शूलहस्ता दुराधर्षाः सर्वे खड्गाग्रयोधिनः ॥

२४

नियुतं रक्षसामत्र दक्षिणद्वारमाश्रितम् ।

चतुरङ्गेन सैन्येन योधास्तत्राप्यनुत्तमाः ॥

२५

प्रयुतं रक्षसामत्र पूर्वद्वारं समाश्रितम् ।

चर्मखड्गधराः सर्वे तथा सर्वास्त्रकोविदाः ॥

२६

न्यर्बुदं रक्षसामत्र उत्तरद्वारमाश्रितम् ।

रथिनश्चाश्ववाहाश्च कुलपुत्राः सुपूजिताः ॥

२७

शतशोऽथ सहस्राणि मध्यमं स्कन्धमाश्रिताः ।

यातुधाना दुराधर्षाः शतकोटिश्च रक्षसाम् ॥

२८

बलैकदेशः क्षपितो राक्षसानां दुरात्मनाम् ॥

२९

ते मया संक्रमा भग्नाः परिखाश्चावपूरिताः ।

दग्धा च नगरी लङ्का प्राकाराश्चावसादिताः ॥

३०

येन केन तु मार्गेण तराम वरुणालयम् ।
हतेति नगरी लङ्का वानरैरुपधार्यताम् ॥ ३१

अङ्गदो द्विविदो मैन्दो जाम्बवान्पनसो नलः ।
नीलः सेनापतिश्चैव बलशेषेण किं तव ॥ ३२

प्लवमाना हि लङ्कां तां रावणस्य महापुरीम् ।
सपर्वतवनां भित्त्वा सखातां सप्रतोरणाम् ॥ ३३

सप्राकारां सभवनामानयिष्यन्ति मैथिलीम् ।
एवमाज्ञापय क्षिप्रं बलानां सर्वसंग्रहम् ।
मुहूर्तेन तु युक्तेन प्रस्थानमभिरोचय ॥ ३४

इति तृतीयः सर्गः ॥



चतुर्थः सर्गः ॥

श्रुत्वा हनुमतो वाक्यं यथावदनुपूर्वशः ।
ततोऽब्रवीन्महातेजा रामः सत्यपराक्रमः ॥ १

यां निवेदयसे भीमां पुनीं भीमस्य रक्षसः ।
क्षिप्रमेनां मथिष्यामि सत्यमेतद्ब्रवीमि ते ॥ २

अस्मिन्मुहूर्ते सुग्रीव प्रयाणमभिरोचय ।

युक्तो मुहूर्तो विजयः प्राप्तो मध्यं दिवाकरः ॥ ३

अस्मिन्मुहूर्ते विजये प्राप्ते मध्यं दिवाकरे ।

सीतां हत्वा तु मे यातु कासौ यास्यति यास्यतः ॥ ४

सीता श्रुत्वाऽभियानं मे आशामेष्यति जीविते ।

जीवितान्तेऽमृतं स्पृष्ट्वा पीत्वा विषमिवातुरः ॥ ५

उत्तरा फल्गुनी ह्यद्य श्वस्तु हस्तेन योक्ष्यते ।

अभिप्रयाम सुग्रीव सर्वानीकसमावृताः ॥ ६

निमित्तानि च धन्यानि यानि प्रादुर्भवन्ति वै ।

निहत्य रावणं सङ्क्षये ह्यानयिष्यामि जानकीम् ॥ ७

उपरिष्ठाद्धि नयनं स्फुरमाणमिदं मम ।

विजयं समनुप्राप्तं शंसतीव मनोरथम् ॥ ८

ततो वानरराजेन लक्ष्मणेन च पूजितः ।

उवाच वचनं रामः पुनरप्यर्थकोविदः ॥ ९

अग्रे यातु बलस्यास्य नीलो मार्गमवेक्षितुम् ।

धृतः शतसहस्रेण वानराणां तरस्विनाम् ॥ १०

फलमूलवता नील शीतकाननवारिणा ।

पथा मधुमता चाशु सेनां सेनापते नय ॥ ११

दूषयेयुर्दुरात्मानः पथि मूलफलोदकम् ।

राक्षसाः परिरक्षेथास्तेभ्यस्त्वं नित्यमुद्यतः ॥ १२

निम्नेषु वनदुर्गेषु वनेषु च वनौकसः ।

अभिप्लुत्याशु पश्येयुः परेषां निहितं बलम् ॥ १३

यच्च फल्गु बलं किञ्चित्तदत्रैवोपनीयताम् ।

एतावद्धि तु कृत्यं नो विक्रमेण प्रयुज्यताम् ॥ १४

सागरौथनिभं भीममग्रानीकं महाबलाः ।

कपिसिंहाः प्रकर्षन्तु शतशोऽथ सहस्रशः ॥ १५

गजश्च गिरिसङ्काशो गवयश्च महाबलः ।

गवाक्षश्चाग्रतो यान्तु गवां दृप्ता इवर्षभाः ॥ १६

यातु वानरवाहिन्या वानरौघघतां पतिः ।

पालयन्दक्षिणं पार्श्वं ऋषभो वानरर्षभः ॥ १७

मन्धहस्तीव दुर्धर्षस्तरस्वी गन्धमादनः ।

यातु वानरवाहिन्याः सव्यं पार्श्वमधिष्ठितः ॥ १८

यास्यामि बलमध्येऽहं बलौघमभिहर्षयन् ।

अधिरुह्य हनूमन्तमैरावतमिवेश्वरः ॥

१९

अङ्गदेनैष संयातु लक्ष्मणश्चान्तकोपमः ।

सार्वभौमेन भूतेशो द्रविणाधिपतिर्यथा ॥

२०

जाम्बवांश्च सुषेणश्च वेगदर्शी च वानरः ।

ऋक्षराजो महासत्त्वः कुक्षिं रक्षन्तु ते त्रयः ॥

२१

राघवस्य वचः श्रुत्वा सुग्रीवो वाहिनीपतिः ।

व्यादिदेश महावीर्यान् वानरान्वानरर्षभः ॥

२२

ते वानरगणाः सर्वे समुत्पत्य युयुत्सवः ।

गुहाभ्यः शिखरेभ्यश्च आशु पुप्लुविरे तदा ॥

२३

ततो वानरराजेन लक्ष्मणेन च पूजितः ।

जगाम रामो धर्मात्मा ससैन्यो दक्षिणां दिशम् ॥

२४

शतैः शतसहस्रैश्च कोटीभिरयुतैरपि ।

वारणामैश्च हरिभिर्ययौ परिवृतस्तदा ॥

२५

तं यान्तमनुयाति स्म महती हरिवाहिनी ।

हृष्टाः प्रमुदिताः सर्वे सुग्रीवेणाभिपालिताः ॥

२६

आप्लवन्तः प्लवन्तश्च गर्जन्तश्च प्लवङ्गमाः ।

क्ष्वेलन्तो विनदन्तश्च जग्मुर्वै दक्षिणां दिशम् ॥ २७

भक्षयन्तः सुगन्धीनि मधूनि च फलानि च ।

उद्वहन्तो महावृक्षान् मञ्जरीपुञ्जधारिणः ॥ २८

अन्योन्यं सहसा दृप्ता निर्वहन्ति क्षिपन्ति च ।

पततश्चाक्षिपन्त्यन्ये पातयन्तः परे परान् ॥ २९

रावणो नो निद्वन्तव्यः सर्वे च रजनीचराः ।

इति गर्जन्ति हरयो राघवस्य समीपतः ॥ ३०

पुरस्तादृषभो वीरो नीलः कुमुद एव च ।

पन्थानं शोधयन्ति स्म वानरैर्बहुभिः सह ॥ ३१

मध्ये तु राजा सुग्रीवो रामो लक्ष्मण एव च ।

बहुभिर्बलिभिर्ममैर्वृताः शत्रुनिर्वहणैः ॥ ३२

हरिः शतबलिर्वीरः कोटीभिर्दशभिर्वृतः ।

सर्वामेको ह्यवष्टभ्य ररक्ष हरिबाहिनीम् ॥ ३३

कोटीशतपरीवारः केसरी पनसो गजः ।

अर्कश्चातिबलः पार्श्वमेकं तस्याभिगक्षति ॥ ३४

- सुषेणो जाम्बवांश्चैव ऋक्षैर्बहुभिरावृतौ ।
सुग्रीवं पुरतः कृत्वा जघनं तौ ररक्षतुः ॥ ३५
- तेषां सेनापतिर्वीरो नीलो वानरपुङ्गवः ।
सम्पतन् पततां श्रेष्ठस्तद्वलं पर्यवारयत् ॥ ३६
- दरीमुखः प्रजङ्घश्च रम्भोऽथ रभसः कपिः ।
सर्वतश्च ययुर्वीरास्त्वरयन्तः प्लवङ्गमान् ॥ ३७
- एवं ते हरिशार्दूला गच्छन्तो बलदर्पिताः ।
अपश्यंस्ते गिरिश्रेष्ठं सद्यं द्रुमलतायुतम् ॥
सरांसि च सुफुल्लानि तटाकानि महान्ति च ॥ ३८
- रामस्य शासनं ज्ञात्वा भीमकोपस्य भीतवत् ।
वर्जयन्नगरोभ्याशांस्तथा जनपदानपि ॥ ३९
- सागरौघनिभं भीमं तद्वानरबलं महत् ।
निःसर्प महाघोषं भीमघोष इवार्णवः ॥ ४०
- तस्य दाशरथेः पार्श्वे शूरास्ते कपिकुञ्जराः ।
तूर्णमापुल्लवुः सर्वे सदध्वा इव चोदिताः ॥ ४१
- कपिभ्यामुद्यमानौ तौ शुशुभाते नरर्षभौ ।
महज्ज्यामिव संस्पृष्टौ ब्रह्माभ्यां चन्द्रभास्करौ ॥ ४२

ततो वानरराजेन लक्ष्मणेन च पूजितः ।

जगाम रामो धर्मात्मा ससैन्यो दक्षिणां दिशम् ॥ ४३

तमङ्गदगतो रामं लक्ष्मणः शुभया गिरा ।

उवाच प्रीतिपूर्णार्थिं पूर्णार्थिः प्रतिमानवान् ॥ ४४

हृतामवाप्य वैदेहीं क्षिप्रं हत्वा च रावणम् ।

समृद्धार्थः समृद्धार्थामयोध्यां प्रतिप्रास्यसि ॥ ४५

महान्ति च निमित्तानि दिवि भूमौ च राघव ।

शुभानि तव पश्यामि सर्वाण्येवार्थसिद्धये ॥ ४६

अनुवाति शिवो वायुः सेनां मृदुहितः सुखः ।

पूर्णबल्गुस्वराश्चेमे प्रवदन्ति मृगद्विजाः ॥ ४७

प्रसन्नाश्च दिशः सर्वा विमलश्च दिवाकरः ।

उशनाश्च प्रसन्नार्चिरनु त्वां भार्गवो गतः ॥ ४८

ब्रह्मराशिर्विशुद्धश्च शुद्धाश्च परमर्षयः ।

अर्चिष्मन्तः प्रकाशन्ते ध्रुवं सर्वे प्रदक्षिणम् ॥ ४९

सिंशङ्कुर्विमलो भाति राजर्षिः सपुगेहितः ।

पितामहवरोऽस्माकमिक्ष्वाकूणां महात्मनाम् ॥ ५०

विमले च प्रकाशेते विशाखे निरुपद्रवे ।

नक्षत्रं परमस्माकमिक्ष्वकूणां महात्मनाम् ॥ ५१

नैर्ऋतं नैर्ऋतानां च नक्षत्रमतिपीड्यते ।

मूलो मूलवता स्पृष्टो धूप्यते धूमकेतुना ॥ ५२

सर्वं चैतद्विनाशाय राक्षसानामुपस्थितम् ।

काले कालगृहीतानां नक्षत्रग्रहपीडितम् ॥ ५३

प्रसन्नाः सुरसाश्चापो वनानि फलवन्ति च ।

प्रवान्त्यभ्यधिका गन्धा यथर्तुकुसुमा द्रुमाः ॥ ५४

व्यूढानि कपिसैन्यानि प्रकाशन्तेऽधिकं प्रभो ।

देवानामिव सैन्यानि सङ्ग्रामे तारकामये ॥ ५५

एवमार्य समीक्ष्यैतान् प्रीतो भवितुमर्हसि ।

इति भ्रातरमाश्वास्य हृष्टः सौमित्रिरब्रवीत् ॥ ५६

अथावृत्य महीं कृत्स्नां जगाम महती चमूः ।

ऋक्षवानरशार्दूलैर्नखदंष्ट्रयुधैर्वृता ॥ ५७

कराग्रैश्चरणाग्रैश्च वानरैरुत्थितं रजः ।

भीममन्तर्दधे लोकं निवार्य सवितुः प्रभाम् ॥ ५८

सपर्वतवनाकाशां दक्षिणां हरिवाहिनी ।

छादयन्ती ययौ भीमा घामिवाम्बुदसन्ततिः ॥ ५९

उत्तरन्त्यां तु सेनायां सततं बहुयोजनम् ।

नदीस्रोतांसि सर्वाणि सस्यन्दुर्विपरीतवत् ॥ ६०

सरांसि विमलाम्भांसि द्रुमाकीर्णाश्च पर्वतान् ।

समान्निम्नप्रदेशांश्च वनानि फलयन्ति च ॥ ६१

मध्येन च समन्ताच्च तिर्यक्चाधश्च साऽविशत् ।

समावृत्य महीं कृत्स्नां जगाम महती चमूः ॥ ६२

ते हृष्टमनसः सर्वे जग्मुर्मरुतरंहसः ।

हरयो राघवस्यार्थे समारोपितविक्रमाः ॥ ६३

हर्षवीर्यबलोद्रेकान् दर्शयन्तः परस्परम् ।

यौवनोत्सेकजान्दर्पान् विविधांश्चकुरध्वनि ॥ ६४

तत्र केचिद्द्रुतं जग्मुरुत्पेतुश्च तथा परे ।

केचिन्किलकिलां चक्रुर्नारा वनगोचराः ॥ ६५

प्रास्फोटयंश्च पुच्छानि सन्निजघ्नुः पदान्यपि ।

भुजान् विशिष्य शैलांश्च द्रुमानन्ये वमद्भिरे ॥ ६६

आरोहन्तश्च शृङ्गाणि गिरीणां गिरिगोचराः ।

महानादान् विमुञ्चन्ति क्ष्वेलामन्ये प्रचक्रिरे ॥ ६७

ऊरुवेगैश्च ममृदुर्लताजालान्यनेकशः ।

जृम्भमाणाश्च विकान्ता विचिक्रीडुः शिलादुमैः ॥ ६८

शतैः शतसहस्रैश्च कोटीभिश्च सहस्रशः ।

वानराणां सुघोराणां यूथैः परिवृता मही ॥ ६९

सा स्म याति दिवारात्रं महती हरिवाहिनी ।

हृष्टाः प्रमुदिताः सर्वे सुग्रीवेणाभिपालिताः ॥ ७०

वानरास्त्वरितं यान्ति सर्वे युद्धाभिनन्दिनः ।

मुमोक्षयिषवः सीतां मुहूर्तं कापि नासत ॥ ७१

ततः पादपसम्बाधं नानामृगसमायुतम् ।

सह्यपर्वतमासाद्य वानरास्ते समारुहन् ॥ ७२

काननानि विचित्राणि नदीप्रस्रवणानि च ।

पश्यन्नभिययौ रामः सह्यस्य मलयस्य च ॥ ७३

चम्पकांस्तिलकांश्चूतानशोकान्सिन्धुवारकान् ।

करवीरांश्च तिमिशान् भञ्जन्ति स्म प्लवङ्गमाः ॥ ७४

अङ्गोलांश्च करञ्जांश्च लक्षन्यग्रोधतिन्दुकान् ।
जम्बूरामलकान्नीपान् भञ्जन्ति स्म प्लवङ्गमाः ॥ ७५

प्रस्तरेषु च रम्येषु विविधाः काननद्रुमाः ।
वायुवेगप्रचलिताः पुष्पैरवकिरन्ति गाम् ॥ ७६

मारुतः सुखसंस्पर्शो वाति चन्दनशीतलः ।
षट्पदैरनुकूजद्विर्वनेषु मधुगन्धिषु ॥ ७७

अधिकं शैलराजस्तु धातुभिः सुविभूषितः ।
धातुभ्यः प्रसृतो रेणुर्वायुवेगविघट्टितः ॥ ७८

सुमहद्वानरानीकं छादयामास सर्वतः ॥ ७९

गिरिप्रस्थेषु रम्येषु सर्वतः संप्रपुष्पिताः ।
केतक्यः सिन्धुवाराश्च वासन्त्यश्च मनोरमाः ॥ ८०

माधव्यो गन्धपूर्णाश्च कुन्दगुल्माश्च पुष्पिताः ।
चिरिबिल्वा मधूकाश्च वज्जुला वकुलास्तथा ॥ ८१

स्फूर्जकास्तिलकाश्चैव नागवृक्षाश्च पुष्पिताः ।
चूताः पाटलयश्चैव कोविदाराश्च पुष्पिताः ॥ ८२

मुञ्चुलिन्दार्जुनाश्चैव शिगुषाः कुटजास्तथा ।
धवाः शारमलयश्चैव रक्ताः कुरवकास्तथा ॥ ८३

हिन्तालास्तिमिशश्चैव चूर्णका नीपकास्तथा ।

नीलाशोकाश्च वरणा अङ्गोलाः पद्मकास्तथा ॥ ८४

प्लवमानैः प्लवङ्गैस्तु सर्वे पर्याकुलीकृताः ।

वाप्यस्तस्मिन् गिरौ शीताः पल्वलानि तथैव च ॥ ८५

चक्रवाकानुचरिताः कारण्डवनिषेविताः ।

प्लवैः क्रौञ्चैश्च सङ्कीर्णा वराहमृगसेविताः ॥ ८६

ऋक्षैस्तरक्षुभिः सिंहैः शार्दूलैश्च भयावहैः ।

व्यालैश्च बहुभिर्भूमैः सेव्यमानाः समन्ततः ॥ ८७

पद्मैः सौगन्धिकैः फुलैः कुमुदैश्चोत्पलैस्तथा ।

वारिजैर्विविधैः पुष्पै रम्यास्तत्र जलाशयाः ॥

तस्य सानुषु कूजन्ति नानाद्विजगणास्तथा ॥ ८८

स्नात्वा पीत्वोदकान्यत्र जलैः क्रीडन्ति वानराः ।

अन्योन्यं प्लवयन्ति स्म शैलमारुह्य वानराः ॥ ८९

फलान्यमृतकल्पानि मूलानि कुसुमानि च ।

वभन्जुर्वानरास्तत्र पादपांस्तान् बलोत्कटाः ॥ ९०

द्रोणमात्रपमाणानि लम्बमानानि वानराः ।

ययुः पिबन्तो हृष्टास्ते मधूनि मधुपिङ्गलाः ॥ ९१

पादपानवभञ्जन्तो विकर्षन्तस्तथा लताः ।

विधमन्तो गिरिवरान् प्रययुः प्लवगर्षभाः ॥ ९२

वृक्षेभ्योऽन्ये तु कपयो नर्दन्तो मधुदर्पिताः ।

अन्ये वृक्षान् प्रपद्यन्ते प्रपतन्त्यपि चापरे ॥ ९३

बभूव वसुधा तैस्तु संपूर्णा हरिपुङ्गवैः ।

यथा कलमकेदारैः पक्कैरिव वसुन्धरा ॥ ९४

महेन्द्रमथ संप्राप्य रामो राजीवलोचनः ।

अध्यारोहन्महाबाहुः शिखरं द्रुमभूषितम् ॥ ९५

ततः शिखरमारुह्य रामो दशरथात्मजः ।

कूर्ममीनसमाकीर्णमपश्यत्सलिलाकरम् ॥ ९६

ते सद्यः समतिक्रम्य मलयं च महागिरिम् ।

आसेदुरानुपूर्व्येण समुद्रं भीमनिःस्वनम् ॥ ९७

अवरुह्य जगामाशु वेलावनमनुत्तमम् ।

रामो रमयतां श्रेष्ठः समुग्रीवः सलक्ष्मणः ॥ ९८

अथ धौतोपलतलां तोयौघैः सहसोत्थितैः ।

वेलामासाद्य विपुलां रामो वचनमब्रवीत् ॥ ९९

एते वयमनुप्राप्ताः सुग्रीव वरुणालयम् ।

इहेदानीं विचिन्ता सा या नः पूर्वं समुत्थिता ॥ १००

अतः परमपारोऽयं सागरः सरितां पतिः ।

न चायमनुपायेन शक्यस्तरितुमर्णवः ॥ १०१

तदिहैव निवेशोऽस्तु मन्त्रः प्रस्तूयतामिह ।

यथेदं वानरबलं परं पारमवाप्नुयात् ॥ १०२

इतीव स महाबाहुः सीताहरणकर्षितः ।

रामः सागरमासाद्य वासमाज्ञापयत्तदा ॥ १०३

सर्वाः सेना निवेश्यन्तां वेलायां हरिपुङ्गवाः ।

संप्राप्तो मन्त्रकालो नः सागरस्येह लङ्घने ॥ १०४

स्वां स्वां सेनां समुत्सृज्य मा च कश्चित्कृतो व्रजेत् ।

गच्छन्तु वानराः शूरा ज्ञेयं छत्रं भयं च नः ॥ १०५

रामस्य वचनं श्रुत्वा सुग्रीवः सहलक्ष्मणः ।

सेनां न्यवेशयत्तीरे सागरस्य द्रुमायुते ॥ १०६

विरराज समीपस्थं सागरस्य तु तट्टलम् ।

मधुपाण्डुजलः श्रीमान् द्वितीय इव सागरः ॥ १०७

वेलावनमुपागम्य ततस्ते हरिपुङ्गवाः ।

विनिविष्टाः परं पारं काङ्क्षमाणा महोदधेः ॥ १०८

तेषां विविशमानानां सैन्यसन्नाहनिःस्वनः ।

अन्तर्धाय महानादमर्णवस्य प्रशुश्रुवे ॥ १०९

सा वानराणां ध्वजिनी सुग्रीवेणाभिपालिता ।

त्रिधा निविष्टा महती रामस्यार्थपराऽभवत् ॥ ११०

सा महार्णवमासाद्य हृष्टा वानरवाहिनी ।

वायुवेगसमाधूतं पश्यमाना महार्णवम् ॥ १११

दूरपारमसम्बाधं रक्षोगणनिषेवितम् ।

पश्यन्तो वरुणावासं निषेदुर्हरियूथपाः ॥ ११२

चण्डनक्रग्रहं घोरं क्षपादौ दिवसक्षये ।

हसन्तमिव फेनौघैर्नृत्यन्तमिव चोर्मिभिः ॥ ११३

चन्द्रोदयसमुद्भूतं प्रतिचन्द्रसमाकुलम् ॥

११४

चण्डानिलमहाग्राहैः कीर्णं तिमितिमिङ्गिलैः ।

दीप्तभोगैरिवाकीर्णं भुजङ्गैर्भुजगालयम् ॥ ११५

अवगाढं महासत्त्वैर्नानाशैलसमाकुलम् ।

सुदुर्गं दुर्गमार्गं तमगाधमसुरालयम् ॥ ११६

मकरैर्नागभोगैश्च विगाढा वातलोलिताः ।

उत्पेतुश्च निपेतुश्च प्रवृद्धा जलराशयः ॥ ११७

अमिचूर्णमिवाविद्धं भास्वराम्बु महोरगम् ।

सुरारिविषयं घोरं पातालविषयं सदा ॥ ११८

सागरं चाम्बरप्रख्यमम्बरं सांगरोपमम् ।

सागरं चाम्बरं चेति विविशेषमदृश्यत ॥ ११९

संपृक्तं नभसा ह्यम्भः संपृक्तं च नभोऽम्भसा ।

तुल्यरूपे स्म दृश्येते तारारत्नसमाकुले ॥ १२०

समुत्पतितमेघस्य वीचिमालाकुलस्य च ।

विशेषो न द्वयोरासीत् सागरस्याम्बरस्य च ॥ १२१

अन्योन्यैराहताः सक्ताः सस्वरं भीमविक्रमैः ।

ऊर्मयः सिन्धुराजस्य महाभेर्य इवाहवे ॥ १२२

रत्नौषजलसन्नादं विषक्तमिव वायुना ।

उत्पतन्तमिव क्रुद्धं यादोगणसमाकुलम् ॥ १२३

ददृशुस्ते महात्मानो वाताहतजलाशयम् ।

अनिलोद्घूतमाकाशे प्रवहन्तमिवोर्मिभिः ॥ १२४

ततो विस्मयमापन्ना ददृशुर्हरयः स्थिताः ।

भ्रान्तोर्मिजलसन्नादं प्रलोलमिव सागरम् ॥ १२५

इति चतुर्थः सर्गः ॥



पञ्चमः सर्गः ॥

सा तु नीलेन विधिवत् स्वारक्षा सुसमाहिता ।

सागरस्योत्तरे तीरे साधु सेना निवेशिता ॥ १

मैन्दश्च द्विविदश्चोभौ तत्र वानरपुङ्गवौ ।

विचेरतुश्च तां सेनां रक्षार्थं सर्वतो दिशम् ॥ २

निविष्टायां तु सेनायां तीरे नदनदीपतेः ।

पार्श्वस्थं लक्ष्मणं दृष्ट्वा रामो वचनमब्रवीत् ॥ ३

शोकश्च किल कालेन गच्छता ह्यपगच्छति ।

मम चापश्यतः कान्तामहन्यहनि वर्धते ॥ ४

न मे दुःखं प्रिया दूरे न मे दुःखं ह्येतेति च ।

एतदेवानुशोचामि वयोऽस्या ह्यतिवर्तते ॥ ५

वाहि वात यतः कान्ता तां स्पृष्ट्वा मामपि स्पृश ।

त्वयि मे गात्रसंस्पर्शश्चन्द्रे दृष्टिसमागमः ॥ ६

तन्मे दहति गात्राणि विषं पीतमिवाशये ।

हा नाथेति प्रिया सा मां ह्रियमाणा यदब्रवीत् ॥ ७

तद्वियोगेन्धनवता तच्चिन्ताविपुलार्चिषा ।

रालिदिवं शरीरं मे दह्यते मदनाग्निना ॥ ८

अवगाह्यार्णवं स्वप्स्ये सौमित्ते भवता विना ।

कथञ्चित्पञ्चलन्कामः न मां सुप्तं जले दहेत् ॥ ९

बह्वेतत्कामयानस्य शक्यमेतेन जीवितुम् ।

यदहं सा च वामोरुरेकां धरणिमश्रितौ ॥ १०

केदारस्येव केदारः सोदकस्य निरूदकः ।

उपस्नेहेन जीवामि जीवन्तीं यच्छृणोमि ताम् ॥ ११

हारोऽपि नार्पितः कण्ठे स्पर्शसंरोधभीरुणा ।

भुजयोरन्तरे ज्ञाताः पर्वताः सरितो द्रुमाः ॥ १२

कदा नु खलु सुश्रोणीं शतपत्रायतेक्षणाम् ।

विजित्य शत्रून् द्रक्ष्यामि सीतां स्फीतामिव श्रियम् ॥

कदा नु चारुबिम्बोष्ठं तस्याः पद्ममिवाननम् ।

ईषदुन्नम्य पास्यामि रसायनमिवातुरः ॥ १४

तौ तस्याः सदृशौ पीनौ स्तनौ तालफलोपमौ ।

कदा नु खलु सोत्कम्पौ हसन्त्या मां भजिष्यतः ॥ १५

सा नूनमसितापाङ्गी रक्षोमध्यगता सती ।

मन्नाथा नाथहीनेव त्रातारं नाधिगच्छति ॥ १६

कथं जनकराजस्य दुहिता परमप्रिया ।

राक्षसीमध्यागा शेते स्नुषा दशरथस्य च ॥ १७

कदा विक्षोभ्य रक्षांसि सा विधूयोत्पतिष्यति !

विधूय जलदान्नीलान् शशिलेखा शरत्स्वव ॥ १८

स्वभावतनुका नूनं शोकेनानशनेन च ।

भूयस्तनुतरा सीता देशकालविपर्ययात् ॥ १९

कदा नु राक्षसेन्द्रस्य निधायोरसि सायकान् ।

सीतां प्रत्याहरिष्यामि शोकमुत्सृज्य मानसम् ॥ २०

कदा नु खलु मां साध्वी सीता सुरसुतोपमा ।

सोत्कण्ठा कण्ठमालम्ब्य मोक्षयत्यानन्दजं पयः ॥ २१

कदा शोकमिमं घोरं मैथिलीविप्रयोगजम् ।

सहसा विप्रमोक्षयामि वासः शुक्लेतरं यथा ॥ २२

एवं विलपतस्तस्य तत्र रामस्य धीमतः ।

दिनक्षयान्मन्दवपुर्भास्करोऽस्तमुपागमत् ॥ २३

आश्वासितो लक्ष्मणेन रामः सन्ध्यामुपाविशत् ।

स्मरन्कमलपत्रक्षीं सीतां शोकाकुलीकृतः ॥ २४

इति पञ्चमः सर्गः ॥



षष्ठः सर्गः ॥

लङ्कायां तु कृतं कर्म घोरं दृष्ट्वा भयावहम् ।

राक्षसेन्द्रो हनुमता शक्रेणैव महात्मना ॥ १

अब्रवीद्राक्षसान्सर्वान् हिया किञ्चिदवाङ्मुखः ।

धर्षिता च प्रविष्टा च लङ्का दुष्प्रसहा पुरी ।

तेन वानरमात्रेण दृष्टा सीता च जानकी ॥ २

प्रासादो धर्षितश्चैत्यः प्रवरा राक्षसा हताः ।

आकुला च पुरी लङ्का सर्वा हनुमता कृता ॥ ३

किं करिष्यामि भद्रं वः किं वा युक्तमनन्तरम् ।
उच्यतां नः समर्थं यत् कृतं च सुकृतं भवेत् ॥ ४

मन्त्रमूलं हि विजयं प्राहुरार्या मनस्विनः ।
तस्माद्वै रोचये मन्त्रं रामं प्रति महाबलाः ॥ ५

त्रिविधाः पुरुषा लोके उत्तमाधममध्यमाः ।
तेषां तु समवेतानां गुणदोषं वदाम्यहम् ॥ ६

मन्त्रिभिर्हितसंयुक्तैः समर्थैर्मन्त्रनिर्णये ।
मितैर्वापि समानार्थैर्बान्धवैर्वा समाहितैः ॥ ७

सहितो मन्त्रयित्वा यः कर्मारम्भान्प्रवर्तयेत् ।
दैवे च कुरुते यत्नं तमाहुः पुरुषोत्तमम् ॥ ८

एकोऽर्थं विमृशेदेको धर्मं प्रकुरुते मनः ।
एकः कार्याणि कुरुते तमाहुर्मध्यमं नरम् ॥ ९

गुणदोषावनिश्चित्य त्यक्त्वा दैवव्यपाश्रयम् ।
करिष्यामीति यः कार्यमुपेक्षेत्स नराधमः ॥ १०

यथेमे पुरुषा नित्यमुत्तमाधममध्यमाः ।
एवं मन्त्राश्च विज्ञेया उत्तमाधममध्यमाः ॥ ११

ऐकमत्यमुपागम्य शास्त्रदृष्टेन चक्षुषा ।

मन्त्रिणो यत्र निरतास्तमाहुर्मन्त्रमुत्तमम् ॥ १२

बह्व्योऽपि मतयो गत्वा मन्त्रिणामर्थनिर्णये ।

पुनर्यत्नैकतां प्राप्ताः स मन्त्रो मध्यमः स्मृतः ॥ १३

अन्योन्यं मतिमास्थाय यत्र संप्रतिभाष्यते ।

न चैकमत्ये श्रेयोऽस्ति मन्त्रः सोऽधम उच्यते ॥ १४

तस्मात्सुमन्त्रितं साधु भवन्तो मतिसत्तमाः ।

कार्यं संप्रतिपद्यन्तामेतत्कृत्यतरं मम ॥ १५

वानराणां हि वीराणां सहस्रैः परिवारितः ।

रामोऽभ्येति पुरीं लङ्कामस्माकमुपरोधकः ॥ १६

तरिष्यति च सुव्यक्तं राघवः सागरं सुखम् ।

तरसा युक्तरूपेण सानुजः सबलानुगः ॥ १७

समुद्रमुच्छोषयति वीर्येणान्यत्करोति वा ॥ १८

तस्मिन्नेवङ्गते कार्ये विरुद्धे वानरैः सह ।

हितं पुरे च सैन्ये च सर्वं समन्वयतां मम ॥ १९

इति षष्ठः सर्गः ॥



सप्तमः सर्गः ॥

इत्युक्ता राक्षसेन्द्रेण राक्षसास्ते महाबलाः ।

ऊचुः प्राञ्जलयः सर्वे रावणं राक्षसेश्वरम् ॥ १

द्विषत्पक्षमविज्ञाय नीतिबाह्यास्त्वबुद्धयः ।

अविज्ञाय स्वपक्षं च राजानं भीषयन्ति हि ॥ २

राजन् परिघशक्त्यृष्टिशूलपट्टिससंकुलम् ।

सुमहन्नो बलं कस्माद्विषादं भजते भवान् ॥

त्वया भोगवर्ती गत्वा निर्जिताः पन्नगा युधि ॥ ३

कैलासशिखरावासी यक्षैर्बहुभिरावृतः ।

सुमहत्कदनं कृत्वा वश्यस्ते धनदः कृतः ॥ ४

स महेश्वरसख्येन श्लाघमानस्त्वया विभो ।

निर्जितः समरे रोषाल्लोकपालो महाबलः ॥ ५

विनिपात्य च यक्षौघं न्विक्षोभ्य विनिगृह्य च ।

त्वया कैलासशिखराद्विमानमिदमाहृतम् ॥ ६

मयेन दानवेन्द्रेण त्वद्भ्यात्सख्यमिच्छता ।

दुहिता तव भार्यार्थे दत्ता राक्षसपुङ्गव ॥ ७

दानवेन्द्रो मधुर्नाम वीर्योत्सिक्तो दुरासदः ।

विगृह्य वशमानीतः कुम्भीनस्याः सुखावहः ॥ ८

निर्जितास्ते महाबाहो नागा गत्वा रसातलम् ।

वासुकिस्तक्षकः शङ्खो जटी च वशमाहताः ॥ ९

अक्षया बलवन्तश्च शूरा लब्धवराः पुनः ।

त्वया संवत्सरं युद्ध्वा समरे दानवा विभो ॥ १०

स्वबलं समुपाश्रित्य नीता वशमरिन्दम ।

मायाश्चाधिगतास्तत्र बहवो राक्षसाधिप ॥ ११

शूराश्च बलवन्तश्च वरुणस्य सुता रणे ।

निर्जितास्ते महाराज चतुर्विधबलानुगाः ॥ १२

मृत्युदण्डमहाग्राहं शाल्मलिद्रुममण्डितम् ।

कालपाशमहावीचिं यमकिङ्करपन्नगम् ॥ १३

अवगाह्य त्वया राजन् यमस्य बलसागरम् ।

जयश्च विपुलः प्राप्तो मृत्युश्च प्रतिषेधितः ॥ १४

सुयुद्धेन च ते सर्वे लोकास्तत्र सुतोषिताः ॥

१५

क्षत्रियैर्बहुभिर्वीरैः शक्रतुल्यपराक्रमैः ।

आसीद्वसुमती पूर्णा महद्भिरिव पादपैः ॥ १६

तेषां वीर्यगुणोत्साहैर्न समो राघवो रणे ।
प्रसह्य ते त्वया राजन् हताः परमदुर्जयाः ॥ १७

तिष्ठतु त्वं महाराज निदेशात्तव वानरान् !
अयमेको महाबाहुरिन्द्रजित्क्षपयिष्यति ॥ १८

अनेन हि महाराज माहेश्वरमनुत्तमम् ।
इष्ट्वा दशं वरो लब्धो लोके परमदुर्लभः ॥ १९

शक्तितोमरमीनं च विनिकीर्णान्त्रिशैवलम् ।
गजकच्छपसंबाधमश्वमण्डूकसंकुलम् ॥ २०

रुद्रादित्यमहाग्राहं मरुद्वसुमहोरगम् ।
रथाश्वगजतोयौघं पदातिपुलिनं महत् ॥ २१

अनेन हि समासाद्य देवानां बलसागरम् ।
गृहीतो देवराजश्च लङ्कां चापि प्रवेशितः ॥ २२

पितामहनियोगाच्च मुक्तः शम्बरवृत्रहा ।
गतस्त्रिविष्टपं राजन् सर्वदेवनमस्कृतः ॥ २३

तमेव त्वं महाराज विसृजेन्द्रजितं सुतम् ।
यावद्बानरसेनां तां सरामां नयति क्षयम् ॥ २४

राजन्नापदयुक्तेयमागता प्राकृताज्जनात् ।

हृदि नैव त्वया कार्या त्वं वधिष्यसि राघवम् ॥ २५

इति सप्तमः सर्गः ॥



अष्टमः सर्गः ॥

ततो नीलाम्बुदनिभः प्रहस्तो नाम राक्षसः ।

अब्रवीत्प्राञ्जलिर्वाक्यं शूरः सेनापतिस्तदा ॥ १

देवदानवगन्धर्वाः पिशाचपतगोरगाः ।

न त्वां धर्षयितुं शक्ताः किं पुनर्वानरा रणे ॥ २

सर्वे प्रमत्ता विश्वस्ता वञ्चिताः स्म हनूमता ।

न हि मे जीवतो गच्छेज्जीवन्स वनगोचरः ॥ ३

सर्वा सागरपर्यन्तां सशैलवनकाननाम् ।

करोम्यवानरां भूमिमाज्ञापयतु मां भवान् ॥ ४

रक्षां चैव विधास्यामि वानराद्रजनीचर ।

नागमिष्यति ते दुःखं किञ्चिदात्मापराधजम् ॥ ५

अब्रवीत्तु सुसंकुद्धो दुर्मुखो नाम राक्षसः ।
इदं न क्षमणीयं हि सर्वेषां नः प्रधर्षणम् ॥ ६

अयं परिभवो भूयः पुरस्यान्तःपुरस्य च ।
श्रीमतो राक्षसेन्द्रस्य वानरेण प्रधर्षणम् ॥ ७

अस्मिन्मुहूर्ते हत्वैको निवर्तिष्यामि वानरान् ।
प्रविष्टान्सागरं भीममम्बरं वा रसातलम् ॥ ८

ततोऽब्रवीत्सुसंकुद्धो वज्रदंष्ट्रो महाबलः ।
प्रगृह्य परिधं घोरं मांसशोणितरूषितम् ॥ ९

किं वो हनुमता कार्यं कृपणेन तपस्विना ।
रामे तिष्ठति दुर्धर्षे सुग्रीवे सहलक्ष्मणे ॥ १०

अद्य रामं ससुग्रीवं परिधेण सलक्ष्मणम् ।
आगमिष्यामि हत्वैको विक्षोभ्य हरिवाहिनीम् ॥ ११

इदं ममापरं वाक्यं शृणु राजन्यदीच्छसि ।
उपायकुशलो ह्येव जयेच्छत्रुनतन्द्रितः ॥ १२

कामरूपधराः शूराः सुभीमा भीमविक्रमाः ।
राक्षसानां सदृशाणि राक्षसाधिप निश्चिताः ॥ १३

काकुत्स्थमुपसङ्गम्य बिभ्रतो मानुषं वपुः ।

सर्वे ह्यसंभ्रमा भूत्वा ब्रुवन्तु रघुसत्तमम् ॥

१४

प्रेषिता भरतेन सा तव भ्रात्रा यवीयसा ।

स हि सेनां समुत्थाप्य क्षिप्रमेवोपयाम्यति ॥

१५

ततो वयमितस्तूर्णे शूलशक्तिगदाधराः ।

चापबाणासिहस्ताश्च त्वरितास्तव यामहे ॥

१६

आकाशे गणशः स्थित्वा हत्वा तां हरिवाहिनीम् ।

अश्मवर्षमहावृष्ट्या प्रापयाम यमक्षयम् ॥

१७

एवं चेदुपसर्पेतामनयं रामलक्ष्मणौ ।

अवश्यमपनीतेन जहतामेव जीवितम् ॥

१८

कौम्भकर्णिस्ततो वीरो निकुम्भो नाम वीर्यवान् ।

अब्रवीत्परमक्रुद्धो रावणं लोकरावणम् ॥

१९

सर्वे भवन्तस्तिष्ठन्तु महाराजेन सङ्गताः ।

अहमेको हनिष्यामि राघवं सहलक्ष्मणम् ॥

सुग्रीवं सहनूमन्तं सर्वानेव च वानरान् ॥

२०

ततो वज्रहनुर्नाम राक्षसः पर्वतोपमः ।

क्रुद्धः परिलिहन्वक्तुं जिह्वया वाक्यमब्रवीत् ॥

२१

स्वैरं कुर्वन्तु कार्याणि भवन्तो विगतज्वराः ।

एकोऽहं भक्षयिष्यामि तां सर्वां हरिवाहिनीम् ॥ २२

स्वस्थाः क्रीडन्तु निश्चिन्ताः पिबन्तो मधुवारुणीम् ॥

अहमेको हनिष्यामि सुग्रीवं सहलक्ष्मणम् ।

साङ्गदं सहनूमन्तं रामं च रणकुञ्जरम् ॥ २४

इति अष्टमः सर्गः ॥



नवमः सर्गः ॥

ततो निकुम्भकुम्भौ च सूर्यशत्रुर्महाबलः ।

सुसप्तो यज्ञकोपश्च महापार्श्वो महोदरः ॥ १

अग्निकेतुश्च दुर्धर्षो रश्मिकेतुश्च वीर्यवान् ।

इन्द्रजिच्च महातेजा बलवत्त्रावणात्मजः ॥ २

प्रहस्तोऽथ विरूपाक्षो वज्रदंष्ट्रो महाबलः ।

धूम्राक्षः सिंहकेतुश्च दुर्मुखश्चैव राक्षसः ॥ ३

परिधान्यदृमान्प्रासान् शक्तिशूलपरश्वधान् ।

चापानि च सबाणानि खड्गांश्च विपुलाञ्जितान् ॥ ४

प्रगृह्य परमक्रुद्धाः समुत्पत्य च राक्षसाः ।

अब्रुवन्रावणं सर्वे प्रदीप्ता इव तेजसा ॥

५

अद्य रामं वधिष्यामः सुग्रीवं च सलक्ष्मणम् ।

कृपणं च हनूमन्तं लङ्का येन प्रधर्षिता ॥

६

तान्गृहीतायुधान्सर्वान् वारयित्वा विभीषणः ।

अब्रवीत्प्राञ्जलिर्वाक्यं पुनः प्रत्युपवेश्य तान् ॥

७

अप्युपायैस्त्रिभिस्तात योऽर्थः प्राप्तुं न शक्यते ।

तस्य विक्रमकालांस्तान् युक्तानाहुर्मनीषिणः ॥

८

प्रमत्तेष्वभियुक्तेषु दैवेन प्रहृतेषु च ।

विक्रमास्तात सिध्यन्ति परीक्ष्य विधिना कृताः ॥

९

अप्रमत्तं कथं तं तु विजिगीषुं बले स्थितम् ।

जितरोषं दुराधर्षं प्रधर्षयितुमिच्छथ ॥

१०

समुद्रं लङ्घयित्वा तु घोरं नदनदीपतिम् ।

कृतं हनुमता कर्म दुष्करं तर्कयेत वा ॥

११

बलान्यपरिमेयानि वीर्याणि च निशाचराः ।

परेषां सहसाऽवज्ञा न कर्तव्या कथञ्चन ॥

१२

किं च राक्षसराजस्य रामेणापकृतं पुरा ।
आजहार जनस्थानाद्यस्य भार्या यशस्विनीम् ॥ १३

खरो यद्यतिवृत्तस्तु रामेण निहतो रणे ।
अवश्यं प्राणिनां प्राणा रक्षितव्या यथाबलम् ॥ १४

अयशस्यमनायुष्यं परदाराभिमर्शनम् ।
अर्थक्षयकरं घोरं पापस्य च पुनर्भवम् ॥ १५

एतन्निमित्तं वैदेह्या भयं नः सुमहद्भवेत् ।
आहता सा परित्याज्या कलहार्थे कृतेन किम् ॥ १६

न नः क्षमं वीर्यवता तेन धर्मानुवर्तिना ।
वैरं निरर्थकं कर्तुं दीयतामस्य मैथिली ॥ १७

यावन्न सगजां साश्वां बहुरत्नसमाकुलाम् ।
पुरीं दारयते बाणैर्दीयतामस्य मैथिली ॥ १८

यावत्सुधोरा महती दुर्धर्षा हरिवाहिनी ।
नावस्कन्दति नो लङ्कां तावत्सीता प्रदीयताम् ॥ १९

विनश्येद्धि पुरी लङ्का शूराः सर्वे च राक्षसाः ।
रामस्य दयिता पत्नी स्वयं यदि न दीयते ॥ २०

प्रसादये त्वां बन्धुत्वात् कुरुष्व वचनं मम ।

हितं तथ्यं त्वहं ब्रूमि दीयतामस्य मैथिली ॥ २१

पुरा शरत्सूर्यमरीचिसन्निभान्

नवाग्रपुङ्खान्सुदृढान्तृपात्मजः ।

सृजत्यमोघान्विशिखान्वधाय ते

प्रदीयतां दाशरथाय मैथिली ॥ २२

त्यजस्व कोपं कुलधर्मनाशनं

भजस्व धर्मं रतिकीर्तिवर्धनम् ।

प्रसीद जीवेम सपुत्रबान्धवाः

प्रदीयतां दाशरथाय मैथिली ॥ २३

विभीषणवचः श्रुत्वा रावणो राक्षसेश्वरः ।

विसर्जयित्वा तान्सर्वान् प्रविवेश स्वकं गृहम् ॥ २४

इति नवमः सर्गः ॥



दशमः सर्गः ॥

ततः प्रत्युषसि प्राप्ते प्राप्तधर्मार्थनिश्चयः ।

राक्षसाधिपतेर्वैश्व भीमकर्मा विभीषणः ॥ १

- शैलाभ्रचयसङ्काशं शैलशृङ्गमिवोन्नतम् ।
सुविभक्तमहाकक्ष्यं महाजनपरिग्रहम् ॥ २
- मतिमद्भिर्महामातैरनुरक्तैरधिष्ठितम् ।
राक्षसैश्चाप्तपर्याप्तैः सर्वतः परिरक्षितम् ॥ ३
- मत्तमातङ्गनिःश्वासैर्व्याकुलीकृतमारुतम् ।
शङ्खघोषमहाघोषं तूर्यसन्नादनादितम् ॥ ४
- प्रमदाजनसंबाधं प्रजल्पितमहापथम् ।
तप्तकाञ्चननिर्यूहं भूषणोत्तमभूषितम् ॥ ५
- गन्धर्वाणामिवावासमालयं मरुतामिव ।
रत्नसञ्चयसंबाधं भवनं भोगिनामिव ॥ ६
- तं महाभ्रमिवादित्यस्तेजोविस्तृतरश्मिमान् ।
अग्रजस्यालयं वीरः प्रविवेश महाद्युतिः ॥ ७
- पुण्यान्पुण्याहघोषांश्च वेदविद्भिर्रुदाहृतान् ।
शुश्राव सुमहातेजा भ्रातुर्विजयसंश्रितान् ॥ ८
- पूजितान्दधिपालैश्च सर्पिर्मिः सुमनोक्षतैः ।
मन्त्रवेदविदो विप्रान् ददर्श सुमहाबलः ॥ ९

संपूज्यमानो रक्षोभिर्दोष्यमानः स्वतेजसा ।
आसनस्थं महाबाहुर्वन्दे धनदानुजम् ॥ १०

स राजदृष्टिसम्पन्नमासनं हेमभूषितम् ।
जगाम समुदाचारं प्रयुज्याचारकोविदः ॥ ११

स रावणं महात्मानं विजने मन्त्रिसन्निधौ ।
उवाच हितमत्यर्थं वचनं हेतुनिश्चितम् ॥ १२

प्रसाद्य भ्रातरं ज्येष्ठं सान्त्वेनोपस्थितक्रमः ।
देशकालार्थसंवादी दृष्टलोकपरावरः ॥ १३

यदा प्रभृति वैदेही संप्राप्तेह परन्तप ।
तदा प्रभृति दृश्यन्ते निमित्तान्यशुभानि नः ॥ १४

सस्फुलिङ्गः सधूमार्चिः सधूमकलुषोदयः ।
मन्त्रसंधुक्षितोऽप्यग्निर्न सम्यगभिवर्धते ॥ १५

अग्निष्ठेष्वग्निशालासु तथा ब्रह्मस्थलीषु च ।
सरीसृपाणि दृश्यन्ते हव्येषु च पिपीलिकाः ॥ १६

गवां पयांसि स्कन्नानि विमदा वीरकुञ्जराः ।
दीनमश्वाः प्रहेषन्ते न च ग्रासाभिनन्दिनः ॥ १७

खरोष्ठाश्चतरा राजन् भिन्नरोमाः स्रवन्ति नः ।
न स्वभावे च तिष्ठन्ते विधानैरपि चिन्तिताः ॥ १८

वायसाः सङ्घशः क्रूरा व्याहरन्ति समन्ततः ।
समवेताश्च दृश्यन्ते विमानाग्रेषु सङ्घशः ॥ १९

गृध्राश्च परिलीयन्ते पुरीमुपरि पिण्डिताः ।
उपपन्नाश्च सन्ध्ये द्वे व्याहरन्त्यशिवं शिवाः ॥ २०

क्रव्यादानां मृगाणां च पुरद्वारेषु सङ्घशः ।
श्रूयन्ते विपुला घोषाः सविष्फूर्जितनिःस्वनाः ॥ २१

तदेवं प्रस्तुते कार्ये प्रायश्चित्तमिदं क्षमम् ।
रोचते यदि वैदेही राघवाय प्रदीयताम् ॥ २२

इदं च यदि वा मोहाल्लोभाद्वा व्याहतं मया ।
तत्रापि च महाराज न दोषं कर्तुमर्हसि ॥ २३

अयं हि दोषः सर्वस्य जनस्यास्योपलक्ष्यते ।
रक्षसां राक्षसीनां च पुरस्यान्तःपुरस्य च ॥ २४

प्रापणे चास्य मन्त्रस्य निवृत्ताः सर्वमन्त्रिणः ।
अवश्यं च मया वाच्यं यद्दृष्टमपि वा श्रुतम् ॥
सम्प्रधार्य यथान्यायं तद्भवान् कर्तुमर्हति ॥ २५

इति स्म मन्त्रिणां मध्ये आता आतरमूचिवान् ।

रावणं रक्षसां श्रेष्ठं पथ्यमेतद्विभीषणः ॥

२६

हितं महार्थं मृदु हेतुसंहितं

व्यतीतकालायतिसम्प्रतिक्षमम् ।

निशम्य तद्वाक्यमुपस्थितज्वरः

प्रसङ्गवानुत्तरमेतदब्रवीत् ॥

२७

भयं न पश्यामि कुतश्चिदप्यहं

न राघवः प्राप्स्यति जातु मैथिलीम् ।

सुरैः सहेन्द्रैरपि सङ्गतः कथं

ममाग्रतः स्थास्यति तक्षणाग्रजः ॥

२८

इतीदमुक्त्वा सुरसैन्यनाशनो

महाबलः संयति चण्डविक्रमः ।

दशाननो भ्रातरमाप्तवादिनं

विराजयामास तदा विभीषणम् ॥

२९

इति दशमः सर्गः ॥



एकादशः सर्गः ॥

- स बभूव कृशो राजा मैथिलीकाममोहितः ।
असंमानाच्च सुहृदां पापः पापेन कर्मणा ॥ १
- अतीतसमये काले तस्मिन् वै युधि रावणः ।
अमात्यैश्च सुहृद्भिश्च प्राप्तकालममन्यत ॥ २
- स हेमजालविततं मणिविद्रुमभूषितम् ।
उपगम्य विनीताश्वमारुरोह महारथम् ॥ ३
- तमास्थाय रथश्रेष्ठं महामेघसमस्वनम् ।
प्रययौ राक्षसश्रेष्ठो दशग्रीवः समां प्रति ॥ ४
- असिचर्मधरा योधाः सर्वायुधधरास्ततः ।
राक्षसा राक्षसेन्द्रस्य पुरस्तात्संप्रतस्थिरे ॥ ५
- नानाविकृतवेषाश्च नानाभूषणभूषिताः ।
पार्श्वतः पृष्ठतश्चैनं परिवार्य ययुस्तदा ॥ ६
- रथैश्चातिरथाः शीघ्रं मत्तैश्च वरवारणैः ।
अनुत्पेतुर्दशग्रीवमाक्रीडद्भिश्च वाजिभिः ॥ ७

गदापरिबहस्ताश्च शक्तितोमरपाणयः ।

परश्वधधराश्चान्ये तथान्ये शूलपाणयः ॥

८

ततस्तूर्यसहस्राणां सञ्जज्ञे निस्वनो महान् ।

तुमुलः शङ्खशब्दश्च समां गच्छति रावणे ॥

९

स नेमिघोषेण महान् सहस्रमिविनादयन् ।

राजमार्गं श्रिया जुष्टं प्रतिपेदे महारथः ॥

१०

विमलं चातपत्राणं प्रगृहीतमशोभत ।

पाण्डरं राक्षसेन्द्रस्य पूर्णस्ताराधिपो यथा ॥

११

हेममञ्जरिगर्भे च शुद्धस्फटिकविग्रहे ।

चामरव्यजने चास्य रेजतुः सव्यदक्षिणे ॥

१२

ते कृताञ्जलयः सर्वे रथस्थं पृथिवीस्थिताः ।

राक्षसा राक्षसश्रेष्ठं शिरोभिस्तं ववन्दिरे ॥

१३

राक्षसैः स्तूयमानस्तु जयाशीर्भिररिन्दमः ।

आससाद महातेजाः समां विरचितां शुभाम् ॥

१४

सुवर्णरजतासीर्णा विशुद्धस्फटिकान्तराम् ।

विराजमानो वपुषा रुक्मपट्टोत्तरच्छदाम् ॥

१५

तां पिशाचशतैः षड्भिरभिगुप्तां सदा शुभाम् ।
प्रविवेश महातेजाः सुकृतां विश्वकर्मणा ॥ १६

तस्यां स वैदूर्यमयं प्रियकाजिनसंवृतम् ।
महत्सोपाश्रयं भेजे रावणः परमासनम् ॥ १७

ततः शशासेश्वरवद्दूताँल्लघुपराक्रमान् ।
समानयत मे क्षिप्रमिहैतान् राक्षसानिति ॥ १८

कृत्यमस्ति महज्जातं समर्थमिह नो महत् ।
राक्षसास्तद्वचः श्रुत्वा लङ्कायां परिचक्रमुः ॥ १९

अनुगेहमवस्थाय विहारशयनेषु च ।
उद्यानेषु च रक्षांसि चोदयन्तो ह्यभीतवत् ॥ २०

ते रथान् रुचिरानेके दृप्तानेके पृथग्धयान् ।
नागानेकेऽधिरुरुहुर्जमुश्चैके पदातयः ॥ २१

सा पुरी परमाकीर्णा रथकुञ्जरवाजिभिः ।
सम्पतद्भूमिर्विरुचे गरुत्मद्भिरिवाम्बरम् ॥ २२

ते वाहनान्यवस्थाप्य यानानि विविधानि च ।
सभां पद्भिः प्रविविशुः सिंहा गिगिगुहामिव ॥ २३

राज्ञः पादौ गृहीत्वा तु राज्ञा ते प्रतिपूजिताः ।
पीठेष्वन्ये वृसीष्वन्ये भूमौ केचिदुपाविशन् ॥ २४

ते समेत्य सभायां वै राक्षसा राजशासनात् ।
यथार्हमुपतस्थुस्ते रावणं राक्षसाधिपम् ॥ २५

मन्त्रिणश्च यथामुख्या निश्चितार्थेषु पण्डिताः ।
अमात्याश्च गुणोपेताः सर्वज्ञा बुद्धिदर्शनाः ॥ २६

समेयुस्तत्र शतशः शूराश्च बहवस्तदा ॥ २७

सभायां हेमवर्णायां सर्वार्थस्य सुखाय वै ।
रम्यायां राक्षसेन्द्रस्य समेयुस्तत्र सङ्घशः ॥ २८

ततो महात्मा विपुलं सुयुग्यं
वरं रथं हेमविचित्रिताङ्गम् ।
शुभं समास्थाय ययौ तरस्वी
विभीषणः संसदमग्रजस्य ॥ २९

स पूर्वजायावरजः शशंस
नामाथ पश्चाच्चरणौ ववन्दे ।
शुकः प्रहस्तश्च तथैव तेभ्यो
ददौ यथार्हं पृथगासनानि ॥ ३०

सुवर्णनानामणिभूषणानां

सुवाससां संसदि राक्षसानाम् ।

तेषां परार्ध्यागरुचन्दनानां

स्रजश्च गन्धाः प्रववुः समन्तात् ॥

३१

न चुक्रुशुर्नानृतमाह कश्चित्

सभासदो नैव जजरुपुरुच्चैः ।

संसिद्धार्थाः सर्व एवोग्रवीर्याः

भर्तुः सर्वे ददृशुश्चाननं ते ॥

३२

स रावणः शस्त्रभृतां मनस्विनां

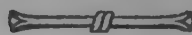
महाबलानां समितौ मनस्वी ।

तस्यां सभायां प्रभया चकाशे

मध्ये वसूनामिव वज्रहस्तः ॥

३३

इति एकादशः सर्गः ॥



द्वादशः सर्गः ॥

स तां परिषदं कृत्वा समीक्ष्य समितिञ्जयः ।

प्रचोदयामास तदा प्रहस्तं बाहिनीपतिम् ॥

१

सेनापते यथा ते स्युः कृतविद्याश्चतुर्विधाः ।

योधा नगररक्षायां तथा व्यादेष्टुमर्हसि ॥ २

स प्रहस्तः प्रणीतात्मा चिकीर्षन् राजशासनम् ।

विनिक्षिप्य बलं सर्वं बहिरन्तश्च मन्दिरे ॥ ३

ततो विनिक्षिप्य बलं पृथङ् नगरगुप्तये ।

प्रहस्तः प्रमुखे राज्ञो निषसाद जगाद च ॥ ४

निहितं बहिरन्तश्च बलं बलवतस्तव ।

कुरुष्वविमनाः क्षिप्रं यदभिप्रेतमस्ति ते ॥ ५

प्रहस्तवचनं श्रुत्वा राजा राज्यहिते रतः ।

सुखेप्सुः सुहृदां मध्ये व्याजहार स रावणः ॥ ६

प्रियाप्रिये सुखे दुःखे लाभालाभे हिताहिते ।

धर्मकामार्थकृच्छ्रेषु यूयमर्हथ वेदितुम् ॥ ७

सर्वकृत्यानि युष्माभिः समारब्धानि सर्वदा ।

मन्त्रकर्मनियुक्तानि न जातु विफलानि मे ॥ ८

स सोमग्रहनक्षत्रैर्मरुद्भिरिव वासवः ।

भवद्भिरहमत्यर्थं वृतः श्रियमवाप्नुयाम् ॥ ९

अहं तु खलु सर्वान् वः समर्थयितुमुद्यतः ।
कुम्भकर्णस्य तु स्वप्नान्नेममर्थमचोदयम् ॥ १०

अयं हि सुतः षण्मासान् कुम्भकर्णो महाबलः ।
सर्वशस्त्रभृतां मुख्यः स इदानीमुपस्थितः ॥ ११

इयं च दण्डकारण्याद्रामस्य महिषी प्रिया ।
रक्षोभिश्चरितोद्देशादानीता जनकात्मजा ॥ १२

सा मे न शय्यामारोढुमिच्छत्यलसगामिनी ।
त्रिषु लोकेषु चान्या मे न सीतासदृशी मता ॥ १३

तनुमध्या पृथुश्रोणी शारदेन्दुनिभानना ।
हेमबिम्बनिभा सौम्या मायेव मयनिर्मिता ॥ १४

सुलोहिततलौ श्लक्ष्णौ चरणौ सुप्रतिष्ठितौ ।
दृष्ट्वा ताम्रनखौ तस्या दीप्यते मे शरीरजः ॥ १५

हुताशनार्चिसङ्काशमेनां सौरीमिव प्रभाम् ।
दृष्ट्वा सीतां विशालार्क्षीं कामस्य वशमेयिवान् ॥ १६

उन्नसं विमलं वल्गु वदनं चारुलोचनम् ।
पश्यंस्तदा वञ्चस्तस्याः कामस्य वशमेयिवान् ॥ १७

क्रोधहर्षसमानेन दुर्वर्णकरणेन च ।

शोकसन्तापनित्येन कामेन कलुषीकृतः ॥ १८

सा तु संवत्सरं कालं मामयाचत भामिनी ।

प्रतीक्षमाणा भर्तारं राममायतलोचना ॥ १९

तन्मया चारुनेत्रायाः प्रतिज्ञातं वचः शुभम् ।

श्रान्तोऽहं सततं कामाद्यातो हय इवाध्वनि ॥ २०

कथं सागरमेक्षोभ्यमुत्तरन्ति वनैकसः ।

बहुसत्त्वसमाकीर्णं तौ वा दशरथात्मजौ ॥ २१

अथवा कपिनैकेन कृतं वः कदनं महत् ।

दुर्ज्ञेयाः कार्यगतयो ब्रूत यस्य यथामति ॥ २२

मानुषान्मे भयं नास्ति तथापि तु विमृश्यताम् ।

पुरा देवासुरे युद्धे युष्माभिः सहितोऽजयम् ।

ते मे भवन्तश्च तथा सुग्रीवप्रमुखान्हरीन् ॥ २३

परे पारे समुद्रस्य पुरस्कृत्य नृपात्मजौ ।

सीतायाः पदवीं वीरौ संप्राप्तौ वरुणालयम् ॥ २४

अदेया च यथा सीता वध्यौ दशरथात्मजौ ।

भवद्भिर्मन्त्र्यतां मन्त्रः सुनीतिश्चाभिधीयताम् ॥ २५

न हि शक्तिं प्रपश्यामि जगत्पुन्यस्य कस्यचित् ।

सागरं वानरैस्तीर्त्वा निश्चयेन जयो मम ॥ २६

तस्य कामपरीतस्य निशम्य परिदेवितम् ।

कुम्भकर्णः प्रचुक्रोध वचनं चेदमब्रवीत् ॥ २७

यदा तु रामस्य सलक्ष्मणस्य

प्रसह्य सीता खलु सा इहाहता ।

सकृत्समीक्ष्यैव सुनिश्चितं तदा

भजेत चित्तं यमुनेव यामुनम् ॥ २८

सर्वमेतन्महाराज कृतमप्रतिमं तव ।

विधीयेत सहासाभिरादावेवास्य कर्मणः ॥ २९

न्यायेन राजा कार्याणि यः करोति दशानन ।

न स सन्तप्यते पश्चान्निश्चितार्थमतिर्नृपः ॥ ३०

अनुपायेन कर्माणि विपरीतानि यानि च ।

क्रियमाणानि दुष्यन्ति हवीष्यप्रयतेष्विव ॥ ३१

यः पश्चात्पूर्वकार्याणि कर्माण्यभिचिकीर्षति ।

पूर्वं चापरकार्याणि न स वेद नयानयौ ॥ ३२

चपलस्य तु कृत्येषु प्रसमीक्ष्याधिकं बलम् ।

छिद्रमन्ये प्रपद्यन्ते कौञ्चस्य खमिव द्विजाः ॥ ३३

त्वयेदं महदारब्धं कार्यमप्रतिचिन्तितम् ।

दिष्ट्या त्वां नावधीद्रामो विषमिश्रमिवामिषम् ॥ ३४

तस्मात्त्वया समारब्धं कर्म ह्यप्रतिमं परैः ।

अहं समीकरिष्यामि हत्वा शत्रूंस्तवानघ ॥ ३५

अहमुत्सादयिष्यामि शत्रूंस्तव विशां पते ॥ ३६

यदि शक्रविवस्वन्तौ यदि पावकमारुतौ ।

तावहं योधयिष्यामि कुबेरवरुणावपि ॥ ३७

गिरिमात्रशरीरस्य गदापरिघयोधिनः ।

नर्दतस्तीक्ष्णदंष्ट्रस्य बिभियाद्वै पुरन्दरः ॥ ३८

पुनर्मां स द्वितीयेन शरेण निहनिष्यति ।

ततोऽहं तस्य पास्यामि रुधिरं काममाश्रस ॥ ३९

वधेन वै दाशरथेः सुखावहं

जयं तवाहर्तुमहं यतिष्ये ।

हत्वा च रामं सह लक्ष्मणेन

खादामि सर्वान्हरियोधमुख्यान् ॥ ४०

रमस्व कामं पिब चाग्र्यवारुणीं

कुरुष्व कार्याणि हितानि विज्वरः ।

मया तु रामे गमिते यमक्षयं

चिराय सीता वशगा भविष्यति ॥

४१

इति द्वादशः सर्गः ॥



त्रयोदशः सर्गः ॥

रावणं क्रुद्धमाज्ञाय महापार्श्वो महाबलः ।

मुहूर्तमनुसञ्चिन्त्य प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥

१

यः खल्वपि वनं प्राप्य मृगव्यालनिषेवितम् ।

न पिबेन्मधु संप्राप्य स नरो बालिशो भवेत् ॥

२

ईश्वरस्येश्वरः कोऽस्ति तव शत्रुनिर्बहण ।

रमस्व सह वैदेह्या शत्रूनाक्रम्य मूर्धसु ॥

३

बलात् कुक्कुटवृत्तेन वर्तस्व सुमहाबल ।

आक्रम्याक्रम्य सीतां वै त्वं भुङ्क्ष्व च रमस्व च ॥

४

लब्धकामस्य यत्पश्चादागमिष्यति ते भयम् ।

प्राप्तमप्राप्तकालं वा सर्वं प्रतिसहिष्यसि ॥

५

कुम्भकर्णः सहासाभिरिन्द्रजिच्च महाबलः ।
प्रतिषेधयितुं शक्तौ सवज्रमपि वज्रिणम् ॥ ६

उपप्रदानं सान्त्वं वा भेदं वा कुशलैः कृतम् ।
समतिक्रम्य दण्डेन सिद्धिमर्थेषु रोचय ॥ ७

इह प्राप्तान् वयं सर्वाञ्शतृन्स्तव महाबल ।
वशे शस्त्रपपातेन करिष्यामो न संशयः ॥ ८

एवमुक्तस्तदा राजा महापार्श्वेन रावणः ।
तस्य संपूजयन् वाक्यमिदं वचनमब्रवीत् ॥ ९

महापार्श्व प्रमुषितं रहस्यं किञ्चिदात्मनः ।
चिरवृत्तं तदाख्यास्ये यदवाप्तं मया पुरा ॥ १०

पितामहस्य भवनं गच्छन्तीं पुञ्जिकस्थलाम् ।
चञ्चूर्यमाणामद्राक्षमाकाशेऽग्निशिखामिव ॥ ११

सा प्रसन्न मया मुक्ता कृता विवसना ततः ।
स्वयंभोर्भवनं प्राप्ता लोलिता नलिनी यथा ॥ १२

तच्च तस्य तदा मन्ये ज्ञातमासीन्महात्मनः ।
अथ संकुपितो देवो मामिदं वाक्यमब्रवीत् ॥ १३

अद्य प्रभृति यामन्यां बलान्नारीं गमिष्यसि ।
तदा ते शतधा मूर्धा भविष्यति न संशयः ॥ १४

इत्यहं तस्य शापस्य भीतः प्रसभमेव ताम् ।
नारोपये बलात्सीतां वैदेहीं शयने स्वके ॥ १५

सागरस्येव मे वेगो मारुतस्येव मे गतिः ।
नैतद्वाशरथिर्वेद ह्यासादयति तेन माम् ॥ १६

को हि सिंहमिवासीनं सुप्तं गिरिगुहाशये ।
क्रुद्धं मृत्युमिवासीनं संबोधयितुमिच्छति ॥ १७

न मत्तो निर्गतान्वाणान् द्विजिह्वानिव पन्नगान् ।
रामः पश्यति संग्रामे तेन मामभिगच्छति ॥ १८

क्षिप्रं वज्रोपमैर्बाणैः शतधा कार्मुकच्युतैः ।
राममादीपयिष्यामि उल्काभिरिव कुञ्जरम् ॥ १९

तद्यास्य बलमादास्ये बलेन महता वृतः ।
उदयन् सविता काले नक्षत्राणां प्रभामिव ॥ २०

न बासवेनापि सहस्रचक्षुषा

युधा न शक्यो वरुणेन वा पुनः ।

मया त्वियं बाहुबलेन निर्जिता
पुरा पुरी वैश्रवणेन पालिता ॥

२१

इति त्रयोदशः सर्गः ॥



चतुर्दशः सर्गः ॥

निशाचरेन्द्रस्य वचो निशम्य
स कुम्भकर्णस्य च गर्जितानि ।
विभीषणो राक्षसराजमुख्य-
मुवाच वाक्यं हितमर्थयुक्तम् ॥

१

वृतो हि बाह्वन्तरभोगराशि-
श्चिन्ताविषः सुस्मिततीक्ष्णदंष्ट्रः ।
पञ्चाङ्गुलीपञ्चशिरोऽतिकायः
सीतामहाहिस्तव केन राजन् ॥

२

यावन्न लङ्कां समभिद्रवन्ति
वलीमुखाः पर्वतकूटमात्राः ।
दंष्ट्रयुधाश्चैव नखायुधाश्च
प्रदीयतां दाशरथाय मैथिली ॥

३

यावन्न गृह्णन्ति शिरांसि बाणाः

रामेरिता राक्षसपुङ्गवानाम् ।

वज्रोपमा वायुसमप्रवेगाः

प्रदीयतां दाशरथाय मैथिली ॥

४

न कुम्भकर्णेन्द्रजितौ न राजा

तथा महापार्श्वमहोदरौ वा ।

निकुम्भकुम्भौ च तथाऽतिकायः

स्थातुं समर्था युधि राघवस्य ॥

५

जीवंस्तु रामस्य न मोक्ष्यसे त्वं

गुप्तः सवित्राप्यथ वा मरुद्भिः ।

न वासवस्याङ्गगतो न मृत्यो-

र्न खं न पातालमनुप्रविष्टः ॥

६

निशम्य वाक्यं तु विभीषणस्य

ततः प्रहस्तो वचनं बभाषे ।

न नो भयं विद्म न दैवतेभ्यो

न दानवेभ्यो ह्यथवा कदाचित् ॥

७

न यक्षगन्धर्वमहोरगेभ्यो

भयं न संख्ये पतगोत्तमेभ्यः ।

कथं नु रामाद्भविता भयं नो
नरेन्द्रपुत्रात् समरे कदाचित् ॥

८

प्रहस्तवाक्यं त्वहितं निशम्य
विभीषणो राजहितानुकाङ्क्षी ।
ततो महात्मा वचनं बभाषे
धर्मार्थिकामेषु निविष्टबुद्धिः ॥

९

प्रहस्त राजा च महोदरश्च
त्वं कुम्भकर्णश्च यथाऽर्थजातम् ।
ब्रवीथ रामं प्रति तन्न शक्यं
यथा गतिः स्वर्गमधर्मबुद्धेः ॥

१०

वधस्तु रामस्य मया त्वया वा
प्रहस्त सर्वैरपि राक्षसैर्वा ।
कथं भवेदर्थविशारदस्य
महार्णवं तर्तुमिवाप्लवस्य ॥

११

धर्मप्रधानस्य महारथस्य
इक्ष्वाकुवंशप्रभवस्य राज्ञः ।
प्रहस्त देवाश्च तथाविधस्य
कृत्तेषु शक्तस्य भवन्ति मूढाः ॥

१२

तीक्ष्णा न तावत्तव कङ्कपत्रा

दुरासदा राघवविप्रमुक्ताः ।

भित्त्वा शरीरं प्रविशन्ति बाणाः

प्रहस्त तेनैव विकत्थते त्वम् ॥

१३

भित्त्वा न तावत्प्रविशन्ति कायं

प्राणान्तकास्तेऽशनितुल्यवेगाः ।

शिताः शरा राघवविप्रमुक्ताः

प्रहस्त तेनैव विकत्थसे त्वम् ॥

१४

न रावणो नातिबलस्त्रिशिर्षो

न कुम्भकर्णस्य सुतो निकुम्भः ।

न चेन्द्रजिह्वाशरथिं प्रसोढुं

त्वं वा रणे शक्रसमं समर्थः ॥

१५

देवान्तको वाऽपि नरान्तको वा

तथाऽतिकायोऽतिरथो महात्मा ।

अकम्पनश्चाद्रिसमानसारः

स्थातुं न शक्ता युधि राघवस्य ॥

१६

अयं हि राजा व्यसनाभिभूतो

मितैरमित्रप्रतिमैर्भवद्भिः ।

अन्वास्यते राक्षसनाशनार्थे

तीक्ष्णः प्रकृत्या ह्यसमीक्ष्यकारी ॥

१७

अनन्तभोगेन सहस्रमूर्ध्ना

नागेन भीमेन महाबलेन ।

बलात् परिक्षिप्तमिमं भवन्तो

राजानमुत्क्षिप्य विमोचयन्तु ॥

१८

यावत्तु केशग्रहणात्सुहृद्भिः

समेत्य सर्वैः परिपूर्णकामैः ।

निगृह्य राजा परिरक्षितव्यो

भूतैर्यथा भीमवतैर्गृहीतः ॥

१९

सुवारिणा राघवसागरेण

प्रच्छाद्यमानस्तरसा भवद्भिः ।

युक्तस्त्वयं तारयितुं समेत्य

काकुत्स्थपातालमुखे पतन् सः ॥

२०

इदं पुरस्यास्य सराक्षसस्य

राज्ञश्च पथ्यं ससुहृज्जनस्य ।

सम्यग्वि वाक्यं स्वमतं ब्रवीमि

नरेन्द्रपुत्राय ददाम पत्नीम् ॥

२१

परस्य वीर्यं स्वबलं च बुद्ध्वा
स्थानं क्षयं चैव तथैव वृद्धिम् ।

तथा स्वपक्षेऽप्यनुमृश्य बुद्ध्या
वदेत् क्षमं स्वामिहितं च मन्त्री ॥ २२

इति चतुर्दशः सर्गः ॥



पञ्चदशः सर्गः ॥

बृहस्पतेस्तुल्यमतेर्वचस्त-

न्निशम्य यत्नेन विभीषणस्य ।

ततो महात्मा वचनं बभाषे

तलेन्द्रजिन्नैर्ऋतयोधमुख्यः ॥ १

किं नाम ते तात कनिष्ठ वाक्य-

मनर्थकं चैव सुभीतवच्च ।

अस्मिन् कुले यो हि भवेन्न जातः

सोऽपीदृशं नैव वदेन्न कुर्यात् ॥ २

सत्त्वेन वीर्येण पराक्रमेण

और्येण धैर्येण च तेजसा च ।

एकः कुलेऽस्मिन् पुरुषो विमुक्तो
विभीषणस्तात कनिष्ठ एषः ॥

३

किं नाम तौ राक्षस राजपुत्रा-
वस्माकमेकेन हि राक्षसेन ।
सुप्राकृतेनापि रणे निहन्तुं
शक्यौ कुतो भीषयसे स्म भीरो ॥

४

तिलोकनाथो ननु देवराजः
शक्रो मया भूमितले निविष्टः ।
भयार्दिताश्चापि दिशः प्रपन्नाः
सर्वे तथा देवगणाः समग्राः ॥

५

ऐरावतो विस्वरमुन्नदन् सः
निपातितो भूमितले मया तु ।
विकृप्य दन्तौ तु मया प्रसह्य
वित्रासिता देवगणाः समग्राः ॥

६

सोऽहं सुराणामपि दर्पहन्ता
दैत्योत्तमानामपि शोकदाता ।
कथं नरेन्द्रात्मजयोर्न शक्तो
मनुष्ययोः प्राकृतयोः सुवीर्यः ॥

७

अथेन्द्रकल्पस्य दुरासदस्य

महौजसस्तद्वचनं निशम्य ।

ततो महार्थं वचनं बभाषे

विभीषणः शस्त्रभृतां वरिष्ठः ॥

८

न तात मन्त्रे तव निश्चयोऽस्ति

बालस्त्वमद्याप्यविपक्वबुद्धिः ।

तस्मात्त्वया ह्यात्मविनाशनाय

वचोऽर्थहीनं बहु विप्रलसत् ॥

९

पुत्रप्रवादेन तु रावणस्य

त्वमिन्द्रजिन्मित्रमुखोऽसि शत्रुः ।

यस्येदृशं राघवतो विनाशं

निशम्य मोहादनुमन्यसे त्वम् ॥

१०

त्वमेव वध्यश्च सुदुर्मतिश्च

स चापि वध्यो य इहानयत्त्वाम् ।

बालं दृढं साहसिकं च योऽद्य

प्रावेशयन्मन्त्रकृतां समीपम् ॥

११

मूढोऽगल्भोऽविनयोपपन्न-

स्तीक्ष्णस्वभावोऽल्पमतिर्दुरात्मा ।

मूर्खस्त्वमत्यन्तसुदुर्मतिश्च

त्वमिन्द्रजिह्वालतया ब्रवीषि ॥

१२

को ब्रह्मदण्डप्रतिमप्रकाशा-

नर्चिष्मतः कालनिकाशरूपान् ।

सहेत बाणान् यमदण्डकल्पान्

समक्षमुक्तान् युधि राघवेण ॥

१३

धनानि रत्नानि सभूषणानि

वासांसि दिव्यानि मणींश्च चित्तान् ।

सीतां च रामाय निवेद्य देवीं

वसेम राजन्निह वीतशोकाः ॥

१४

इति पञ्चदशः सर्गः ॥



षोडशः सर्गः ॥

सुनिविष्टं हितं वाक्यमुक्तवन्तं विभीषणम् ।

अब्रवीत्पुरुषं वाक्यं रावणः कालचोदितः ॥

१

वसेत्सह सपत्नेन क्रुद्धेनाशीविषेण वा ।

न तु मित्रप्रवादेन संवसेच्छत्रुमेविना ॥

२

- जानामि शीलं ज्ञातीनां सर्वलोकेषु राक्षस ।
हृष्यन्ति व्यसनेष्वेते ज्ञातीनां ज्ञातयः सदा ॥ ३
- प्रधानं साधनं वैद्यं धर्मशीलं च राक्षस ।
ज्ञातयो ह्यवमन्यन्ते शूरं परिभवन्ति च ॥ ४
- नित्यमन्योन्यसंहृष्टा व्यसनेष्वाततायिनः ।
प्रच्छन्नहृदया घोरा ज्ञातयस्तु भयावहाः ॥ ५
- श्रूयन्ते हस्तिभिर्गीताः श्लोकाः पद्मवने क्वचित् ।
पाशहस्तान्नरान्दृष्ट्वा शृणु तान् गदतो मम ॥ ६
- नाग्निर्नान्यानि शस्त्राणि न नः पाशा भयावहाः ।
घोराः स्वार्थप्रयुक्तास्तु ज्ञातयो नो भयावहाः ॥ ७
- उपायमेते वक्ष्यन्ति ग्रहणे नात्र संशयः ।
कृत्स्नाद्भयाज्ज्ञातिभयं सुकष्टं विदितं च नः ॥ ८
- विद्यते गोषु सम्पन्नं विद्यते ब्राह्मणे दमः ।
विद्यते स्त्रीषु चापल्यं विद्यते ज्ञातितो भयम् ॥ ९
- ततो नेष्टमिदं सौम्य यदहं लोकसत्कृतः ।
ऐश्वर्येणाभिजातश्च रिपूणां मूर्ध्नि च स्थितः ॥ १०

यथा पुष्करपर्णेषु पतितास्तोयविन्दवः ।

न श्लेषमुपगच्छन्ति तथाऽनार्येषु सौहृदम् ॥ ११

यथा शरदि मेघानां सिञ्चतामभिगर्जताम् ।

न भवत्यम्बुसंक्लेदस्तथाऽनार्येषु सौहृदम् ॥ १२

यथा मधुकरस्तर्षाद्रसं विन्दन्न विद्यते ।

तथा त्वमपि तत्रैव तथाऽनार्येषु सौहृदम् ॥ १३

यथा पूर्वं गजः स्नात्वा गृह्य हस्तेन वै रजः ।

दूषयत्यात्मनो देहं यथाऽनार्येषु सौहृदम् ॥ १४

अन्यस्त्वेवंविधं ब्रूयाद्वाक्यमेतन्निशाचर ।

अस्मिन्मुहूर्ते न भवेत्त्रां तु धिक्कुलपांसनम् ॥ १५

इत्युक्तः परुषं वाक्यं न्यायवादी विभीषणः ।

उत्पपात गदापाणिश्चतुर्भिः सह राक्षसैः ॥ १६

अब्रवीच्च तदा वाक्यं जातक्रोधो विभीषणः ।

अन्तरिक्षगतः श्रीमान् भ्रातरं राक्षसाधिपम् ॥ १७

स त्वं भ्राताऽसि मे राजन् ब्रूहि मां यद्यदिच्छसि ।

ज्येष्ठो मान्यः पितृसमो न त्वं धर्मपथे स्थितः ॥

इदं तु परुषं वाक्यं न क्षमाम्यनृतं तव ॥ १८

सुनीतं हितकामेन वाक्यमुक्तं दशानन ।

न गृह्णन्त्यकृतात्मानः कालस्य वशमागताः ॥ १९

सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः ।

अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥ २०

बद्धस्त्वं कालपाशेन सर्वभूतापहारिणा ।

न नश्यन्तमवेक्षे त्वां प्रदीप्तं शरणं यथा ॥ २१

दीप्तपावकसङ्काशैः शितैः काञ्चनभूषणैः ।

न त्वामिच्छाम्यहं द्रष्टुं रामेण निहतं शरैः ॥ २२

शूराश्च बलवन्तश्च कृतास्त्राश्च रणाजिरे ।

कालाभिपन्नाः सीदन्ति यथा वालुकसेतवः ॥ २३

तन्मर्षयतु यच्चोक्तं गुरुत्वाद्वितमिच्छता ।

आत्मानं सर्वथा रक्ष पुरीं चेमां सराक्षसाम् ॥ २४

स्वस्ति तेऽस्तु गमिष्यामि सुखी भव मया विना ॥ २५

निवार्यमाणस्य मया हितैषिणा

न रोचते ते वचनं निशाचर ।

परीतकाला हि गतायुषो नरा

हितं न गृह्णन्ति सुहृद्भिरीरितम् ॥ २६

इति षोडशः सर्गः ॥



सप्तदशः सर्गः ॥

इत्युक्त्वा परुषं वाक्यं रावणं रावणानुजः ।

आजगाम मुहूर्तेन यत्र रामः सलक्ष्मणः ॥

१

तं मेरुशिखराकारं दीप्तामिव शतहृदाम् ।

गगनस्थं महीस्थास्ते ददृशुर्वानराधिपाः ॥

२

स हि मेघाचलप्रख्यो महेन्द्रसमविक्रमः ।

सर्वायुधधरो वीरो दिव्याभरणभूषितः ॥

३

ये चाप्यनुचरास्तस्य चत्वारो भीमविक्रमाः ।

तेऽपि वर्मायुधोपेता भूषणैश्च विभूषिताः ॥

४

तमात्मपञ्चमं दृष्ट्वा सुग्रीवो वानराधिपः ।

वानरैः सह दुर्धर्षश्चिन्तयामास बुद्धिमान् ॥

५

चिन्तयित्वा मुहूर्ते तु वानरांस्तानुवाच ह ।

हनुमत्प्रमुखान्सर्वानिदं वचनमुत्तमम् ॥

६

एष सर्वायुधोपेतश्चतुर्भिः सह राक्षसैः ।

राक्षसोऽभ्येति पश्यध्वमस्मान्हन्तुं न संशयः ॥

७

सुग्रीवस्य वचः श्रुत्वा सर्वे ते वानरोत्तमाः ।

सालानुद्यम्य शैलांश्च इदं वचनमब्रुवन् ॥

८

शीघ्रं व्यादिश नो राजन् वधायैषां दुरात्मनाम् ।

निपतन्तु हता यावद्धरण्यामल्पतेजसः ॥

९

तेषां संभाषमाणानामन्योन्यं स विभीषणः ।

उत्तरं तीरमासाद्य खस्थ एव व्यतिष्ठत ॥

१०

उवाच च महाप्राज्ञः स्वरेण महता महान् ।

सुग्रीवं तांश्च संप्रेक्ष्य खस्थ एव विभीषणः ॥

११

रावणो नाम दुर्वृत्तो राक्षसो राक्षसाधिपः ।

तस्याहमनुजो भ्राता विभीषण इति श्रुतः ॥

१२

तेन सीता जनस्थानाद्भृता हत्वा जटायुषम् ।

रुद्धा च विवशा दीना राक्षसीभिः सुरक्षिता ॥

१३

तमहं हेतुभिर्वाक्यैर्विविधैश्च न्यदर्शयम् ।

साधु निर्यात्यतां सीता रामायेति पुनः पुनः ॥

१४

स च न प्रतिजग्राह रावणः कालचोदितः ।

उच्यमानं हितं वाक्यं विपरीत इवौषधम् ॥

१५

सोऽहं परुषितस्तेन दासवच्चावमानितः ।

त्यक्त्वा पुत्रांश्च दारांश्च राघवं शरणं गतः ॥ १६

सर्वलोकशरण्याय राघवाय महात्मने ।

निवेदयत मां क्षिप्रं विभीषणमुपस्थितम् ॥ १७

एतत्तु वचनं श्रुत्वा सुग्रीवो लघुविक्रमः ।

लक्ष्मणस्याग्रतो रामं संरब्धमिदमब्रवीत् ॥ १८

रावणस्यानुजो भ्राता विभीषण इति श्रुतः ।

चतुर्भिः सह रक्षोभिर्भवन्तं शरणं गतः ॥ १९

मन्त्रे व्यूहे नये चारे युक्तो भवितुमर्हसि ।

वानराणां च भद्रं ते परेषां च परन्तप ॥ २०

अन्तर्धानगता ह्येते राक्षसाः कामरूपिणः ।

शूराश्च निकृतिज्ञाश्च तेषु जातु न विश्वसेत् ॥ २१

प्रणिधी राक्षसेन्द्रस्य रावणस्य भवेदयम् ।

अनुप्रविश्य सोऽस्मासु भेदं कुर्यान्न संशयः ॥ २२

अथवा स्वयमेवैष छिद्रमासाद्य बुद्धिमान् ।

अनुप्रविश्य विश्वस्ते कदाचित्प्रहरेदपि ॥ २३

मितादपि बलं चैव मौलं भृत्यबलं तथा ।
सर्वमेतद्वलं ग्राह्यं वर्जयित्वा द्विषद्वलम् ॥ २४

प्रकृत्या राक्षसो ह्येष भ्राताऽमित्रस्य वै प्रभो ।
आगतश्च रिपोः पक्षात् कथमस्मिन्हि विश्वसेत् ॥ २५

रावणेन प्रणिहितं तमवेहि विभीषणम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये क्षमं क्षमवतां वर ॥ २६

राक्षसो जिह्मया बुद्ध्या सन्दिष्टोऽयमुपस्थितः ।
प्रहर्तुं माययाच्छत्रो विश्वस्ते त्वयि चानघ ॥ २७

प्रविष्टः शत्रुसैन्यं हि प्राप्तः शत्रुरतर्कितः ।
निहन्यादन्तरं लब्ध्वा उलूक इव वायसान् ॥ २८

वध्यतामेष तीव्रेण दण्डेन सचिवैः सह ।
रावणस्य नृशंसस्य भ्राता ह्येष विभीषणः ॥ २९

एवमुक्त्वा तु तं रामं संरब्धो वाहिनीपतिः ।
वाक्यज्ञो वाक्यकुशलं ततो मौनमुपागमत् ॥ ३०

सुग्रीवस्य तु तद्वाक्यं श्रुत्वा रामो महायशाः ।
समीपस्थानुवाचेदं हनुमत्पुमान् हरीन् ॥ ३१

- यदुक्तं कपिराजेन रावणावरजं प्रति ।
वाक्यं हेतुमदत्यर्थं भवद्भिरपि तच्छ्रुतम् ॥ ३२
- सुहृदा ह्यर्थकृच्छ्रेषु युक्तं बुद्धिमता सता ।
समर्थेनापि सन्देष्टुं शाश्वतीं भूतिमिच्छता ॥ ३३
- इत्येवं परिपृष्टास्ते स्वं स्वं मतमतन्द्रिताः ।
सोपचारं तदा राममूचुर्हितचिकीर्षवः ॥ ३४
- अज्ञातं नास्ति ते किञ्चित् त्रिषु लोकेषु राघव ।
आत्मानं पूजयन् राम पृच्छस्यस्मान्सुहृत्तया ॥ ३५
- त्वं हि सत्यव्रतः शूरो धार्मिको दृढविक्रमः ।
परीक्ष्यकारी स्मृतिमान् निसृष्टात्मा सुहृत्सु च ॥ ३६
- तस्मादेकैकशस्तावद्ब्रुवन्तु सचिवास्तव ।
हेतुतो मतिसम्पन्नाः समर्थाश्च पृथक्पुनः ॥ ३७
- इत्युक्ते राघवायाथ मतिमानङ्गदोऽग्रतः ।
विभीषणपरीक्षार्थमुवाच वचनं हरिः ॥ ३८
- शत्रोः सकाशात्संप्राप्तः सर्वथा तर्क्य एव हि ।
विश्वासयोग्यः सहसा न कर्तव्यो विभीषणः ॥ ३९

छादयित्वाऽत्मभावं हि चरन्ति शठबुद्धयः ।
प्रहरन्ति च रन्ध्रेषु सोऽनर्थः सुमहान् भवेत् ॥ ४०

अर्थानर्थौ विनिश्चित्य व्यवसायं भजेत ह ।
गुणतः संग्रहं कुर्याद् दोषतस्तु विसर्जयेत् ॥ ४१

यदि दोषो महांस्तस्मिस्त्यज्यतामविशङ्कितम् ।
गुणान्वापि बहूञ्ज्ञात्वा संग्रहः क्रियतां विभो ॥ ४२

शरभस्त्वथ निश्चित्य वीरो वचनमब्रवीत् ।
क्षिप्रमस्मिन्नरव्याघ्र चारः प्रतिविधीयताम् ॥ ४३

प्रणिधाय हि चारेण यथावत्सूक्ष्मबुद्धिना ।
परीक्ष्य च ततः कार्यो यथान्यायं परिग्रहः ॥ ४४

जाम्बवांस्त्वथ संप्रेक्ष्य शास्त्रबुद्ध्या विचक्षणः ।
वाक्यं विज्ञापयामास गुणवद्दोषवर्जितम् ॥ ४५

बद्धवैराच्च पापाच्च राक्षसेन्द्राद्विभीषणः ।
अदेशकाले संप्राप्तः सर्वथा शङ्क्यतामयम् ॥ ४६

ततो मैन्दस्तु संप्रेक्ष्य नयापनयकोविदः ।
वाक्यं वचनसम्पन्नो वभाषे हेतुमत्तरम् ॥ ४७

वचनं नाम तस्यैष रावणस्य विभीषणः ।

पृच्छद्यतां मधुरेणायं शनैर्नरपतीश्वर ॥

४८

भावमस्य तु विज्ञाय ततस्तत्त्वं करिष्यसि ।

यदि दुष्टो न दुष्टो वा बुद्धिपूर्वं नरर्षभ ॥

४९

अथ संस्कारसम्पन्नो हनूमान्सचिवोत्तमः ।

उवाच वचनं श्लक्ष्णमर्थवन्मधुरं लघु ॥

५०

न भवन्तं मतिश्रेष्ठं समर्थं वदतां वरम् ।

अतिशाययितुं शक्तो बृहस्पतिरपि ब्रुवन् ॥

५१

न वादान्नापि सङ्घर्षान्नाधिकवान्न च कामतः ।

वक्ष्यामि वचनं राजन् यथार्थं राम गौरवात् ॥

५२

अर्थानर्थनिमित्तं हि यदुक्तं सचिवैस्तव ।

तत्र दोषं प्रपश्यामि क्रिया न ह्युपपद्यते ॥

५३

ऋते नियोगात्सामर्थ्यमवबोद्धुं न शक्यते ।

सहसा विनियोगो हि दोषवान्प्रतिभाति मे ॥

५४

चारप्रणिहितं युक्तं यदुक्तं सचिवैस्तव ।

अर्थस्यासंभवात्तत्र कारणं नोपपद्यते ॥

५५

अदेशकाले संप्राप्त इत्ययं यद्विभीषणः ।

विवक्षा तत्र मेऽस्तीयं तां निबोध यथामति ॥ ५६

स एष देशः कालश्च भवतीह यथा तथा ।

पुरुषात्पुरुषं प्राप्य तथा दोषगुणावपि ॥ ५७

दौरात्म्यं रावणे दृष्ट्वा विक्रमं च तथा त्वयि ।

युक्तमागमनं तस्य विमृशानस्य बुद्धितः ॥ ५८

अज्ञातरूपैः पुरुषैः स राजन्पृच्छयतामिति ।

यदुक्तमत्र मे प्रेक्षा काचिदस्ति समीक्षिता ॥ ५९

पृच्छयमानो विशङ्केत सहसा बुद्धिमान् वचः ।

तत्र मित्वं प्रदुष्येत मिथ्या पृष्टं सुखागतम् ॥ ६०

अशक्यः सहसा राजन् भावो वेत्तुं परस्य वै ।

अन्तःस्वभावैर्गीतैस्तैर्नैपुण्यं पश्यता भृशम् ॥ ६१

न त्वस्य ब्रुवतो जातु लक्ष्यते दुष्टभावता ।

प्रसन्नं वदनं चापि तस्मान्मे नास्ति संशयः ॥ ६२

अशङ्कितमतिः स्वस्यो न शठः परिसर्पति ।

न चास्य दुष्टा वाक्छक्तिस्तस्मान्मे नास्ति संशयः ॥

आकारश्छाद्यमानोऽपि न शक्यो विनिगूहितुम् ।
बलाद्धि विवृणोत्येव भावमन्तर्गतं नृणाम् ॥ ६४

देशकालोपपन्नं च कार्यं कार्यविदां वर ।
सफलं कुरुते क्षिप्रं प्रयोगेणामिसंहितम् ॥ ६५

उद्योगं तव संप्रेक्ष्य मिथ्यावृत्तं च रावणम् ।
बालिनं च हतं श्रुत्वा सुग्रीवं चाभिषेचितम् ॥ ६६

अमर्षी भ्रातरं त्यक्त्वा भवन्तं शरणं गतः ।
देशकालोपपन्नश्च तत्कुलीनश्च राक्षसः ॥ ६७

राज्यं प्रार्थयमानश्च बुद्धिपूर्वमिहागतः ।
एतावत्तु पुरस्कृत्य युज्यते त्वस्य संग्रहः ॥ ६८

यथाशक्ति मयोक्तं तु राक्षसस्यार्जवं प्रति ।
त्वं प्रमाणं हि शेषस्य श्रुत्वा बुद्धिमतां वर ॥ ६९

इति सप्तदशः सर्गः ॥



अष्टादशः सर्गः ॥

- अथ रामः प्रसन्नात्मा श्रुत्वा वायुमुतस्य ह ।
प्रत्यभाषत दुर्धर्षः श्रुतवानात्मनि स्थितम् ॥ १
- ममापि तु विवक्षाऽस्ति काचित्प्रति विभीषणम् ।
श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं भवद्भिः श्रेयसि स्थितैः ॥ २
- मित्रभावेन संप्राप्तं न त्यजेयं कथञ्चन ।
दोषो यद्यपि तस्य स्यात् सतामेतदगर्हितम् ॥ ३
- सुग्रीवस्त्वथ तद्वाक्यमाभाष्य च विमृश्य च ।
ततः शुभतरं वाक्यमुवाच हरिपुङ्गवः ॥ ४
- सुदुष्टो वाप्यदुष्टो वा किमेष रजनीचरः ।
ईदृशं व्यसनं प्राप्तं भ्रातरं यः परित्यजेत् ।
को नाम स भवेत्तस्य यमेष न परित्यजेत् ॥ ५
- वानराधिपतेर्वाक्यं श्रुत्वा सर्वानुदीक्ष्य च ।
ईषदुत्सयमानस्तु लक्ष्मणं पुण्यलक्षणम् ॥ ६
- इति होषाच काकुत्स्थो वाक्यं सत्यपराक्रमः ॥ ७

अमपीत्य च शास्त्राणि वृद्धाननुपसेव्य च ।

न शत्रुपसोदयो वक्तुं मनुवाच इरीश्वरः ॥ ८

अस्ति मूर्ख्यता किञ्चिद् गदत्र पातयति मे ।

गतास्य बौद्धिक ताऽऽपि विद्यते सर्वराजसु ॥ ९

अमित्रास्तत्कुलीनाश्च प्रातिदेश्याश्च कीर्तिताः ।

व्यसनेषु प्रहर्तारस्तस्मादयमिहागतः ॥ १०

अपापास्तत्कुलीनाश्च मानयन्ति स्वकान् हितान् ।

एष प्रायो नरेन्द्राणां शङ्कनीयस्तु शोभनः ॥ ११

यस्तु दोषस्त्वया प्रोक्तो ह्यादानेऽरिबलस्य च ।

तत्र ते कीर्तयिष्यामि यथाशास्त्रमिदं शृणु ॥ १२

न वयं तत्कुलीनाश्च राज्यकाङ्क्षी च राक्षसः ।

पण्डिता हि भविष्यन्ति तस्माद्ग्राह्यो विभीषणः ॥ १३

अव्यग्राश्च प्रहृष्टाश्च न भविष्यन्ति सङ्गताः ।

प्रणादश्च महानेष ततोऽस्य भयमागतम् ॥ १४

इति भेदं गमिष्यन्ति तस्माद्ग्राह्यो विभीषणः ॥

न सर्वे भ्रातरस्तात भवन्ति भरतोपमाः ।

यद्विधा वा पितुः पुत्राः सुहृदो वा भवद्विधाः ॥ १५

एवमुक्तस्तु रामेण सुग्रीवः सहलक्ष्मणः ।
उत्थायेदं महाप्राज्ञः प्रणतो वाक्यमब्रवीत् ॥ १६

रावणेन प्रणिहितं तमवेहि विभीषणम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये क्षमं क्षमवतां वर ॥ १७

राक्षसो जित्स्त्रया बुद्ध्या सन्दिष्टोऽयमिहागतः ।
प्रहर्तुं त्वयि विश्वस्ते प्रच्छन्नो मयि वाऽनघ ॥ १८

लक्ष्मणे वा महाबाहो स वध्यः सचिवैः सह ।
रावणस्य नृशंसस्य भ्राता ह्येष विभीषणः ॥ १९

एवमुक्त्वा रघुश्रेष्ठं सुग्रीवो बाहिनीपतिः ।
वाक्यज्ञो वाक्यकुशलं ततो मौनमुपागमत् ॥ २०

सुग्रीवस्य तु तद्वाक्यं श्रुत्वा रामो विमृश्य च ।
ततः शुभतरं वाक्यमुवाच हरिपुङ्गवम् ॥ २१

सुदुष्टो वाप्यदुष्टो वा किमेष रजनीचरः ।
सूक्ष्ममप्यहितं कर्तुं ममाशक्तः कथञ्चन ॥ २२

पिशाचान्दानवान्यक्षान् पृथिव्यां ये च रक्षसान् ।
अङ्गुल्यग्रेण तान्हन्यामिच्छन् हरिगणेश्वर ॥ २३

श्रूयते हि कपोतेन शत्रुः शरणमागतः ।
अर्वितश्च यथान्यायं स्वैश्च मांसैर्निमन्त्रितः ॥ २४

स हि तं प्रतिजग्राह भार्याहर्तारमागतम् ।
कपोतो वानरश्रेष्ठ किं पुनर्मद्विधो जनः ॥ २५

ऋषेः कण्वस्य पुत्रेण कण्डुना परमर्षिणा ।
शृणु गाथां पुरा गीतां धर्मिष्ठां सत्यवादिना ॥ २६

बद्धाञ्जलिपुटं दीनं याचन्तं शरणागतम् ।
न हन्यादानृशंस्यार्थमपि शत्रुं परन्तप ॥ २७

आर्तो वा यदि वा दृप्तः परेषां शरणागतः ।
अरिः प्राणान् परित्यज्य रक्षितव्यः कृतात्मना ॥ २८

स चेद्भयाद्वा मोहाद्वा कामाद्वापि न रक्षति ।
स्वया शक्त्या यथाशक्ति तत्पापं लोकगर्हितम् ॥ २९

विनष्टः पश्यतस्तस्य रक्षितुः शरणागतः ।
आदाय मक्रुवं तस्य सर्वं गच्छेदरक्षितः ॥ ३०

एष दोषः मनुष्ये न प्रपन्नानामरक्षणे ।
अवर्ग्यं नायशस्यं च बलवीर्यविनाशनम् ॥ ३१

कण्ठ्यानि यथार्थं तु कण्ठोर्वचनं ।
धर्मिष्ठं च यशस्यं च स्वर्ग्यं च तु कण्ठोदये ॥ ३२

सकृदेव प्रपन्नाय तवासीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्ब्रतं मम ॥ ३३

आनयैनं हरिश्रेष्ठ दत्तमस्याभयं मया ।
विभीषणो वा सुग्रीव यदि वा रावण स्वयम् ॥ ३४

रामस्य तु वचः श्रुत्वा सुग्रीवः प्लवगेश्वरः ।
प्रत्यभाषत काकुत्स्थं सौहार्देनाभिचोदितः ॥ ३५

किमत्र चित्तं धर्मज्ञ लोकनाथ सुखावह ।
यत्त्वमार्यं प्रभाषेथाः सत्त्ववान् सत्पथे स्थितः ॥ ३६

मम चाप्यन्तरात्माऽयं शुद्धं वेत्ति विभीषणम् ।
अनुमानाच्च भावाच्च सर्वतः सुपरीक्षितः ॥ ३७

तस्मात्क्षिप्रं सहास्माभिस्तुल्यो भवतु राघव ।
विभीषणो महाप्राज्ञः सखित्वं चाभ्युपैतु नः ॥ ३८

ततस्तु सुग्रीववचो निशम्य त-
द्धरीश्वरेणाभिहितं नरेश्वरः ।

विभीषणेनाशु जगाम सङ्गमं
पतत्त्रिराजेन यथा पुरन्दरः ॥

३९

इति अष्टादशः सर्गः ॥



एकोनविंशः सर्गः ॥

राघवेणाभये दत्ते सन्नतो रावणानुजः ।
विभीषणो महाप्राज्ञो भूमिं समवलोकयन् ॥

१

खात्पपातावनीं हृष्टो भक्तैरनुचरैः सह ।
स तु रामस्य धर्मात्मानिपपात विभीषणः ॥

२

पादयोः शरणान्वेषी चतुर्भिः सह राक्षसैः ।
अब्रवीच्च तदा रामं वाक्यं तत्र विभीषणः ॥

३

धर्मयुक्तं च युक्तं च सांप्रतं संप्रहर्षणम् ।
अनुजो रावणस्याहं तेन चास्म्यवमानितः ॥

४

भवन्तं सर्वभूतानां शरण्यं शरणं गतः ।
परित्यक्ता मया लङ्का मित्राणि च धनानि च ॥

५

भवद्गतं मे राज्यं च जीवितं च सुखानि च ।
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा रामो वचनमब्रवीत् ॥ ६

वचसा सान्त्वयित्वैनं लोचनाभ्यां पिबन्निव ।
आख्याहि मम तत्त्वेन राक्षसानां बलाबलम् ॥ ७

एवमुक्तं तदा रक्षो रामेण क्लिष्टकर्मणा ।
रावणस्य बलं सर्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥ ८

अवध्यः सर्वभूतानां गन्धर्वासुररक्षसाम् ।
राजपुत्र दशग्रीवो वरदानात्स्वयंभुवः ॥ ९

रावणानन्तरो भ्राता मम ज्येष्ठश्च वीर्यवान् ।
कुम्भकर्णो महातेजाः शक्रपतिबलो युधि ॥ १०

राम सेनापतिस्तस्य प्रहस्तो यदि वा-श्रुतः ।
कैलासे येन संग्रामे माणिभद्रः पराजितः ॥ ११

बद्धगोधाङ्गुलित्राणो ह्यवध्यकवचो युधि ।
धनुरादाय तिष्ठन् स त्वदृश्यो भवतीन्द्रजित् ॥ १२

संग्रामे स महाव्यूहे तर्पयित्वा हुताशनम् ।
अन्तर्धानगतः शत्रूनिन्द्रजिद्धन्ति राघव ॥ १३

महोदरमहापार्श्वौ राक्षसश्चाप्यकम्पनः ।

अनीकस्थास्तु तस्यैते लोकपालसमा युधि ॥ १४

दशकोटिसहस्राणि रक्षसां कामरूपिणाम् ।

मांसशोणितभक्षाणां लङ्कापुरनिवासिनाम् ॥ १५

स तैस्तु सहितो राजा लोकपालानयोधयम् ।

सह देवैस्तु ते भग्ना रावणेन दुरात्मना ॥ १६

विभीषणस्य तु वचस्तच्छ्रुत्वा रघुसत्तमः ।

अन्वीक्ष्य मनसा सर्वमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १७

यानि कर्मापदानानि रावणस्य विभीषण ।

आख्यातानि च तत्त्वेन ह्यवगच्छामि तान्यहम् ॥ १८

अहं हत्वा दशग्रीवं सप्रहस्तं सहानुजम् ।

राजानं त्वां करिष्यामि सत्यमेतद्व्रवीमि ते ॥ १९

रसातलं वा प्रविशेत् पातालं वाऽपि रावणः ।

पितामहसकाशं वा न मे जीवन् विमोक्ष्यते ॥ २०

अहत्वा रावणं संख्ये सपुत्रबलवान्धवम् ।

अयोध्यां न प्रवेक्ष्यामि लिभिस्तैर्भ्रातृभिः शपे ॥ २१

- श्रुत्वा तु वचनं तस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।
शिरसा वन्द्य धर्मात्मा वक्तुमेवोपचक्रमे ॥ २२
- राक्षसानां वधे साह्यं लङ्कायाश्च प्रघर्षणे ।
करिष्यामि यथाप्राणं प्रवेक्ष्यामि च बाहिनीम् ॥ २३
- इति ब्रुवाणं रामस्तु परिष्वज्य विभीषणम् ।
अब्रवीलक्ष्मणं प्रीतः समुद्राञ्जलमानय ॥ २४
- तेन चैनं महाप्राज्ञमभिषिञ्च्य विभीषणम् ।
राजानं रक्षसां क्षिप्रं प्रसन्ने मयि मानद ॥ २५
- एवमुक्तस्तु सौमित्रिरभ्यषिञ्च्यद्विभीषणम् ।
मध्ये वानरमुख्यानां राजानं रामशासनात् ॥ २६
- तं प्रसादं तु रामस्य दृष्ट्वा सद्यः प्लवङ्गमाः ।
प्रचुक्रुशुर्महात्मानं साधु साध्विति चाब्रुवन् ॥
अब्रवीच्च हनूमास्तं सुग्रीवश्च विभीषणम् ॥ २७
- कथं सागरमक्षोभ्यं तराम वरुणालयम् ।
सैन्यैः परिवृताः सर्वे वानराणां महौजसाम् ॥ २८
- उपायं नाधिगच्छामो यथा नदनदीपतिम् ।
तराम तरसा सर्वे ससैन्या वरुणालयम् ॥ २९

- एवमुक्तस्तु धर्मज्ञः प्रत्युवाच विभीषणः ।
समुद्रं राघवो राजा शरणं गन्तुमर्हति ॥ ३०
- खानितः सगरेणायमप्रमेयो महोदधिः ।
कर्तुमर्हति रामस्य ज्ञातेः कार्यं महोदधिः ॥ ३१
- एवं विभीषणेनोक्तो राक्षसेन विपश्चिता ।
आजगामाथ सुग्रीवो यत्र रामः सलक्ष्मणः ॥ ३२
- ततश्चाख्यातुमारेभे विभीषणवचः शुभम् ।
सुग्रीवो विपुलग्रीवः सागरस्योपवेशनम् ॥ ३३
- प्रकृत्या धर्मशीलस्य राघवस्याप्यरोचत ॥ ३४
- स लक्ष्मणं महातेजाः सुग्रीवं च हरीश्वरम् ।
सत्क्रियार्थं क्रियादक्षः स्मितपूर्वमुवाच ह ॥ ३५
- विभीषणस्य मन्त्रोऽयं मम लक्ष्मण रोचते ।
ब्रूहि त्वं सहसुग्रीवस्तवापि यदि रोचते ॥ ३६
- सुग्रीवः पण्डितो नित्यं भवान् मन्त्रविचक्षणः ।
उभाभ्यां संप्रधार्यार्थं रोचते यत्तदुच्यताम् ॥ ३७
- एवमुक्तौ तु तौ वीरावुभौ सुग्रीवलक्ष्मणौ ।
समुदाचारसंयुक्तमिदं वचनमूचतुः ॥ ३८

किमर्थं नौ नरव्याघ्र न रोचिष्यति राघव ।
विभीषणेन यच्चोक्तमस्मिन् काले सुखावहम् ॥ ३९

अबद्ध्वा सागरे सेतुं घोरेऽस्मिन् वरुणालये ।
लङ्का नासादितुं शक्या सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥ ४०

विभीषणस्य शूरस्य यथार्थं क्रियतां वचः ।
अलं कालात्ययं कृत्वा समुद्रोऽयं नियुज्यताम् ॥
यथा सैन्येन गच्छामः पुरीं रावणपालिताम् ॥ ४१

एवमुक्तः कुशास्तीर्णे तीरे नदनदीपतेः ।
संविवेश तदा रामो वेद्यामिव हुताशनः ॥ ४२

इति एकोनविंशः सर्गः ॥



विंशः सर्गः ॥

ततो निविष्टां ध्वजिनीं सुग्रीवेणाभिपालिताम् ।
ददर्श राक्षसोऽभ्येत्य शार्दूलो नाम वीर्यवान् ॥ १

चारो राक्षसराजस्य रावणस्य दुरात्मनः ।
तां दृष्ट्वा सर्वमव्यग्रं प्रतिगम्य स राक्षसः ॥ २

आविश्य लङ्कां वेगेन राजानमिदमब्रवीत् ॥ ३

एष वै वानरक्षौघो लङ्कां समभिवर्तते ।

अगाधश्चाप्रमेयश्च द्वितीय इव सागरः ॥ ४

पुत्रौ दशरथस्येमौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

उत्तमायुधसम्पन्नौ सीतायाः पदमागतौ ॥ ५

एतौ सागरमासाद्य सन्निविष्टौ महाद्युती ।

बलं चाकाशमावृत्य सर्वतो दशयोजनम् ॥ ६

तत्त्वपूर्वं महाराज क्षिप्रं वेदितुमर्हसि ।

तव दूता महाराज क्षिप्रमर्हन्त्यवेक्षितुम् ॥

उपप्रदानं सान्त्वं वा भेदो वाऽत्र प्रयुज्यताम् ॥ ७

शार्दूलस्य वचः श्रुत्वा रावणो राक्षसाधिपः ।

उवाच सहसा व्यग्रः संप्रधार्यार्थमात्मनः ॥ ८

शुकं नाम तदा रक्षो वाक्यमर्थविदां वरम् ॥ ९

सुग्रीवं ब्रूहि गत्वाशु राजानं वचनान्मम ।

यथासन्देशमक्लीबं श्लक्ष्णया परया गिरा ॥ १०

त्वं वै महाराज कुलप्रसूतो

महाबलश्चर्क्षरजःसुतश्च ।

न कश्चिदर्थस्तव नास्त्यनर्थ-

स्तथासि मे भ्रातृसमो हरीश ॥ ११

अहं यद्यहरं भार्या राजपुत्रस्य धीमतः ।

किं तत्र तव सुग्रीव किष्किन्धां प्रति गम्यताम् ॥ १२

न हीयं हरिभिर्लङ्का शक्या प्राप्तुं कथञ्चन ।

देवैरपि सगन्धर्वैः किं पुनर्नखानरैः ॥ १३

स तथा राक्षसेन्द्रेण सन्दिष्टो रजनीचरः ।

शुको विहङ्गमो भूत्वा तूर्णमाप्लुत्य चाम्बरम् ॥ १४

स गत्वा दूरमध्वानमुपर्युपरि सागरम् ।

संस्थितो ह्यम्बरे वाक्यं सुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ १५

सर्वमुक्तं यथादिष्टं रावणेन दुरात्मना ॥

तं प्रापयन्तं वचनं तूर्णमाप्लुत्य वानराः ।

प्रापयन्त दिवं क्षिप्रं लोप्तुं हन्तुं च मुष्टिभिः ॥ १६

स तैः प्लवङ्गैः प्रसभं निगृहीतो निशाचरः ।

गगनाद्भूतले चाशु परिगृह्यवतारितः ॥ १७

वानरैः पीड्यमानस्तु शुको वचनमब्रवीत् ॥ १८

न दूतान् घ्नन्ति काकुत्स्थ वार्यन्तां साधु वानराः ।

यस्तु हित्वा मतं भर्तुः स्वमतं संप्रभाषते ।

अनुक्तवादी दूतः सन् स दूतो वधमर्हति ॥ १९

शुकस्य वचनं श्रुत्वा रामस्तु परिदेवितम् ।

उवाच मा वधिष्टेति घ्नतः शाखामृगर्षभान् ॥ २०

स च पत्रलघुर्भूत्वा हरिभिर्दर्शिते भये ।

अन्तरिक्षस्थितो भूत्वा पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ २१

सुग्रीव सत्वसंपन्न महाबलपराक्रम ।

किं मया खलु वक्तव्यो रावणो लोकरावणः ॥ २२

स एवमुक्तः प्लवगाधिपस्तदा

प्लवङ्गमानामृषभो महाबलः ।

उवाच वाक्यं रजनीचरस्य

चारं शुक्लं दीनमदीनसत्वः ॥ २३

न मेऽसि मित्रं न तथानुकम्प्यो

न चोपकर्तासि न मे प्रियोऽसि ।

अरिश्च रामस्य सहानुबन्धः

स मेऽसि वालीव वधार्ह वध्यः ॥ २४

निहन्म्यहं त्वां ससुतं सबन्धु

सज्ञातिवर्गं रजनीचरेश ।

लङ्कां च सर्वां महता बलेन

क्षिप्रं करिष्यामि समेत्य भस्म ॥

२५

न मोक्ष्यसे रावण राघवस्य

सुरैः सहेन्द्रैरपि मूढ गुप्तः ।

अन्तर्हितः सूर्यपथं गतो वा

तथैव पातालमनुप्रविष्टः ॥

२६

तस्य ते त्रिषु लोकेषु न पिशाच न राक्षसम् ।

आतारं नानुपश्यामि न गन्धर्वं न चासुरम् ॥

२७

अवधीस्त्वं जरावृद्धं गृध्रराजानमक्षमम् ।

किं नु ते रामसान्निध्ये सकाशे लक्ष्मणस्य वा ॥

२८

हृता सीता विशालाक्षी यां त्वं गृह्य न बुध्यसे ।

महाबलं महाप्राज्ञं दुर्धर्ममरैरपि ॥

२९

न बुध्यसे रघुश्रेष्ठं यस्ते प्राणान् हरिष्यति ।

ततोऽब्रवीद्बालिसुतो ह्यङ्गदो हरिसत्तमः ॥

३०

नायं दूतो महाराज चारिकः प्रतिभाति मे ।

तुलितं हि बलं सर्वमनेनात्रैव तिष्ठता ॥

३१

गृह्यतां मा गमलङ्गामेतद्धि मम रोचते ॥ ३२

ततो राज्ञा समादिष्टाः समुत्प्लुत्य वलीमुखाः ।

जगृहुस्तं बबन्धुश्च विलपन्तमनाथवत् ॥ ३३

शुकस्तु वानरैश्चण्डैस्तत्र तैः संप्रपीडितः ।

व्याक्रोशत महात्मानं रामं दशरथात्मजम् ॥ ३४

लुप्येते मे बलात्पक्षौ भिद्येते च तथाक्षिणी ।

यां च रात्रिं मरिष्यामि जाये रात्रिं च यामहम् ॥ ३५

एतस्मिन्नन्तरे काले यन्मया ह्यशुभं कृतम् ।

सर्वं तदुपमद्येथा जह्यां चेद्यदि जीवितम् ॥ ३६

नाघातयत्तदा रामः श्रुत्वा तत्परिदेवनम् ।

वानरानब्रवीद्रामो मुच्यतां दूत आगतः ॥ ३७

इति विंशः सर्गः ॥



एकविंशः सर्गः ॥

ततः सागरवेलायां दर्भान्नास्तीर्य राघवः ।

अञ्जलिं प्राङ्मुखः कृत्वा प्रतिशिश्ये महोदधिम् ॥ १

- बाहुं भुजगभोगाभमुपधायारिसूदनः ।
जातरूपमयैश्चैव भूषणैर्भूषितं पुरा ॥ २
- वरकाञ्चनकेयूरमुक्ताप्रवरभूषणैः ।
भुजैः परमनारीणामभिमृष्टमनेकधा ॥ ३
- चन्दनागरुमिश्रैव पुरस्तादधिवासितम् ।
बालसूर्यप्रतीकाशैश्चन्दनैरुपशोभितम् ॥ ४
- शयने चोत्तमाङ्गेन सीतायाः शोभितं पुरा ।
तक्षकस्येव संभोगं गङ्गाजलनिषेवितम् ॥ ५
- संयुगे युगसङ्काशं शत्रूणां शोकवर्धनम् ।
सुहृदानन्दनं दीर्घं सागरान्तव्यपाश्रयम् ॥ ६
- अस्यता च पुनः सव्यं ज्याघातविहृतत्वचम् ।
दक्षिणो दक्षिणं बाहुं महापरिघसन्निभम् ॥ ७
- गोसहस्रप्रदातारमुपधाय महद्भुजम् ।
अद्य मे मरणं वाऽथ तरणं सागरस्य वा ॥ ८
- इति रामो मतिं कृत्वा महाबाहुर्महोदधिम् ।
अधिशिष्ये च विधिवत् प्रयतो नियतो मुनिः ॥ ९

- तस्य रामस्य सुप्तस्य कुशास्तीर्णे महीतले ।
नियमादप्रमत्तस्य निशास्तिस्त्रोऽतिचक्रमुः ॥ १०
- स त्रिरात्रोषितस्तत्र नयज्ञो धर्मवत्सलः ।
उपासत तदा रामः सागरं सरितां पतिम् ॥ ११
- न च दर्शयते मन्दस्तदा रामस्य सागरः ।
प्रयतेनापि रामेण यथार्हमभिपूजितः ॥ १२
- समुद्रस्य ततः क्रुद्धो रामो रक्तान्तलोचनः ।
समीपस्थमुवाचेदं लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १३
- अवलेपः समुद्रस्य न दर्शयति यत्स्वयम् ।
प्रशमश्च क्षमा चैव आर्जवं प्रियवादिता ॥ १४
- असामर्थ्यं फलन्त्येते निर्गुणेषु सतां गुणाः ।
आत्मप्रशंसिनं दुष्टं धृष्टं विपरिधावकम् ॥ १५
- सर्वत्रोत्सृष्टदण्डं च लोकः सत्कुरुते नरम् ।
न साम्ना शक्यते कीर्तिर्न साम्ना शक्यते यशः ॥ १६
- प्राप्तुं लक्ष्मण लोकेऽस्मिञ्जयो वा रणमूर्धनि ।
अथ मद्भाणनिर्भिन्नैर्मकरैर्मकरालयम् ॥ १७

निरुद्धतोयं सौमित्ते प्लवङ्गिः पश्य सर्वतः ।

महाभोगानि मत्स्यानां करिणां च करानिह ॥ १८

भोगिनां पश्य नागानां मया छिन्नानि लक्ष्मण ।

सशङ्खशुक्तिकाजालं समीनमकरं शरैः ॥ १९

अद्य युद्धेन महता समुद्रं परिशोषये ।

क्षमया हि समायुक्तं मामयं मकरालयः ॥ २०

असमर्थं विजानाति धिक् क्षमामीदृशे जने ।

न दर्शयति साम्ना मे सागरो रूपमात्मनः ॥ २१

चापमानय सौमित्ते शरांश्चाशीविषोपमान् ।

सागरं शोषयिष्यामि पद्भ्यां यान्तु प्लवङ्गमाः ॥ २२

अद्याक्षोभ्यमपि क्रुद्धः क्षोभयिष्यामि सागरम् ।

वेलासु कृतमर्यादं सहस्रोर्भिसमाकुलम् ॥ २३

निर्मर्यादं करिष्यामि सायकैर्वरुणालयम् ।

महार्णवं क्षोभयिष्ये महादानवसंकुलम् ॥ २४

एवमुक्त्वा धनुष्पाणिः क्रोधविस्फारितेक्षणः ।

बभूव रामो दुर्धर्षो युगान्ताग्निरिव ज्वलन् ॥ २५

संपीड्य च धनुर्घोरं कम्पयित्वा शरैर्जगत् ।

मुमोच विशिखानुग्रान् वज्रानिव शतक्रतुः ॥ २६

ते ज्वलन्तो महावेगास्तेजसा सायकोत्तमाः ।

प्रविशन्ति समुद्रस्य सलिलं दृप्तपन्नगम् ॥ २७

ततो वेगः समुद्रस्य सनक्रमकरो महान् ।

संबभूव महाघोरः समारुतरवस्तदा ॥ २८

महोर्मिमालाविततः शङ्खशुक्तिसमावृतः ।

सधूमपरिवृत्तोर्मिः सहसाऽऽसीन्महोदधिः ॥ २९

व्यथिताः पन्नगाश्चासन् दीप्तास्या दीप्तलोचनाः ।

दानवाश्च महावीर्याः पातालतलवासिनः ॥ ३०

ऊर्मयः सिन्धुराजस्य सनक्रमकरास्तदा ।

विन्ध्यमन्दरसङ्काशाः समुत्पेतुः सहस्रशः ॥ ३१

आघूर्णिततरङ्गौघः संभ्रान्तोरगराक्षसः ।

उद्वर्तितमहाग्राहः संवृत्तः सलिलाशयः ॥ ३२

ततस्तु तं राघवमुग्रवेगं

प्रकर्षमाणं धनुरप्रमेयम् ।

सौमित्रिरुत्पत्य विनिश्चसन्तं

मा मेति चोक्त्वा धनुराललम्बे ॥

३३

एतद्विनाऽपि ह्युदधेस्तवाद्य

सम्पत्स्यते वीरतमस्य कार्यम् ।

भवद्विधाः कोपवशं न यान्ति

दीर्घं भवान् पश्यतु साधुवृत्तम् ॥

३४

अन्तर्हितैश्चैव तथान्तर्दिक्षे

ब्रह्मर्षिभिश्चैव सुरर्षिभिश्च ।

शब्दः कृतः कष्टमिति ब्रुवद्भिः

मा मेति चोक्त्वा महता स्वरेण ॥

३५

इति एकविंशः सर्गः ॥



द्वाविंशः सर्गः ॥

अथोवाच रघुश्रेष्ठः सागरं दारुणं वचः ।

अद्य त्वां शोषयिष्यामि सपातालं महार्णव ॥

१

शरनिर्दग्धतोयस्य परिशुष्कस्य सागर ।

मया शोषितसत्वस्य पांसुरुत्पद्यते महान् ॥

२

मत्कार्मुकविसृष्टेन शरवर्षेण सागर ।

पारं तेऽद्य गमिष्यन्ति पद्भिरेव प्लवङ्गमाः ॥ ३

विचिन्वन्नाभिजानासि पौरुषं नाऽपि विक्रमम् ।

दानवालयसन्तापं मत्तो नाधि गमिष्यसि ॥ ४

ब्राह्मेण।स्त्रेण संयोज्य ब्रह्मदण्डनिभं शरम् ।

संयोज्य धनुषि श्रेष्ठे विचकर्ष महाबलः ॥ ५

तस्मिन् विकृष्टे सहसा राघवेण शरासने ।

रोदसी संपफालेव पर्वताश्च चकम्पिरे ॥ ६

तमश्च लोकमावब्रे दिशश्च न चकाशिरे ।

प्रति चुक्षुभिरे चाशु सरांसि सरितस्तथा ॥ ७

तिर्यक्च सह नक्षत्रैः सङ्गतौ चन्द्रभास्करौ ।

तमसा सम्प्रति छन्नौ कृष्णेन महता तदा ॥ ८

भास्करांशुभिरादीप्तं तमसा च समावृतम् ।

प्रचकाशे तदाकाशमुल्काशतविदीपितम् ॥ ९

अन्तरिक्षाच्च निर्घाता निर्जग्मुरतुल्यनाः ।

प्रववुश्च पुनर्दिव्या दिवि मारुतपङ्क्तयः ॥ १०

बभञ्ज च तदा वृक्षाञ्जलदानुद्रहत्रपि ।

अरुजंश्चैव शैलाग्रान् शिखराणि प्रमञ्जनः ॥ ११

दिवि च स्म महामेघाः सङ्गताः समहाखनाः ।

मुमुचुर्बैद्युतानग्नीस्ते महाशनयस्तदा ॥ १२

यानि भूतानि दृश्यानि चुक्रुशुश्चाशनेः समम् ।

अदृश्यानि च भूतानि मुमुचुर्भैरवखनम् ॥ १३

शिश्न्येरे चापि भूतानि सन्प्रस्तान्युद्विजन्ति च ।

सम्प्रविव्यथिरे चापि न च पस्पन्दिरे भयात् ॥ १४

सह भूतैः सतोयोर्मिः सनागः सह राक्षसः ।

सहसाऽभूत्ततो वेगाद्धीमवेगो महोदधिः ॥ १५

योजनं व्यतिचक्राम वेलामन्यत्र संप्लवात् ।

तं तदा समतिक्रान्तं नातिचक्राम राघवः ॥

समुद्धतमपितप्तो रामो नदनदीपतिम् ॥ १६

ततो मध्यात्समुद्रस्य सागरः स्वयमुत्थितः ।

उदयन्द्मि महाशैलान्मेरोरिव दिवाकरः ॥ १७

पन्नगैः सह दीप्ताभ्यैः समुद्रः प्रत्यदृश्यत ।

स्निग्धवैडूर्यसङ्काशो जाम्बूनदविभूषितः ॥ १८

रक्तमाल्याम्बरधरः पद्मपत्रनिभेक्षणः ।

सर्वपुष्पमयीं दिव्यां शिरसा धारयन्स्रजम् ॥ १९

जातरूपमयैश्चैव तपनीयविभूषितैः ।

आत्मजानां च रत्नानां भूषितो भूषणोत्तमैः ॥ २०

धातुभिर्मण्डितः शैलो विविधैर्हिमवानिव ॥ २१

एकावलीमध्यगतं तरलं पाटलप्रभम् ।

विपुलेनोरसा बिभ्रत् कौस्तुभस्य सहोदरम् ॥ २२

आघूर्णिततरङ्गौघः कालिकानिलसंकुलः ।

उद्धर्तितमहाग्राहः संभ्रान्तोरगराक्षसः ॥ २३

देवतानां सरूपाभिर्नानारूपाभिरीश्वरः ।

गङ्गासिन्धुप्रधानाभिरापगाभिः समावृतः ॥ २४

सागरः समुपक्रम्य पूर्वमामन्व्य वीर्यवान् ।

अब्रवीत्प्राञ्जलिर्वाक्यं राघवं शरपाणिनम् ॥ २५

पृथिवी वायुराकाशमापो ज्योतिश्च राघव ।

स्वभावे सौम्य तिष्ठन्ति शाश्वतं मार्गमाश्रिताः ॥ २६

तत्स्वभावो ममाप्येष यदगाधोऽहमप्लवः ।

विकारस्तु भवेद्गाध एतत्ते प्रवदाम्यहम् ॥ २७

न कामान्न च लोभाद्वा न भयात्पार्थिवात्मज ।

ग्राहनक्राकुलजलं स्तम्भयेयं कथञ्चन ॥ २८

विधास्ये राम येनापि विषहिष्ये ह्यहं तथा ।

ग्राहा न प्रहरिष्यन्ति यावत्सेना तरिष्यति ॥

हरीणां तरणे राम करिष्यामि यथा स्थलम् ॥ २९

तमब्रवीत्तदा राम उद्यतो हि नदीपते ।

अमोघोऽयं महाबाणः कस्मिन्देशे निपात्यताम् ॥ ३०

रामस्य वचनं श्रुत्वा तं च दृष्ट्वा महाशरम् ।

महोदधिर्महातेजा राघवं वाक्यमब्रवीत् ॥ ३१

उत्तरेणावकाशोऽस्ति कश्चित्पुण्यतमो मम ।

द्रुमकुल्य इति ख्यातो लोके ख्यातो यथा भवान् ॥ ३२

उग्रदर्शनकर्माणो बहवस्तत्र दस्यवः ।

आभीरप्रमुखाः पापाः पिबन्ति सलिलं मम ॥ ३३

तैर्न संस्पर्शनं पापैः सहेयं पापकर्मभिः ।

अमोघः क्रियतां राम ह्ययं तत्र शरोत्तमः ॥ ३४

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा सागरस्य स राघवः ।

मुमोच तं शरं दीप्तं वीरः सागरदर्शनात् ॥ ३५

तेन तन्मरुकान्तारं पृथिव्यां खलु विश्रुतम् ।

निपातितः शरो यत्र दीप्ताशनिसमप्रभः ॥ ३६

ननाद च तदा तत्र वसुधा शल्यपीडिता ।

तस्माद्द्रवणमुखात्तोयमुत्पपात रसातलात् ॥ ३७

स बभूव तदा कूपो व्यण इत्यभिविश्रुतः ॥

सततं चोत्थितं तोयं समुद्रस्येव दृश्यते । ३८

अवदारणशब्दश्च दारुणः समपद्यत ।

तस्मात्तद्वाणपातेन त्वपः कुक्षिष्वशोषयत् ॥ ३९

विख्यातं लिषु लोकेषु मरुकान्तारमेव तत् ॥ ४०

शोषयित्वा ततः कुक्षिं रामो दशरथात्मजः ।

वरं तस्मै ददौ विद्वान् मरवेऽमरविक्रमः ॥ ४१

पशव्यश्चाल्परोगश्च फलमूलरसायुतः ।

बहुस्नेहो बहुक्षीरसुगन्धिर्विविधौषधः ॥ ४२

एवमेतैर्गुणैर्युक्तो बहुभिः सततं मरुः ।

रामस्य वरदानाञ्च शिवः पन्था बभूव ह ॥ ४३

तस्मिन्दग्धे तदा कुक्षौ समुद्रः सरितां पतिः ।

राघवं सर्वशास्त्रज्ञमिदं वचनमब्रवीत् ॥ ४४

अयं सौम्य नलो नाम तनुजो विश्वकर्मणः ।
पित्रा दत्तवरः श्रीमान् प्रतिमो विश्वकर्मणा ॥ ४५

एष सेतुं महोत्साहः करोतु मयि वानरः ।
तमहं धारयिष्यामि यथा ह्येष पिता तथा ॥ ४६

एवमुक्त्वोदधिर्नष्टः समुत्थाय नलस्तदा ।
अब्रवीद्वानरश्रेष्ठो वाक्यं रामं महाबलः ॥ ४७

अहं सेतुं करिष्यामि विस्तीर्णं वरुणालये ।
पितुः सामर्थ्यमास्थाय तत्त्वमाह महोदधिः ॥ ४८

दण्ड एव परो लोके पुरुषस्येति मे मतिः ।
धिकं क्षमामकृतज्ञेषु सान्त्वं दानमथापि वा ॥ ४९

अयं हि सागरो भीमः सेतुकर्मदिदृक्षया ।
ददौ दण्डभयाद्बाधं राघवाय महोदधिः ॥ ५०

मम मातुर्वरो दत्तो मन्दरे विश्वकर्मणा ।
औरसस्तस्य पुत्रोऽहं सदृशो विश्वकर्मणा ॥
न चाप्यहमनुक्तो वै प्रब्रूयामात्मनो गुणान् ॥ ५१

समर्थश्चाप्यहं सेतुं कर्तुं वै वरुणालये ।
काममद्यैव बध्नन्तु सेतुं वानरपुङ्गवाः ॥ ५२

ततो विसृष्टा रामेण सर्वतो हरियूथपाः ।

अभिपेतुर्महारण्यं हृष्टाः शतसहस्रशः ॥

५३

ते नगान्नगसङ्काशाः शाखामृगगणर्षभाः ।

बभञ्जुर्वानरास्तत्र प्रचकर्षुश्च सागरम् ॥

५४

ते सालैश्चाश्वकर्णैश्च धवैर्वशैश्च वानराः ।

कुटजैर्जुनैस्तालैस्तिलकैस्तिमिशैरपि ॥

५५

बिल्वकैः सप्तपर्णैश्च कर्णिकारैश्च पुष्पितैः ।

चूतैश्चाशोकवृक्षैश्च सागरं समपूरयन् ॥

५६

समूलांश्च विमूलांश्च पादपान् हरिसत्तमाः ।

इन्द्रकेतूनिबोद्यम्य प्रजहुर्हरयस्तरुन् ॥

५७

तालान्दाडिमगुल्मांश्च नारिकेलान्विभीतकान् ।

बकुलान् खदिरान्निम्बान् समाजहुरितस्ततः ॥

५८

हस्तिमात्रान्महाकायाः पाषाणांश्च महाबलाः ।

पर्वतांश्च समुत्पाद्य यन्त्रैः परिवहन्ति च ॥

५९

प्रक्षिप्यमाणैरचलैः सहसा जलमुद्धतम् ।

समुत्पतितमाकाशमुपासर्पत्ततस्ततः ॥

६०

आप्लवन्तः प्लवन्तश्च गर्जन्तश्च प्लवङ्गमाः ।
समुद्रं क्षोभयामासुर्वानराश्च समन्ततः ॥
सूत्राण्यन्ये प्रगृह्णन्ति ह्यायतं शतयोजनम् ॥ ६१

नलश्चक्रे महासेतुं मध्ये नदनदीपतेः ।
स तथा क्रियते सेतुर्वानरैः शीघ्रकारिभिः ।
दण्डानन्ये प्रगृह्णन्ति विचिन्वन्ति तथा परे ॥ ६२

वानराः शतशस्तत्र रामस्याज्ञापुरःसराः ।
मेघाभैः पर्वताभैश्च तृणैः काष्ठैर्बन्धिरे ॥
पुष्पिपताग्रैश्च तरुभिः सेतुं बध्नन्ति वानराः ॥ ६३

पाषाणांश्च गिरिप्रख्यान् गिरीणां शिखराणि च ।
दृश्यन्ते परिधावन्तो गृह्य वारणसन्निभाः ॥ ६४

शिलानां क्षिप्यमाणानां शैलानां तत्र पात्यताम् ।
बभूव तुमुलः शब्दस्तदा तस्मिन्महोदधौ ॥ ६५

सहेलं हनुमाञ्जैलं यं यं विपुलमाक्षिपत् ।
तं तं करेण वामेन सलीलं जगृहे नलः ॥ ६६

कृतानि प्रथमेनाह्वा योजनानि चतुर्दश ।
प्रहृष्टैर्गजसङ्काशैस्त्वरमाणैः प्लवङ्गमैः ॥ ६७

द्वितीयेन तथा च ह्य योजनानि तु विंशतिः ।

कृतानि प्लवगैस्तूर्णं भीमकायैर्महाबलैः ॥

६८

अह्य तृतीयेन तथा योजनानि कृतानि तु ।

त्वरमाणैर्महाकायैरेकविंशतिरेव च ॥

६९

चतुर्थेन तथा च ह्य द्वाविंशतिरथापि च ।

योजनानि महावेगैः कृतानि त्वरितैस्तु तैः ॥

७०

पञ्चमेन तथा च ह्य प्लवगैः क्षिप्रकरिभिः ।

योजनानि त्रयोविंशत् सुबेलमधिकृत्य वै ॥

७१

स बानरवरः श्रीमान् विश्वकर्मात्मजो बली ।

बबन्ध सागरे सेतुं यथा चास्य पिता तथा ॥

७२

स नलेन कृतः सेतुः सागरे मकरालये ।

शुशुभे सुभगः श्रीमान् स्वातीपथ इवाम्बरे ॥

७३

ततो देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ।

आगम्य गगने तस्थुर्द्रष्टुकामास्तदद्भुतम् ॥

७४

दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम् ।

ददृशुर्देवगन्धर्वा नल सेतुं सुदुष्करम् ॥

७५

तदचिन्त्यमसह्यं च अद्भुतं रोमहर्षणम् ।
ददृशुः सर्वभूतानि सागरे सेतुबन्धनम् ॥ ७६

तानि कोटिसहस्राणि वानराणां महौजसाम् ।
बध्नन्तः सागरे सेतुं जग्मुः पारं महोदधेः ॥ ७७

विशालः सुकृतः श्रीमान् सुभूमिः सुसमाहितः ।
अशोभत महान्सेतुः सीमन्त इव सागरे ॥ ७८

ततः पारे समुद्रस्य गदापाणिर्विभीषणः ।
परेषामभिघातार्थमतिष्ठत्सचिवैः सह ॥ ७९

सुग्रीवस्तु ततः प्राह रामं सत्यपराक्रमम् ।
हनुमन्तं त्वमारोह ह्यङ्गदं चापि लक्ष्मणः ॥ ८०

अयं हि विपुलो वीर सागरो मकरालयः ।
वैहायसौ युवामेतौ वानरौ तारयिष्यतः ॥ ८१

अग्रतस्तस्य सैन्यस्य श्रीमान् रामः सलक्ष्मणः ।
जगाम धन्वी धर्मात्मा सुग्रीवेण समन्वितः ॥ ८२

अन्ये मध्येन गच्छन्ति पार्श्वतोऽन्ये प्लवङ्गमाः ।
सलिले प्रपतन्त्यन्ये मार्गमन्ये न लेभिरे ॥ ८३

केचिद्वैहायसगताः सुपर्णा इव पुण्ड्रवुः ॥ ८४

घोषेण महता घोषं सागरस्य समुच्छ्रितम् ।
भीममन्तर्दधे भीमा तरन्ती हरिवाहिनी ॥ ८५

वानराणां तु सा तीर्णा वाहिनी नलसेतुना ।
तीरे निविविशे रम्ये बहुमूलफलोदके ॥ ८६

तदद्भुतं राघवकर्म दुष्करं
समीक्ष्य देवाः सह सिद्धचारणैः !
उपेत्य रामं सहिता महर्षिभिः
समभ्यविञ्चन् सुशुभैर्जलैः पृथक् ॥ ८७

जयस्व शत्रून् नरदेव मेदिनीं
ससागरां पालय श्लाघ्यतीः समाः ।
इतीव रामं नरदेवसत्कृतं
शुभैर्वचोभिर्विविधैरपूजयन् ॥ ८८

इति द्वाविंशः सर्गः ॥



तयोविंशः सर्गः ॥

निमित्तानि निमित्तज्ञो दृष्ट्वा लक्ष्मणपूर्वजः ।
सौमित्रिं संपरिष्वज्य इदं वचनमब्रवीत् ॥ १

परिगृह्योदकं शीतं वनानि फलवन्ति च ।
बलौघं संविभज्येमं व्यूह्य तिष्ठेम लक्ष्मण ॥ २

लोकक्षयकरं भीमं भयं पश्याम्युपस्थितम् ।
निबर्हणं प्रवीराणामृक्षवानररक्षसाम् ॥ ३

वाताश्च कलुषा वान्ति कम्पते च वसुन्धरा ।
पर्वताग्राणि वेपन्ते पतन्ति च महीरुहाः ॥ ४

मेघाः क्रव्यादसङ्काशाः परुषाः परुषस्वनाः ।
क्रूराः क्रूरं प्रवर्षन्ति मिश्रं शोणितबिन्दुभिः ॥ ५

रक्तचन्दनसङ्काशा सन्ध्या परमदारुणा ।
ज्वलतः प्रपतत्येतदादित्यादग्निमण्डलम् ॥ ६

दीना दीनहाराः क्रूराः सर्वतो मृगपक्षिणः ।
प्रत्यादित्यं विनर्दन्ति जनयन्तो महद्भयम् ॥ ७

रजन्यामप्रकाशस्तु सन्तापयति चन्द्रमाः ।

कृष्णरक्तांशुष्यन्तो लोकक्षय इवोदितः ॥

ह्रस्वो रूक्षोऽप्रशस्तश्च परिवेषः सुलोहितः ।

आदित्ये विमले नीलं लक्ष्म लक्ष्मण दृश्यते ॥ ९

रजसा महता चापि नक्षत्राणि हतानि च ।

युगान्तमिव लोकानां पश्य शंसन्ति लक्ष्मण ॥ १०

काकाः श्येनास्तथा गृध्राः नीचैः परिपतन्ति च ।

शिवाश्चाप्यशिवान्नादान् नदन्ति सुमहाभयान् ॥ ११

शैलैः शूलैश्च खड्गैश्च विसृष्टैः कपिराक्षसैः ।

भविष्यत्यावृता भूमिर्मांसशोणितकर्दमा ॥ १२

क्षिप्रमद्यैव दुर्धर्षा पुरीं रावणपालिताम् ।

अभियाम जवेनैव सर्वतो हरिभिर्वृताः ॥ १३

इत्येवमुक्त्वा धर्मात्मा धन्वी संग्रामहर्षणः ।

प्रतस्थे पुरतो रामो लङ्कामभिमुखो विभुः ॥ १४

सविभीषणसुग्रीवास्ततस्ते वानरर्षभाः ।

प्रतस्थिरे विनर्दन्तो निश्चिता द्विषतां वधे ॥ १५

राघवस्य प्रियार्थं तु धृतानां वीर्यशालिनाम् ।

हरीणां कर्मचेष्टाभिस्तुतोष रघुनन्दनः ॥

१६

इति त्रयोविंशः सर्गः ॥



चतुर्विंशः सर्गः ॥

सा वीरसमिती राज्ञा विरराज व्यवस्थिता ।

शशिना शुभनक्षत्रा पौर्णमासीव शारदी ॥

१

प्रचचाल च वेगेन त्रस्ता चैव वसुन्धरा ।

पीड्यमाना बलौघेन तेन सागरवर्चसा ॥

२

ततः शुश्रुवुराकुष्टं लङ्कायां काननौकसः ।

मेरीमृदङ्गसंघुष्टं तुमुलं रोमहर्षणम् ॥

३

बभूवुस्तेन घोषेण संहृष्टा हरियूथपाः ।

अमृष्यमाणस्तं घोषं विनेदुर्घोषवत्तरम् ॥

४

राक्षसास्तु प्लवङ्गानां शुश्रुवुस्तेऽपि गर्जितम् ।

नर्दतामिव दृप्तानां मेघानामम्बरे स्वनम् ॥

५

दृष्ट्वा दाशरथिर्लङ्कां चित्रध्वजपताकिनीम् ।
जगाम मनसा सीतां दूयमानेन चेतसा ॥

अत्र सा मृगशाबाक्षी रावणेनोपरुध्यते ।
अभिभूता ग्रहेणेव लोहिताङ्गेन रोहिणी ॥

दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य समुद्रीक्ष्य च लक्ष्मणम् ।
उवाच वचनं वीरस्तरकालहितमात्मनः ॥

आलिखन्तीमिवाकाशमुत्थितां पश्य लक्ष्मण ।
मनसेव कृतां लङ्कां नगाग्रे विश्वकर्मणा ॥

विमानैर्वहुमिर्लङ्का सङ्कीर्णा भुवि राजते ।
विष्णोः पदमिवाकाशं छादितं पाण्डुरैर्धनैः ॥ १०

पुष्पितैः शोभिता लङ्का वनैश्चैत्ररथोपमैः ।
नानापतगसंघुष्टैः फलपुष्पोपगैः शुभैः ॥ ११

पश्य मत्तविहङ्गानि प्रलीनभ्रमराणि च ।
कोकिलाकुलषण्डानि दोधवीति शिवोऽनिलः ॥ १२

इति दाशरथी रामो लक्ष्मणं समभाषत ।
बलं च तद्वै विभज्यस्वास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥ १३

शशास कपिसेनां तां बलमादाय वीर्यवान् ।

अङ्गदः सह नीलेन तिष्ठेदुरसि दुर्जयः ॥ १४

तिष्ठेद्वानरवाहिन्या वानरौघसमावृतः ।

आश्रितो दक्षिणं पार्श्वमृषभो वानरर्षभः ॥ १५

गन्धहस्तीव दुर्धर्षस्तरस्वी गन्धमादनः ।

तिष्ठेद्वानरवाहिन्याः सव्यं पार्श्वमधिष्ठितः ॥

मूर्ध्नि स्थास्याम्यहं यत्तो लक्ष्मणेन समन्वितः ॥ १६

जाम्बवांश्च सुप्रेणश्च वेगदर्शी च वानरः ।

ऋक्षमुख्या महात्मानः कुक्षिं रक्षन्तु ते त्रयः ॥ १७

जघनं कपिसेनायाः कपिराजोऽभिरक्षतु ।

पश्चार्धमिव लोकस्य प्रचेतास्तेजसा वृतः ॥ १८

सुविभक्तमहाव्यूहा महावानररक्षिता ।

अनीकिनी सा विवभौ यथा द्यौः साभ्रसंप्लवा ॥ १९

प्रगृह्य गिरिशृङ्गाणि महतश्च महीरुद्रान् ।

आसेदुर्वानरा लङ्कां विपदयिष्वत्रो रणे ॥ २०

शिखरैर्विक्रामैनां लङ्कां मुष्टिभिरेव वा ।

इति स्म दधिरे सर्वे मनांसि हरिसत्तमाः ॥ २१

ततो रामो महातेजाः सुग्रीवमिदमब्रवीत् ।

सुविभक्तानि सैन्यानि शुक एष विमुच्यताम् ॥ २५

रामस्य वचनं श्रुत्वा वानरेन्द्रो महाबलः ।

मोचयामास तं दूतं शुकं रामस्य शासनात् ॥ २६

मोचितो रामवाक्येन वानरैश्च निपीडितः ।

शुकः परमसन्तप्तो रक्षोऽधिपमुपागमत् ॥ २७

रावणः प्रहसन्नेव शुकं वाक्यमुवाच ह ॥

किमिमौ ते सितौ पक्षौ लूनपक्षश्च दृश्यसे ।

कच्चिन्नानेकचित्तानां तेषां त्वं वशमागतः ॥ २८

ततः स भयसंविग्नस्तथा राज्ञाभिचोदितः ।

वचनं प्रत्युवाचेदं राक्षसाधिपमुत्तमम् ॥ २९

सागरस्योत्तरे तीरेऽब्रुवं ते वचनं तथा ।

यथासन्देशमक्लिष्टं सान्त्वयञ्छ्रद्धया गिरा ॥ ३०

क्रुद्धैस्तैरहमुत्प्लुत्य दृष्टमात्रैः प्लवङ्गमैः ।

गृहीतोऽस्म्यपि चारब्धो हन्तुं लोप्तुं च मुष्टिभिः ॥

नैव संभाषितुं शक्याः संप्रश्नोऽत्र न लभ्यते ।

प्रकृत्या कोपनास्तीक्ष्णा वानरा राक्षसाधिप ॥ ३१

स च हन्ता विराधस्य कबन्धस्य खरस्य च ।
सुग्रीवसहितो रामः सीतायाः पदमागतः ॥ ३०

स कृत्वा सागरे सेतुं तीर्त्वा च लवणोदधिम् ।
एष रक्षांसि निर्धूय धन्वी तिष्ठति राघवः ॥ ३१

ऋक्षवानरसङ्घानामनीकानि सहस्रशः ।
गिरिमेघनिकाशानां छादयन्ति वसुन्धराम् ॥ ३२

राक्षसानां बलौघस्य वानरेन्द्रबलस्य च ।
नैतयोर्विद्यते सन्धिर्देवदानवयोरिव ॥ ३३

पुरा प्राकारमायान्ति क्षिप्रमेकतरं कुरु ।
सीतां वास्मै प्रयच्छाशु सुयुद्धं वा प्रदीयताम् ॥ ३४

शुकस्य वचनं श्रुत्वा रावणो वाक्यमब्रवीत् ।
रोषसंरक्तनयनो निर्दहन्निव चक्षुषा ॥ ३५

यदि मां प्रतियुद्धेरन् देवगन्धर्वदानवाः ।
नैव सीतां प्रदास्यामि सर्वलोकभयादपि ॥ ३६

कदा समभिधावन्ति राघवं मामकाः शराः ।
वसन्ते पुष्पितं मत्ता भ्रमरा इव पादपम् ॥ ३७

कदा तूणीशयैर्दोषैर्गणशः कार्मुकच्युतैः ।

शरैरादीपयाम्येनमुल्काभिरिव कुञ्जरम् ॥

३८

तच्चास्य बलमादास्ये बलेन महता वृतः ।

ज्योतिषामिव सर्वेषां प्रभामुद्यन्दिवाकरः ॥

३९

सागरस्येव मे वेगो मारुतस्येव मे गतिः ।

न हि दाशरथिर्वेद तेन मां योद्धुमिच्छति ॥

४०

न मे तूणीशयान्वाणान् सविषानिव पन्नगान् ।

रामः पश्यति संग्रामे तेन मां योद्धुमिच्छति ॥

न जानाति पुरा वीर्यं मम युद्धे स राघवः ॥

४१

मम चापमयीं वीणां शरकोणैः प्रवादिताम् ।

ज्याशब्दतुमुलां घोरामार्तभीतमहास्वनाम् ॥

४२

नाराचतलसन्नादां तां ममाहितवाहिनीम् ।

अवगाह्य महारङ्गं वादयिष्याम्यहं रणे ॥

४३

न वासवेनापि सहस्रचक्षुषा

युधाऽस्मि शक्यो वरुणेन वा पुनः ।

यमेन वा धर्षयितुं शरान्निना

महाहवे वैश्रवणेन वा पुनः ॥

४४

इति चतुर्विंशः सर्गः ॥



पञ्चविंशः सर्गः ॥

- सबले सागरं तीर्णे रामे दशरथात्मजे ।
अमात्यौ रावणः श्रीमानब्रवीच्छुकसारणौ । १
- समग्रं सागरं तीर्णे दुस्तरं वानरं बलम् ।
अभूतपूर्वं रामेण सागरे सेतुबन्धनम् ॥ २
- सागरे सेतुबन्धं तत्र श्रद्दध्यां कथञ्चन ।
अवश्यं चापि संख्येयं तन्मया वानरं बलम् ॥ ३
- भवन्तौ वानरं सैन्यं प्रविश्यानुपलक्षितौ ।
परिमाणं च वीर्यं च ये च मुख्याः प्लवङ्गमाः ॥ ४
- मन्त्रिणो ये च रामस्य सुग्रीवस्य च सम्मताः ।
ये पूर्वमभिवर्तन्ते ये च शूराः प्लवङ्गमाः ॥ ५
- स च सेतुर्यथा बद्धः सागरे सलिलार्णवे ।
निवेशं च यथा तेषां वानराणां महात्मनाम् ॥ ६
- रामस्य व्यवसायं च वीर्यं प्रहरणानि च ।
लक्ष्मणस्य च वीरस्य तत्त्वतो ज्ञातुमर्हथः ॥ ७

कश्च सेनापतिस्तेषां वानराणां महौजसाम् ।

एतज्ज्ञात्वा यथातत्त्वं शीघ्रमागन्तुमर्हथः ॥ ८

इति प्रतिसमादिष्टौ राक्षसौ शुकसारणौ ।

हरिरूपधरौ वीरौ प्रविष्टौ वानरं बलम् ॥ ९

ततस्तद्वानरं सैन्यमचिन्त्यं रोमहर्षणम् ।

संख्यातुं नाध्यगच्छेतां तदा तौ शुकसारणौ ॥ १०

संस्थितं पर्वताग्रेषु निर्दरेषु गुहासु च ।

समुद्रस्य च तीरेषु वनेष्वनेषु च ॥ ११

तरमाणं च तीर्णं च तर्तुकामं च सर्वशः ।

निविष्टं निविशच्चैव भीमनादं महाबलम् ॥

तद्वलार्णवमक्षोभ्यं ददृशाते निशाचरौ ॥ १२

तौ ददर्श महातेजाः प्रच्छन्नौ च विभीषणः ।

आचचक्षेऽथ रामाय गृहीत्वा शुकसारणौ ॥ १३

तस्येमौ राक्षसेन्द्रस्य मन्त्रिणौ शुकसारणौ ।

लङ्कायाः समनुप्राप्तौ चारौ परपुरञ्जय ॥ १४

तौ दृष्ट्वा व्यथितौ रामं निराशौ जीविते तदा ।

कृताञ्जलिपुटौ भीतौ वचनं चेदमूचतुः ॥ १५

आवामिहागतौ सौम्य रावणप्रहितावुभौ ।

परिज्ञातुं बलं कृत्स्नं तवेदं रघुनन्दन ॥ १६

तयोस्तद्वचनं श्रुत्वा रामो दशरथात्मजः ।

अब्रवीत्प्रहसन्वाक्यं सर्वभूतहिते रतः ॥ १७

यदि दृष्टं बलं कृत्स्नं वयं वा सुपरीक्षिताः ।

यथोक्तं वा कृतं कार्यं छन्दतः प्रतिगम्यताम् ॥ १८

अथ किञ्चिददृष्टं वा भूयस्तद्द्रष्टुमर्हथः ।

विभीषणो वा कात्स्नर्येन भूयः सन्दर्शयिष्यति ॥ १९

न चेदं ग्रहणं प्राप्य भेतव्यं जीवितं प्रति ।

न्यस्तशस्त्रौ गृहीतौ वा न दूतौ वधमर्हथः ॥ २०

पृच्छमानौ विमुञ्चैतौ चारौ रालिञ्चरावुभौ ।

शत्रुपक्षस्य सततं विभीषणविकर्षणौ ॥ २१

प्रविश्य नगरीं लङ्कां भवद्भ्यां धनदानुजः ।

वक्तव्यो रक्षसां राजा यथोक्तं वचनं मम ॥ २२

यद्वलं च समाश्रित्य सीतां मे हतवानसि ।

तद्दर्शय यथाकामं ससैन्यः सहबान्धवः ॥ २३

श्वः काले नगरीं लङ्कां सप्राकारां सतोरणाम् ।

राक्षसं च बलं पश्य शरैर्विध्वंसितं मया ॥ २४

घोरं रोषमहं मोक्षये बलं धारय रावण ।

श्वः काले वज्रवान्वज्रं दानवेष्विव वासवः ॥ २५

इति प्रतिसमादिष्टौ राक्षसौ शुकसारणौ ।

जयेति प्रतिनन्द्यैतौ राघवं धर्मवत्सलम् ॥ २६

आगम्य नगरीं लङ्कामब्रूतां राक्षसाधिपम् ॥

२७

विभीषणगृहीतौ तु वधादौ राक्षसेश्वर ।

दृष्ट्वा धर्मात्मना मुक्तौ रामेणामिततेजसा ॥ २८

एकस्थानगता यत्र चत्वारः पुरुषर्षभाः ।

लोकपालोपमाः शूराः कृतास्त्रा दृढविक्रमाः ॥ २९

रामो दाशरथिः श्रीमानलक्ष्मणश्च विभीषणः ।

सुग्रीवश्च महातेजा महेन्द्रसमविक्रमः ॥ ३०

एते शक्ताः पुरीं लङ्कां सप्राकारां सतोरणाम् ।

उत्पात्य संक्रामयितुं सर्वे तिष्ठन्तु वानराः ॥ ३१

यादृशं तस्य रामस्य रूपं प्रहरणानि च ।

वधिष्यति पुरीं लङ्कामेकस्तिष्ठन्तु ते त्रयः ॥ ३२

रामलक्ष्मणगुप्ता सा सुग्रीवेण च वाहिनी ।
 बभूव दुर्धर्षतरा सर्वैरपि सुरासुरैः ॥ ३३
 व्यक्तः सेतुस्तथा बद्धो दशयोजनविस्तृतः ।
 शतयोजनमायामस्तीर्णा सेना च सागरम् ॥ ३४
 निविष्टो दक्षिणे तीरे रामः स च नदीपतेः ।
 तीर्णस्य तरमाणस्य बलस्यान्तो न विद्यते ॥ ३५

प्रहृष्टरूपा ध्वजिनी वनौकसां
 महात्मनां सम्प्रति योद्धुमिच्छताम् ।
 अलं विरोधेन शमो विधीयतां
 प्रदीयतां दाशरथाय मैथिली ॥ ३६

इति षड्विंशः सर्गः ॥



षड्विंशः सर्गः ॥

तद्वचः पथ्यमक्लीबं सारणेनाभिभाषितम् ।
 निशम्य रावणो राजा प्रत्यभाषत सारथम् ॥ १
 यदि मामभियुञ्जीरन् देवगन्धर्वदानवाः ।
 नैव सीतां प्रदास्यामि सर्वलोकभयादपि ॥ २

त्वं तु सौम्य परित्रस्तो हरिभिस्तर्जितो भृशम् ।
प्रतिप्रदानमद्यैव सीतायाः साधु मन्यसे ॥ ३

को हि नाम सपत्नो मां समरे जेतुमर्हति ।
इत्युक्त्वा परुषं वाक्यं रावणो राक्षसाधिपः ॥ ४

आरुरोह ततः श्रीमान् प्रासादं हिमपाण्डरम् ।
बहुतालसमुत्सेधं रावणोऽथ दिदृक्षया ॥ ५

ताभ्यां चराभ्यां सहितो रावणः क्रोधमूर्च्छितः ।
पश्यमानः समुद्रं च पर्वतांश्च वनानि च ॥
ददर्श पृथिवीदेशं सुसंपूर्णं लवङ्गमैः ॥ ६

तदपारमसङ्ख्येयं वानराणां महद्बलम् ।
आलोक्य रावणो राजा परिपप्रच्छ सारणम् ॥ ७

एषां वानरमुख्यानां के शूराः के महाबलाः ।
के पूर्वमभिवर्तन्ते महोत्साहाः समन्ततः ॥ ८

केषां शृणोति सुग्रीवः के वा यूथपयूथपाः ।
सारणाचक्ष्व मे सर्वं के प्रधानाः लवङ्गमाः ॥ ९

सारणो राक्षसेन्द्रस्य वचनं परिपृच्छतः ।
आचक्ष्वेऽथ मुख्यज्ञो मुख्यांस्तत्र वनौकसः ॥ १०

- एष योऽभिमुखो लङ्कां नर्दस्तिष्ठति वानरः ।
यूथपानां सहस्राणां शतेन परिवारितः ॥ ११
- यस्य बोधेण महता सपाकारा सतोरणा ।
लङ्का प्रवेपते सर्वा सशैलवनकानना ॥ १२
- सर्वशाखामृगेन्द्रस्य सुग्रीवस्य महात्मनः ।
बलाग्रे तिष्ठते वीरो नीलो नामैष यूथपः ॥ १३
- बाहू प्रगृह्य यः पद्भ्यां महीं गच्छति वीर्यवान् ।
लङ्कामभिमुखः कोपादभीक्षणं च विजृम्भते ॥ १४
- गिरिशृङ्गप्रतीकाशः पद्मकिञ्जल्कसन्निभः ।
स्फोटयत्यभिसंरब्धो लाङ्गूलं च पुनः पुनः ॥
यस्य लाङ्गूलशब्देन खनन्ति प्रदिशो दश ॥ १५
- एष वानरराजेन सुग्रीवेणामिषेचितः ।
यौवराज्येऽङ्गदो नाम त्वामाह्वयति संयुगे ॥ १६
- वालिनः सदृशः पुत्रः सुग्रीवस्य सदा प्रियः ।
राघवार्थे पराक्रान्तः शक्रार्थे वरुणो यथा ॥ १७
- एतस्य सा मतिः पूर्वा यद्दृष्ट्वा जनकात्मजा ।
हनुमता वेगवता राघवस्य हितैषिणा ॥ १८

बहूनि वानरेन्द्राणामेष यूथानि वीर्यवान् ।
परिगृह्याभियाति त्वां स्वेनानीकेन दुर्जयः ॥ १९

अनु वालिसुतस्यापि बलेन महता वृतः ।
वीरस्तिष्ठति संग्रामे सेतुहेतुरयं नलः ॥ २०

ये तु विष्टभ्य गात्राणि क्ष्वेलयन्ति नदन्ति च ।
उत्थाय च विजृम्भन्ते क्रोधेन हरिपुङ्गवाः ॥ २१

एते दुष्प्रसहा घोराश्चण्डाश्चण्डपराक्रमाः ।
अष्टौ शतसहस्राणि दशकोटिशतानि च ॥ २२

य एनमनुगच्छन्ति धीराश्चन्दनवासिनः ।
एषैवाशंसते लङ्कां स्वेनानीकेन मर्दितुम् ॥ २३

श्वेतो रजतसङ्काशश्चपलो भीमविक्रमः ।
बुद्धिमान्वानरो वीरस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ॥ २४

तूर्णं सुग्रीवमागम्य पुनर्गच्छति वानरः ।
विभजन्वानरीं सेनामनीकानि प्रहर्षयन् ॥ २५

यः पुरा गोमतीतीरे रम्यं पर्येति पर्वतम् ।
नाम्ना सङ्कोचको नाम नानानगयुतो गिरिः ॥ २६

तत्र राक्ष्यं प्रशास्त्येषः कुमुदो नाम यूथपः ।

योऽसौ शतसहस्राणां सहस्रं परिकर्षति ॥ २७

यस्य बाला बहुव्यामा दीर्घा लाङ्गूलमाश्रिताः ।

ताम्राः पीताः सिताः श्वेताः प्रकीर्णा घोरकर्मणः ॥ २८

अदीनो रोषणश्चण्डः संग्राममभिकाङ्क्षति ।

एषैवाशंसते लङ्कां स्वेनानीकेन मर्दितुम् ॥ २९

यस्त्वेष सिंहसङ्काशः कपिलो दीर्घकेसरः ।

निभृतः प्रेक्षते लङ्कां दिधक्षन्निव चक्षुषा ॥ ३०

विन्ध्यं कृष्णगिरिं सद्यं पर्वतं च सुदर्शनम् ।

राजन् सततमध्यास्ते रम्भो नामैष यूथपः ॥ ३१

शतं शतसहस्राणां लिङ्गं हरीयूथपाः ।

यमेते वानराः शूराश्चण्डाश्चण्डपराक्रमाः ॥

परिवार्यानुगच्छन्ति लङ्कां मर्दितुमोजसा ॥ ३२

यन्तु कर्णौ विवृणुते जृम्भते च पुनः पुनः ।

न च संविजते भृत्योर्न च यूथाद्विधावति ॥ ३३

प्रकम्पते च रोषेण तिर्यक् च पुनरीक्षते ।

पश्येत्लाङ्गूलमपि च क्ष्वेलत्येष महाबलः ॥ ३४

महाबलो वीतभयो रम्यं साल्वेयपर्वतम् ।

राजन् सततमध्यास्ते शरभो नाम यूथपः ॥ ३५

एतस्य बलिनः सर्वे विहारा नाम यूथपाः ।

राजन्शतसहस्राणि चत्वारिंशत्तथैव च ॥ ३६

यस्तु मेघ इवाकाशं महानावृत्य तिष्ठति ।

मध्ये वानरवीराणां सुराणामिव वासवः ॥ ३७

मेरीणामिव सन्नादो यस्यैष श्रूयते महान् ।

बोषः शाखामृगेन्द्राणां संग्राममभिकाङ्क्षताम् ॥ ३८

एष पर्वतमध्यास्ते पारियात्रमनुत्तमम् ।

युद्धे दुष्प्रसहो नित्यं पनसो नाम यूथपः ॥ ३९

एनं शतसहस्राणां शतार्धं पर्युपासते ।

यूथपा यूथपश्रेष्ठं येषां यूथानि भागशः ॥ ४०

यस्तु भीमां प्रवल्गन्तीं चमूं तिष्ठति शोभयन् ।

स्थितस्तीरे समुद्रस्य द्वितीय इव सागरः ॥ ४१

एष दर्दरसङ्काशो विनतो नाम यूथपः ।

पिबंश्चरति पर्णासां नदीनामुत्तमां नदीम् ॥ ४२

षष्टिः शतसहस्राणि बलमस्य पुवङ्गमाः ।
त्वामाह्वयति युद्धाय क्रथनो नाम यूथपः ॥ ४३

विक्रान्ता बलवन्तश्च यथा यूथानि भागशः ।
यस्तु गैरिकवर्णाभं वपुः पुष्यति वानरः ॥ ४४

अवमत्य सदा सर्वान् वानरान्वलदर्पितान् ।
गवयो नाम तेजस्वी त्वां क्रोधादभिवर्तते ॥ ४५

एनं शतसहस्राणि सप्ततिः पर्युपासते ।
एषैवाशंसते लङ्कां स्वेनानीकेन मर्दितुम् ॥ ४६

शतं शतसहस्राणि दशकोटिशतानि च ।
हरीणां यूथपाः सन्ति बलिनां च महौजसाम् ॥ ४७

एते दुष्प्रसहा घोरा बलिनः कामरूपिणः ।
यूथपा यूथपश्रेष्ठा एषां यूथानि भागशः ॥ ४८

इति षड्विंशः सर्गः ॥



सप्तविंशः सर्गः ॥

तांस्तु तेऽहं प्रवक्ष्यामि प्रेक्षमाणस्य यूथपान् ।
राषवार्थे पराक्रान्ता ये न रक्षन्ति जीवितम् ॥ १

स्निग्धा यस्य बहुव्यामा वाला लाङ्गूलमाश्रिताः ।
ताम्राः पीताः सिताः श्यामाः प्रकीर्णा घोरकर्मणः ॥

प्रगृहीताः प्रकाशन्ते सूर्यस्येव मरीचयः ।
पृथिव्यां चानुकृष्यन्ते हरो नामैष यूथपः ॥ २

यं पृष्ठतोऽनुगच्छन्ति शतशोऽथ सहस्रशः ।
द्रुमानुद्यम्य सहसा लङ्कारोहणतत्पराः ॥ ३

एष कोटिसहस्रेण वानराणां महौजसाम् ।
आकाङ्क्षते त्वां संग्रामे जेतुं परपुरञ्जय ॥ ४

यूथपा हरिराजस्य किङ्कराः समुपस्थिताः ।
नीलानिव महामेषांस्तिष्ठतो यांस्तु पश्यसि ॥ ५

असिताञ्जनसङ्काशान् युद्धे सत्यपराक्रमान् ।
नखदंष्ट्रायुधान् वीरांस्तीक्ष्णकोपान् भयावहान् ॥
असंख्येयाननिर्देश्यान् परं पारमिवोदधेः ॥ ७

पर्वतेषु च ये केचिद्विषमेषु नदीषु च ।

एते त्वामभिवर्तन्ते राजन् ऋक्षाः सुदारुणाः ॥ ८

एषां मध्ये स्थितो राजन् भीमाक्षो भीमदर्शनः ।

पर्जन्य इव जीमूतैः समन्तात्परिवारितः ॥ ९

ऋक्षवन्तं गिरिश्रेष्ठमध्यास्ते नर्मदां पिबन् ।

सर्वर्क्षानामधिपतिर्धूम्रो नामैष यूथपः ॥ १०

यवीयानस्य तु भ्राता पश्यैनं पर्वतोपमम् ।

भ्रात्रा समानो रूपेण विशिष्टस्तु पराक्रमे ॥ ११

स एष जाम्बवान्नाम महायूथपयूथपः ।

प्रशान्तो गुरुवर्ती च संप्रहारेष्वमन्त्रणः ॥ १२

एतेन साह्यं सुमहत् कृतं शक्रस्य धीमता ।

दैवासुरे जाम्बवता लब्धाश्च बहवो वराः ॥ १३

आरुह्य पर्वताग्रेभ्यो महाभ्रविपुलाः शिलाः ।

मुञ्चन्ति विपुलाकारा न मृत्योरुद्विजन्ति च ॥ १४

राक्षसानां च सदृशाः पिशाचानां च रोमशाः ।

एतस्य सैन्या बहवो त्रिचरन्त्यग्नितेजसः ॥ १५

यं त्वेनमभिसंरब्धं प्लवमानमवस्थितम् ।

प्रेक्षन्ते वानराः सर्वे स्थिता यूथपयूथपम् ॥ १६

एष राजन्सहस्राक्षं पर्युपास्ते हरीश्वरः ।

बलेन बलसम्पन्नो ढम्भो नामैष यूथपः ॥ १७

यः स्थितं योजने शैलं गच्छन्पार्श्वेन सेवते ।

ऊर्ध्वं तथैव कायेन गतः प्राप्नोति योजनम् ॥ १८

यस्मान्न परमं रूपं चतुष्पादेषु विद्यते ।

श्रुतः सन्नादनो नाम वानराणां पितामहः ॥ १९

येन युद्धं पुरा दत्तं रणे शक्रस्य धीमता ।

पराजयश्च न प्राप्तः सोऽयं यूथपयूथपः ॥ २०

यस्य विक्रममाणस्य शक्रस्येव पराक्रमः ।

एष गन्धर्वकन्यायामुत्पन्नः कृष्णवर्त्मनः ॥ २१

तदा दैवासुरे युद्धे साह्यार्थं लिदिवौकसाम् ।

यत्र वैश्रवणो राजा जम्बूमुपनिषेवते ॥ २२

यो राजा पर्वतेन्द्राणां बहुकिन्नरसेविनाम् ।

विहारसुखदो नित्यं भ्रातुस्ते राक्षसाधिप ॥ २३

तत्रैव वसति श्रीमान् बलवान्वानरर्षभः ।
युद्धेष्वकथनो नित्यं क्रथनो नाम यूथपः ॥ २४

वृतः कोटिसहस्रेण हरीणां समुपस्थितः ।
एषैवाशंसते लङ्कां स्वेनानीकेन मर्दितुम् ॥ २५

भो गङ्गामनु पर्येति त्रासयन्हस्तियूथपान् ।
हस्तिनां वानराणां च पूर्ववैरमनुस्सरन् ॥ २६

एष यूथपतिर्नेता गच्छन् गिरिगुहाशयः ।
गजान्योधयते वन्यान् गिरींश्चैव महीरुहान् ॥ २७

हरीणां वाहिनीमुख्यो नदीं हैमवतीमनु ।
उशीरबीजमाश्रित्य पर्वतं मन्दरोपमम् ॥ २८

रमते वानरश्रेष्ठो दिवि शक्र इव स्वयम् ।
एनं शतसहस्राणां सहस्रमभिवर्तते ॥ २९

वीर्यविक्रमदृष्टानां नर्दतां बाहुशालिनाम् ।
स एष नेता चैतेषां वानराणां महात्मनाम् ॥ ३०

एष दुर्धर्षणो राजन् प्रमाथी नाम यूथपः ।
बातेनेवोद्धतं मेघं यमेनमनुपश्यसि ॥ ३१

अनीकमपि संरब्धं वानराणां तरस्विनाम् ।

उद्धूतमरुणाभासं पवनेन समन्ततः ॥

३२

विवर्तमानं बहुशो यत्नैतद्बहुलं रजः ।

एतेऽसितमुखा घोरा गोलाङ्गूला महाबलाः ॥

३३

शतं शतसहस्राणि दृष्ट्वा वै सेतुबन्धनम् ।

गोलाङ्गूलं महावेगं गवाक्षं नाम यूथपम् ॥

३४

परिवार्याभिवर्तन्ते लङ्कां मर्दितुमोजसा ।

भ्रमराचरिता यत्र सर्वकालफलद्रुमाः ॥

३५

यं सूर्यतुल्यवर्णाभिमनु पर्येति पर्वतम् ।

यस्य भासा सदा भान्ति तद्वर्णा मृगपक्षिणः ॥

यस्य प्रस्थं महात्मानो न त्यजन्ति महर्षयः ॥

३६

सर्वकामफला वृक्षाः सदा फलसमन्विताः ।

मधूनि च महार्हाणि यस्मिन्पर्वतसत्तमे ॥

३७

तल्लैष रमते राजन् रम्ये काञ्चनपर्वते ।

मुख्यो वानरमुख्यानां केसरी नाम यूथपः ॥

३८

षष्टिर्गिरिसहस्राणां रम्याः काञ्चनपर्वताः ।

तेषां मध्ये गिरिवरस्त्वमिवानघ रक्षसाम् ॥

३९

तत्रैते कपिलाः श्वेतास्ताम्रास्या मधुपिङ्गलाः ।

निवसन्त्युत्तमगिरौ तीक्ष्णदंष्ट्रा नखायुधाः ॥ ४०

सिंहा इव चतुर्दंष्ट्रा व्याघ्रा इव दुरासदाः ।

सर्वे वैश्वानरसमा ज्वलिताशीविषोपमाः ॥ ४१

सुदीर्घाञ्चितलाङ्गूला मत्तमातङ्गसन्निभाः ।

महापर्वतसङ्काशा महाजीमूतनिःखनाः ॥ ४२

धृत्तपिङ्गलरक्ताक्षा भीमा भीमगतिस्वराः ।

मर्दयन्तीव ते सर्वे ताथुर्लङ्कां समीक्ष्य ते ॥ ४३

एष चैषामधिपतिर्मध्ये तिष्ठति दीर्यवान् ।

जयार्थो नित्यमादित्यमुपतिष्ठति बुद्धिमान् ॥ ४४

नाम्ना पृथिव्यां विख्यातो राजञ्जतबलीति यः ।

एषैवाशंसते लङ्कां स्वेनानीकेन मर्दितुम् ॥ ४५

विक्रान्तो बलवाञ्छूरः पौरुषे स्वे व्यवस्थितः ।

रामप्रियार्थं प्राणानां दयां न कुरुते हरिः ॥ ४६

गजो गवाक्षो गवयो नलो नीलश्च वानरः ।

एकैक एव यूथानां कोटिभिर्दशभिर्वृतः ॥ ४७

तथाऽन्ये वानरश्रेष्ठा विन्ध्यपर्वतवासिनः ।

न शक्यं ते बहुत्वात्तु संख्यतुं लघुविक्रमाः ॥ ४८

सर्वे महाराज महाप्रभावाः

सर्वे महाशैलनिकाशकायाः ।

सर्वे समर्थाः पृथिवीं क्षणेन

कर्तुं प्रविध्वस्तविकीर्णशैलाम् ॥ ४९

इति सप्तविंशः सर्गः ॥



अष्टाविंशः सर्गः ॥

सारणस्य वचः श्रुत्वा रावणं राक्षसाधिपम् ।

बलमादिश्य तत्सर्वं शुको वाक्यमथाब्रवीत् ॥ १

स्थितान्पश्यसि यानेतान् मत्तानिव महाद्विपान् ।

न्यग्रोधानिव गाङ्गेयान् सालान् हैमवतानिव ॥ २

एते दुष्प्रसहा राजन् बलिनः कामरूपिणः ।

दैत्यदानवसङ्काशा युद्धे देवपराक्रमाः ॥ ३

एषां कोटिसहस्राणि नव पञ्च च सप्त च ।

तथा शङ्कुसहस्राणि तथा बृन्दशतानि च ॥ ४

एते सुग्रीवसचिवाः किष्किन्धानिलयाः सदा ।

हरयो देवगन्धर्वैरुत्पन्नाः कामरूपिणः ॥

५

यौ तौ पश्यसि तिष्ठन्तौ कुमारौ देवरूपिणौ ।

मैन्दश्च द्विविदश्चोभौ ताभ्यां नास्ति समो युधि ॥ ६

ब्रह्मणा समनुज्ञातावमृतप्राशिनावुभौ ।

आशंसेते युधा लङ्कामेतौ मर्दितुमोजसा ॥

७

यावेतावेतयोः पार्श्वे स्थितौ पर्वतसन्निभौ ।

सुमुखोऽसुमुखश्चैव मृत्युपुत्रौ पितुः समौ ॥

प्रेक्षन्तौ नगरीं लङ्कां कोटिभिर्दशभिर्वृतौ ॥

८

यं तु पश्यसि तिष्ठन्तं प्रभिन्नमिव कुञ्जरम् ।

यो बलात्क्षोभयेत्कुद्धः समुद्रमपि वानरः ॥

९

एषोऽभिगन्ता लङ्काया वैदेह्यास्तव च प्रभो ।

एनं पश्य पुरा दृष्टं वानरं पुनरागतम् ॥

१०

ज्येष्ठः केसरिणः पुत्रो वातात्मज इति श्रुतः ।

हनुमानिति विख्यातो लङ्घितो येन सागरः ॥ ११

कामरूपी हरिश्रेष्ठो बलरूपसमन्वितः ।

अनिवार्यगतिश्चैव यथा सततगः प्रभुः ॥

१२

उद्यन्तं भास्करं दृष्ट्वा बालः किल पिपासितः ।

त्रियोजनसहस्रं तु अध्वानमवतीर्य हि ॥ १३

आदित्यमाहरिष्यामि न मे क्षुत्प्रतियास्यति ।

इति निश्चित्य मनसा पुरैष बलदर्पितः ॥ १४

अनाधृष्यतमं देवमपि देवर्षिदानवैः ।

अनासाद्यैव पतितो भास्करोदयने गिरौ ॥ १५

पतितस्य कपेरस्य हनुरेका शिलातले ।

किञ्चिद्भिन्ना दृढहर्नोर्हनुमानेष तेन वै ॥ १६

सत्यमागमयोगेन भमैष विदितो हरिः ।

नास्य शक्यं बलं रूपं प्रभावो वाऽनुभाषितुम् ॥ १७

एष आशंसते लङ्कायैको मर्दितुमोजसा ।

येन जाज्वल्यते सौम्य धूमकेतुस्तवाद्य वै ।

लङ्कायां निहितश्चापि कथं विस्मरसे कपिम् ॥ १८

यश्चैषोऽनन्तरः शूरः श्यामः पद्मनिभेक्षणः ।

इक्ष्वाकूणामतिरथो लोके विख्यातपौरुषः ॥ १९

यस्मिन्न चलते धर्मो यो धर्मं नातिवर्तते ।

यो ब्राह्ममस्त्रं वेदांश्च वेद वेदविदां वरः ॥ २०

यो भिन्द्याद्गगनं बाणैर्मेदिनीं चापि दारयेत् ।

यस्य मृत्योरिव क्रोधः शक्रस्येव पराक्रमः ॥ २१

यस्य भार्या जनस्थानात् सीता चापहता त्वया ।

स एष रामस्त्वां योद्धुं राजन्समभिवर्तते ॥ २२

यस्यैष दक्षिणे पार्श्वे शुद्धजाम्बूनदप्रभः ।

विशालवक्षास्ताम्रक्षो नीलकुञ्चितमूर्धजः ॥ २३

एषोऽस्य लक्ष्मणो नाम भ्राता प्राणसमः प्रियः ।

नये युद्धे च कुशलः सर्वशस्त्रविशारदः ॥ २४

अमर्षो दुर्जयो जेता विक्रान्तो बुद्धिमान्वली ।

रामस्य दक्षिणो बाहुर्नित्यं प्राणो बहिश्चरः ॥ २५

न ह्येष राघवस्यार्थे जीवितं परिरक्षति ।

एषैवाशंसते युद्धे निहन्तुं सर्वराक्षसान् ॥ २६

यस्तु सव्यमसौ पक्षं राघवस्याश्रित्य तिष्ठति ।

रक्षोगणपरिश्रितो राजा ह्येष विभीषणः ॥ २७

श्रीमता राजराजेन लङ्कायामभिषेचितः ।

त्वामेव प्रतिसंरब्धो युद्धाद्यैषोऽभिवर्तते ॥ २८

यं तु पश्यसि तिष्ठन्तं मध्ये गिरिमिवांचलम् ।
सर्वशाखामृगेन्द्राणां भर्तारमपराजितम् ॥ २९

तेजसा यशसा बुद्ध्या ज्ञानेनाभिजनेन च ।
यः कपीनतिबभ्राज हिमवानिव पर्वतः ॥ ३०

किष्किन्धां यः समध्यास्ते गुहां सगहनद्रुमाम् ।
दुर्गां पर्वतमध्यस्थां प्रधानैः सह यूथपैः ॥ ३१

यस्यैषा काञ्चनी माला शोभते शतपुष्करा ।
कान्ता देवमनुष्याणां यस्यां लक्ष्मीः प्रतिष्ठिता ॥ ३२

एतां च मालां तारां च कपिराज्यं च शाश्वतम् ।
सुग्रीवो वालिनं हत्वा रामेण प्रतिपादितः ॥ ३३

शतं शतसहस्राणां कोटिमाहुर्मनीषिणः ।
शतं कोटिसहस्राणां शङ्कुरित्यभिधीयते ॥ ३४

शतं शङ्कुसहस्राणां महाशङ्कुरिति स्मृतः ।
महाशङ्कुसहस्राणां शतं वृन्दमिवोच्यते ॥ ३५

शतं वृन्दसहस्राणां महावृन्दमिति स्मृतम् ।
महावृन्दसहस्राणां शतं पद्ममिति स्मृतम् ॥ ३६

शतं पद्मसहस्राणां महापद्ममिति श्रुतम् ।
महापद्मसहस्राणां शतं खर्वमिहोच्यते ॥ ३७

शतं खर्वसहस्राणां महाखर्वमिति श्रुतम् ।
महाखर्वसहस्राणां समुद्रमभिधीयते ॥ ३८

शतं समुद्रसाहस्रमोघ इत्यभिधीयते ।
शतमोघसहस्राणां महौघ इति विश्रुतः ॥ ३९

एवं कोटिसहस्रेण शङ्कूनां च शतेन च ।
महाशङ्कुसहस्रेण तथा वृन्दशतेन च ॥ ४०

महावृन्दसहस्रेण तथा पद्मशतेन च ।
महापद्मसहस्रेण तथा खर्वशतेन च ॥ ४१

समुद्रेण शतेनैव महौघेन तथैव च ।
एष कोटिमहौघेन समुद्रसदृशेन च ॥ ४२

विभीषणेन सचिवैः राक्षसैः परिवारितः ।
सुग्रीवो वानरेन्द्रस्त्वां युद्धार्थमभिवर्तते ॥
महाबलवृत्तो नित्यं महाबलपराक्रमः ॥ ४३

इमां महाराज समीक्ष्य वाहिनी-
मुपस्थितां प्रज्वलितग्रहोपमाम् ।

ततः प्रयत्नः परमो विधीयतां

यथा जयः स्यान्न परैः पराजयः ॥

४४

इति अष्टाविंशः सर्गः ॥



एकोनविंशः सर्गः ॥

शुकेन तु समाख्यातांस्तान्दृष्ट्वा हरियूथपान् ।

समीपस्थं च रामस्य भ्रातरं स्वं विभीषणम् ॥

१

लक्ष्मणं च महावीर्यं भुजं रामस्य दक्षिणम् ।

सर्ववानरराजं च सुग्रीवं भीमविक्रमम् ॥

२

गजं गवाक्षं गवयं मैन्दं द्विविदमेव च ।

अङ्गदं चापि बलिनं वज्रहस्तात्मजात्मजम् ॥

३

हनुमन्तं च विक्रान्तं जाम्बवन्तं च दुर्जयम् ।

सुषेणं कुमुदं नीलं नलं च पुवर्गर्षभम् ॥

४

किञ्चिदाविमहदयो जातक्रोधश्च रावणः ।

भर्त्सयामास तौ वीरौ कथान्ते शुकसारणौ ॥

५

- अधोमुखौ तौ प्रणतावब्रवीच्छुकसारणौ ।
रोषगद्गदया वाचा संरब्धः परुषं तदा ॥ ६
- न तावत्सदृशं नाम सचिवैरुपजीविभिः ।
विप्रियं नृपतेर्वक्तुं निग्रहप्रग्रहे विभोः ॥ ७
- रिपूणां प्रतिकूलानां युद्धार्थमभिवर्तताम् ।
उभाभ्यां सदृशं नाम वक्तुमप्रस्तवे स्तवम् ॥ ८
- आचार्या गुरवो वृद्धा वृथा वां पर्युपासिताः ।
सारं यद्राजशास्त्राणामनुजीव्यं न गृह्यते ॥ ९
- गृहीतो वा न विज्ञातो भारो ज्ञानस्य वोह्यते ।
ईदृशैः सचिवैर्युक्तो मूर्खैर्दिष्ट्या धराम्यहम् ॥ १०
- किं नु मृत्योर्भयं नास्ति वक्तुं मां परुषं वचः ।
यस्य मे शासतो जिह्वा प्रयच्छति शुभाशुभम् ॥ ११
- अप्येव दहनं स्पृष्ट्वा वने तिष्ठन्ति पादपाः ।
राजदोषपरामृष्टास्तिष्ठन्ते नापराधिनः ॥ १२
- हन्यामहं त्विमौ पापौ शत्रुपक्षप्रशंसकौ ।
यदि पूर्वोपकारेभ्यु न क्रोधो मृदुतां व्रजेत् ॥ १३

अपध्वंसत गच्छध्वं सन्निकर्षादितो मम ।

न हि वां हन्तुमिच्छामि सराम्युत्कृतानि वाम् ॥ १४

हतावेव कृतघ्नौ तौ मयि स्नेहपरङ्मुखौ ।

एवमुक्तौ तु सत्रीडौ तावुभौ शुकसारणौ ॥ १५

रावणं जयशब्देन प्रतिनन्द्याभिनिःसृतौ ।

अब्रवीत्स दशग्रीवः समीपस्थं महोदरम् ॥ १६

उपस्थापय शीघ्रं मे चारानिति निशाचरम् ।

महोदरस्तथोक्तस्तु शीघ्रमाज्ञापयच्चरान् ॥ १७

ततश्चाराः संत्वरिताः प्राप्ताः पार्थिवशासनात् ।

उपस्थिताः प्राञ्जलयो वर्धयित्वा जयाशिषा ॥ १८

तानब्रवीत्ततो वाक्यं रावणो राक्षसाधिपः ।

चारान्प्रत्यायिताञ्शूरान् भक्तान्विगतसाध्वसान् ॥ १९

इतो गच्छत रामस्य व्यवसायं परीक्षथ ।

मन्त्रिष्वभ्यन्तरा येऽस्य प्रीत्या येन समागताः ॥ २०

कथं स्वपिति जागर्ति किमन्यच्च करिष्यति ।

विज्ञाय निपुणं सर्वमागन्तव्यमशेषतः ॥ २१

चारेण विदितः शत्रुः पण्डितैर्वसुधाधিপैः ।
युद्धे स्वरूपेन यत्नेन समासाद्य निरस्यते ॥ २२

चारास्तु ते तथेत्युक्त्वा प्रहृष्टा राक्षसेश्वरम् ।
शार्दूलमग्रतः कृत्वा ततश्चक्रुः प्रदक्षिणम् ॥ २३

ततस्ते तं महात्मानं चारा राक्षससत्तमम् ।
कृत्वा प्रदक्षिणं जग्मुर्यत्नं रामः सलक्ष्मणः ॥ २४

ते सुवेलस्य शैलस्य समीपे रामलक्ष्मणौ ।
प्रच्छन्ना ददृशुर्गत्वा ससुग्रीवविभीषणौ ॥ २५

प्रेक्षमाणाश्चमूं तां च बभूवुर्भयविक्रवाः ।
ते तु धर्मात्मना दृष्टा राक्षसेन्द्रेण राक्षसाः ॥ २६

विभीषणेन तत्रस्था निगृहीता यदृच्छया ।
शार्दूलो ग्राहितस्त्वेकः पापोऽयमिति राक्षसः ॥ २७

गृहीतः पीडितश्चैव वानरैर्बहुभिर्वृतः ।
मोचितः सोऽपि रामेण वध्यमानः प्लवङ्गमैः ॥ २८

आनृशंस्येन रामेण मोचिता राक्षसाः परे ।
वानरैरर्दितास्ते तु विक्रान्तैर्लघुविक्रमैः ।
पुनर्लङ्कामनुप्राप्ताः श्वसन्तो नष्टचेतसः ॥ २९

ततो दशग्रीवमुपस्थितास्तु ते
 चारा बहिर्नित्यचरा निशाचराः ।
 गिरेः सुवेलस्य समीपवासिनं
 न्यवेदयन्भीमबलं महाबलाः ॥

३०

इति एकोनत्रिंशः सर्गः ॥



त्रिंशः सर्गः ॥

ततस्तमक्षोभ्यबलं लङ्काधिपतये चराः ।
 सुवेले राघवं शैले निविष्टं प्रत्यवेदयन् ॥

१

चाराणां रावणः श्रुत्वा प्राप्तं रामं महाबलम् ।
 जातोद्वेगोऽभवत्किञ्चिच्छार्दूलं वाक्यमब्रवीत् ॥

२

अथवावच्च ते वर्णो दीनश्चासि निशाचर ।
 नासि कच्चिदमित्राणां क्रुद्धानां वशमागतः ॥

३

इति तेनानुशिष्टस्तु वाचं मन्दमुदीरयत् ।
 तदा राक्षसशार्दूलं शार्दूलो भयविह्वलः ॥

४

न ते चारयितुं शक्या राजन्वानरपुङ्गवाः ।
 विक्रान्ता बलवन्तश्च राघवेण च रक्षिताः ॥

५

नापि संभाषितुं शक्याः संप्रश्नोऽत्र न लभ्यते ।
सर्वतो रक्ष्यते पन्था वानरैः पर्वतोपमैः ॥ ६

प्रविष्टमाले ज्ञातोऽहं बले तस्मिन्नचारिते ।
बलाद्गृहीतो रक्षोभिर्बहुधाऽस्मि विदारितः ॥ ७

जानुभिर्मुष्टिभिर्दन्तैस्तलैश्चाभिहतो भृशम् ।
परिणीतोऽस्मि हरिभिर्बलवद्भिरमर्षणैः ॥ ८

परिणीय च सर्वत्र नीतोऽहं रामसंसदम् ।
रुधिरादिग्धसर्वाङ्गो विह्वलश्चलितेन्द्रियः ॥ ९

हरिभिर्वध्यमानश्च याचमानः कृताञ्जलिः ।
राघवेण परित्रातो जीवामीति यदृच्छया ॥ १०

एष शैलैः शिलाभिश्च पूरयित्वा महार्णवम् ।
द्वारमाश्रित्य लङ्काया रामस्तिष्ठति सायुधः ॥ ११

गारुडं व्यूहमास्थाय सर्वतो हरिभिर्वृतः ।
मां विसृज्य महातेजा लङ्कामेवाभिवर्तते ॥ १२

पुरा प्राकारमायाति क्षिप्रमेकतरं कुरु ।
सीतां वाऽस्मै प्रयच्छाशु सुयुद्धं वा प्रदीयताम् ॥ १३

मनसा स ततापाथ तच्छ्रुत्वा राक्षसाधिपः ।

शार्दूलस्य महद्वाक्यमथोवाच स रावणः ॥ १४

यदि मां प्रति युद्धयन्ते देवगन्धर्वदानवाः ।

नैव सीतां प्रदास्यामि सर्वलोकभयादपि ॥ १५

एवमुक्त्वा महातेजा रावणः पुनरब्रवीत् ।

चारिता भवता सेना केऽत्र शूराः प्लवङ्गमाः ॥ १६

कीदृशाः किंप्रभाः सौम्य वानरा ये दुरासदाः ।

कस्य पुत्राश्च पौत्राश्च तत्त्वमाख्याहि राक्षस ॥ १७

तथाऽत्र प्रतिपत्स्यामि ज्ञात्वा तेषां बलाबलम् ।

अवश्यं बलसंख्यानं कर्तव्यं युद्धमिच्छताम् ॥ १८

अथैवमुक्तः शार्दूलो रावणेनोत्तमश्चरः ।

इदं वचनमारेभे वक्तुं रावणसन्निधौ ॥ १९

अथर्क्षरजसः पुत्रो युधि राजा सुदुर्जयः ।

गद्गदस्याथ पुत्रोऽत्र जाम्बवानिति विश्रुतः ॥ २०

गद्गदस्यैव पुत्रोऽन्यो गुरुपुत्रः शतक्रतोः ।

कदनं यस्य पुत्रेण कृतमेकेन रक्षसाम् ॥ २१

सुषेणश्चात्र धर्मात्मा पुत्रो धर्मस्य वीर्यवान् ।

सौम्यः सोमात्मजश्चात्र राजन्दधिमुखः कपिः ॥ २२

सुमुखो दुर्मुखश्चात्र वेगदर्शी च वानरः ।

मृत्युर्वानररूपेण नूनं सृष्टः स्वयंभुवा ॥ २३

पुत्रो हुतवहस्याथ नीलः सेनापतिः स्वयम् ।

अनिलस्य च पुत्रोऽत्र हनुमानिति विश्रुतः ॥ २४

नप्ता शक्रस्य दुर्घर्षो बलवानङ्गदो युवा ।

मैन्दश्च द्विविदश्चोभौ बलिनावश्विसंभवौ ॥ २५

पुत्रा वैवस्वतस्यात्र पञ्च कालान्तकोपमाः ।

गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः ॥ २६

दश वानरकोट्योऽत्र शूराणां युद्धकाङ्क्षिणाम् ।

श्रीमतां देवपुत्राणां शेषान्नाख्यातुमुत्सहे ॥ २७

पुत्रो दशरथम्यैष सिंहसंहननो युवा ।

दूषणो निहतो येन खरश्च त्रिशिरास्तथा ॥ २८

नास्ति रामस्य सदृशो विक्रमे भुवि कश्चन ।

विराधो निहतो येन कबन्धश्चान्तकोपमः ॥ २९

वक्तुं न शक्तो रामस्य नरः कश्चिद्गुणान् क्षितौ ।
जनस्थानगता येन यावन्तो राक्षसा हताः ॥ ३०

लक्ष्मणश्चात्र धर्मात्मा मातङ्गानामिवर्षभः ।
यस्य बाणपथं प्राप्य न जीवेदपि वासवः ॥ ३१

श्वेतो ज्योतिर्मुखश्चात्र भास्करस्यात्मसंभवौ ।
वरुणस्य च पुत्रोऽथ हेमकूटः प्लवङ्गमः ॥ ३२

विश्वकर्मसुतो वीरो नलः प्लवगसत्तमः ।
विक्रान्तो बलवानत्र वसुपुत्रः सुदुर्धरः ॥ ३३

राक्षसानां वरिष्ठश्च तव भ्राता विभीषणः ।
प्रतिगृह्य पुरीं लङ्कां राघवस्य हिते रतः ॥ ३४

इति सर्वं समाख्यातं तवेदं वानरं बलम् ।
सुवेलेऽधिष्ठितं शैले शेषकार्ये भवान् गतिः ॥ ३५

इति त्रिंशः सर्गः ॥



एकविंशः सर्गः ॥

- ततस्तमक्षोभ्यबलं लङ्काधिपतये चराः ।
सुवेले राघवं शैले निविष्टं प्रत्यवेदयन् ॥ १
- चाराणां रावणः श्रुत्वा प्राप्तं रामं महाबलम् ।
जातोद्वेगोऽभवत्किञ्चित् सचिवानिदमब्रवीत् ॥ २
- मन्त्रिणः शीघ्रमायान्तु सर्वे वै सुसमाहिताः ।
अयं नो मन्त्रकालो हि संप्राप्त इति राक्षसाः ॥ ३
- तस्य तच्छासनं श्रुत्वा मन्त्रिणोऽभ्यागमन्द्रुतम् ।
ततः स मन्त्रयामास सचिवै राक्षसैः सह ॥ ४
- मन्त्रयित्वा सुदुर्धर्षः क्षमं यत्समनन्तरम् ।
विसर्जयित्वा सचिवान् प्रविवेश स्वमालयम् ॥ ५
- ततो राक्षसमाहूय विद्युज्जिह्वं महाबलम् ।
मायाविदं महामायः प्राविशद्यत्र मैथिली ॥ ६
- विद्युज्जिह्वं च मायाज्ञमब्रवीद्राक्षसाधिपः ।
मोहयिष्यावहे सीतां मायया जनकात्मजाम् ॥ ७

शिरो मायामयं गृह्य राघवस्य निशाचर ।

त्वं मां समुपतिष्ठस्व महच्च सशरं धनुः ॥

८

एवमुक्तस्तथेत्याह वियुज्जिह्वो निशाचरः ।

तस्य तुष्टोऽभवद्राजा प्रददौ च विभूषणम् ॥

९

अशोकवनिकायां तु सीतादर्शनलालसः ।

नैर्ऋतानामधिपतिः संविवेश महाबलः ॥

१०

ततो दीनामदीनार्हा ददर्श धनदानुजः ।

अधोमुखीं शोकपरामुपविष्टां महीतले ॥

११

भर्तारमेव ध्यायन्तीमशोकवनिकां गताम् ।

उपास्यमानां घोराभी राक्षसीभिरितस्ततः ॥

१२

राक्षसीभिर्वृतां सीतां पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ।

उत्पातमेघराजीभिश्चन्द्ररेखामिवावृताम् ॥

१३

भूषणावयवैः कैश्चिन्मङ्गलार्थमलंकृताम् ।

वसन्ते मारुतोद्धूतां क्षिप्तां पुष्पलतामिव ॥

१४

हर्षशोकान्तरे मग्नां विषादास्त्राविलेक्षणाम् ।

स्तिमितामिव गम्भीर्यान्नदीं भागीरथीमिव ॥

१५

उपसृत्य ततः सीतां प्रहर्षं नाम कीर्तयन् ।
अधोमुखस्थितां बालामुपविष्टां पराङ्मुखीम् ॥
इदं च वचनं धृष्टमुवाच जनकात्मजाम् ॥ १६

सान्त्वयमाना मया भद्रं यमुपाश्रित्य वल्गसे ।
खरहन्ता स ते भर्ता राघवः समरे हतः ॥ १७

छिन्नं ते सर्वतो मूलं दर्पस्ते विहतो मया ।
व्यसनेनात्मनः सीते मम भार्या भविष्यसि ॥ १८

विसृजतां मतिं मूढे किं मृतेन करिष्यसि ।
भवस्व भद्रे भार्याणां सर्वासामीश्वरी मम ॥ १९

अल्पपुण्ये निवृत्तार्थे मूढे पण्डितमानिनि ।
शृणु भर्तृवधं सीते घोरं वृत्रवधं यथा ॥ २०

समायातः समुद्रान्तं मां हन्तुं किल राघवः ।
वानरेन्द्रप्रणीतेन बलेन महता वृतः ॥ २१

सन्निविष्टः समुद्रस्य पीड्य तीरमथोत्तरम् ।
बलेन महता रामो व्रजत्यस्तं दिवाकरे ॥ २२

अथाध्वनि परिश्रान्तमर्धरात्रौ स्थितं बलम् ।
सुखमुप्तं समासाद्य चारितं प्रथमं चरैः ॥ २३

तत्प्रहस्तप्रणीतेन बलेन महता मम ।

बलमस्य हतं रात्रौ यत्र रामः सलक्ष्मणः ॥ २४

पट्टसान्परिघांश्चक्रान् दण्डान् खड्गान्महायसान् ।

बाणजालानि शूलानि भास्वरान् कूटमुद्गरान् ॥ २५

यष्टीश्च तोमराञ्जस्तीश्चक्राणि मुसलानि च ।

उद्यम्योद्यम्य रक्षोभिर्वानरेषु निपातिताः ॥ २६

अथ सुप्तस्य रामस्य प्रहस्तेन प्रमाथिना ।

असक्तं कृतहस्तेन शिरश्छिन्नं महासिना ॥ २७

विभीषणः समुत्पत्य निगृहीतो यदृच्छया ।

दिशः प्रव्राजितः सर्वैर्लक्ष्मणः प्लवगैः सह ॥ २८

सुग्रीवो ग्रीवया शेते भग्नया प्लवगाधिपः ।

निरस्तहनुकः शेते हनुमान् राक्षसैर्हतः ॥ २९

जाम्बवानथ जानुभ्यामुत्पतन्निहतो युधि ।

पट्टसैर्बहुभिश्छिन्नो निकृत्तः पादपो यथा ॥ ३०

मैन्दश्च द्विविदश्चोभौ निहतौ वानरर्षभौ ।

निश्वसन्तौ रुदन्तौ च रुधिरेण परिप्लुतौ ॥ ३१

असिना व्यायतौ छिन्नौ मध्ये ह्यरिनिषूदनौ ।
अभितिष्ठति मेदिन्यां पनसः पनसो यथा ॥ ३२

नाराचैर्बहुभिश्छिन्नः शेते दर्या दरीमुखः ।
कुमुदस्तु महातेजा निष्कूजः सायकैर्हतः ॥ ३३

अङ्गदो बहुभिश्छिन्नः शरैरासाद्य राक्षसैः ।
पतितो रुधिरोद्गारी क्षितौ निपतिताङ्गदः ॥ ३४

हरयो मथिता नागै रथजालैस्तथाऽपरे ।
शयाना मृदिताश्चाश्वैर्वायुवेगैरिवाम्बुदाः ॥ ३५

प्रसृताश्चापरे त्रस्ता हन्यमाना जघन्यतः ।
अभिद्रुतास्तु रक्षोभिः सिंहैरिव महाद्विपाः ॥ ३६

सागरे पतिताः केचित् केचिद्गगनमाश्रिताः ।
ऋक्षा वृक्षानुपारूढा वानरैस्तु विमिश्रिताः ॥ ३७

सागरस्य च तीरेषु शैलेषु च वनेषु च ।
पिङ्गलास्ते विरूपाक्षैर्बहुभिर्बहवो हताः ॥ ३८

एवं तव हतो भर्ता ससैन्यो मम सेनया ।
क्षतजार्द्रं रजोध्वस्तमिदं चास्याहृतं शिरः ॥ ३९

- ततः परमदुर्धर्षो रावणो राक्षसाधिपः ।
सीतायामुपशृण्वन्त्यां राक्षसीमिदमब्रवीत् ॥ ४०
- राक्षसं क्रूरकर्माणं विद्युज्जिह्वं त्वमानय ।
येन तद्राघवशिरः संग्रामात्स्वयमाहृतम् ॥ ४१
- विद्युज्जिह्वस्ततो गृह्य शिरस्तत्सशरासनम् ।
प्रणामं शिरसा कृत्वा रावणस्याग्रतः स्थितः ॥ ४२
- तमब्रवीत्ततो राजा रावणो राक्षसं स्थितम् ।
विद्युज्जिह्वं महाजिह्वं समीपपरिवर्तिनम् ॥ ४३
- अग्रतः कुरु सीतायाः शीघ्रं दाशरथेः शिरः ।
अवस्थां पश्चिमां भर्तुः कृपणा साधु पश्यतु ॥ ४४
- एवमुक्तं तु तद्रक्षः शिरस्तत्प्रियदर्शनम् ।
उपनिक्षिप्य सीतायाः क्षिप्रमन्तरधीयत ॥ ४५
- रावणश्चापि चिक्षेप भास्वरं कार्मुकं महत् ।
त्रिषु लोकेषु विख्यातं सीतामिदमुवाच च ॥ ४६
- इदं तत्तव रामस्य कार्मुकं ज्यासमायुतम् ।
इह प्रहस्तेनानीतं हत्वा तं निशि मानुषम् ॥ ४७

स विद्युजिह्वेन सहैव तच्छिरो
 धनुश्च भूमौ विनिकीर्य रावणः ।
 विदेहराजस्य सुतां यशस्विनीं
 ततोऽब्रवीत्तां भव मे वशानुगा ॥

४८

इति एकविंशः सर्गः ॥



द्वाविंशः सर्गः ॥

सा सीता तच्छिरो दृष्ट्वा तच्च कार्मुकमुत्तमम् ।
 सुग्रीवप्रीतिसंसर्गमाख्यातं च हनूमता ॥ १

नयने मुखवर्णं च भर्तुस्तत्सदृशं मुखम् ।
 केशान् केशान्तदेशं च तं च चूडामणिं शुभम् ॥ २

एतैः सर्वैरभिज्ञानैरभिज्ञाय सुदुःखिता ।
 विजगर्हेऽत्र कैकेयीं क्रोशन्ती कुररी यथा ॥ ३

सकामा भव कैकेयी हतोऽयं कुलनन्दनः ।
 कुलमुत्सादितं सर्वं त्वया कलहशीलया ॥ ४

आर्येण किं नु कैकेय्याः कृतं रामेण विप्रियम् ।
 यद्गृहाच्चीरवसनस्तथा प्रवाजितो वनम् ॥ ५

इदानीं स हि धर्मात्मा राक्षसैश्च कथं हतः ॥

एवमुक्त्वा तु वैदेही वेपमाना तपस्विनी ।

जगाम जगतीं बाला छिन्ना तु कदली यथा ॥

६

सा मुहूर्तात्समाश्वास्य प्रतिलभ्य च चेतनाम् ।

तच्छिरः समुपाग्राय विललापायतेक्षणा ॥

७

हा हताऽस्मि महाबाहो वीरव्रतमनुव्रत ।

इमां ते पश्चिमावस्थां गताऽस्मि विधवा कृता ॥

८

प्रथमं मरणं नार्या भर्तुर्वैगुण्यमुन्यते ।

सुवृत्तः साधुवृत्तायाः संवृत्तस्त्वं ममाग्रतः ॥

९

दुःखाद्दुःखं प्रपन्नाया मग्नायाः शोकसागरे ।

यो हि मामुद्यतस्त्रातुं सोऽपि त्वं विनिपातितः ॥

१०

सा श्वश्रूर्मम कौसल्या त्वया पुत्रेण राघव ।

वत्सेनेव यथा धेनुर्विवत्सा वत्सला कृता ॥

११

आदिष्टं दीर्घमायुस्ते ग्रैरचिन्त्यपराक्रम ।

अनृतं वचनं तेषामल्पायुरसि राघव ॥

१२

अथवा नश्यति प्रज्ञा प्राज्ञस्यापि सतस्तव ।

पचत्येनं यथा कालो भूतानां प्रभवो ह्ययम् ॥

१३

- अदृष्टं मृत्युमापन्नः कस्मात्त्वं नयशास्त्रवित् ।
व्यसनानामुपायज्ञः कुशलो ह्यसि वर्जने ॥ १४
- तथा त्वं संपरिष्वज्य रौद्रयाऽतिनृशंसया ।
कालरात्र्या मयाऽऽच्छिद्य हृतः कमललोचनः ॥ १५
- अपि शेषे महाबाहो मां विहाय तपस्विनीम् ।
प्रियामिव शुभां नारीं पृथिवीं पुरुषर्षभ ॥ १६
- अर्चितं सततं यत्नाद्गन्धमाल्यैर्मया तव ।
इदं ते मत्प्रियं वीर धनुः काञ्चनभूषणम् ॥ १७
- पित्वा दशरथेन त्वं श्वशुरेण ममानघ ।
सर्वैश्च पितृभिः सार्धं नूनं स्वर्गे समागतः ॥ १८
- दिवि नक्षत्रभूतस्त्वं महत्कर्म कृतं शुभम् ।
पुण्यं राजर्षिवंशं त्वमात्मनः समुपेक्षसे ॥ १९
- किं मां न प्रेक्षसे राजन् किं मां न प्रतिभाषसे ।
बालां बाल्येन संप्राप्तां भार्यां मां सहचारिणीम् ॥ २०
- संश्रुतं गृह्णता पाणिं चरिष्यामीति यत्त्वया ।
स्मर तन्मम काकुत्स्थ नय मामपि दुःखिताम् ॥ २१

कस्मान्मामपहाय त्वं गतो गतिमतां वर ।

अस्माल्लोकादमुं लोकं त्यक्त्वा मामपि दुःखितान् ॥ २२

कल्याणैरुचितं यत्तत् परिष्वक्तं मयैव तु ।

क्रव्यादैस्तच्छरीरं ते नूनं विपरिकृष्यते ॥ २३

अग्निष्टोमादिभिर्यज्ञैरिष्टवानासदक्षिणैः ।

अग्निहोत्रेण संस्कारं केन त्वं तु न लप्स्यसे ॥ २४

प्रव्रज्यामुपपन्नानां त्रयाणामेकमागतम् ।

परिद्रक्ष्यति कौसल्या लक्ष्मणं शोकलालसा ॥ २५

स तस्याः परिपृच्छन्त्या वधं मित्रबलस्य ते ।

तव चाख्यास्यते नूनं निशायां राक्षसैर्वधम् ॥ २६

सा त्वां सुप्तं हतं श्रुत्वा मां च रक्षोगृहं गताम् ।

हृदयेनावदीर्णेन न भविष्यति राघव ॥ २७

मम हेतोरनार्याया ह्यनघः पार्थिवात्मजः ।

रामः सागरमुत्तीर्य वीर्यवान् गोष्पदे हतः ॥ २८

अहं दाशरथेनोढा मोहात्स्वकुलपांसनी ।

आर्यपुत्रस्य रामस्य भार्या मृत्युरजायत ॥ २९

नूनमन्यां मया जातिं वारितं दानमुत्तमम् ।
याऽहमद्येव शोचामि भार्या सर्वातिथेरपि ॥ ३०

साधु पातय मां क्षिप्रं रामस्योपरि रावण ।
समानय पतिं पत्न्या कुरु कल्याणमुत्तमम् ॥ ३१

शिरसा मे शिरश्चास्य कायं कायेन योजय ।
रावणानुगमिष्यामि गतिं भर्तुर्महात्मनः ।
मुहूर्तमपि नेच्छामि जीवितुं पापजीविता ॥ ३२

श्रुतं मया वेदविदां ब्राह्मणानां पितुर्गृहे ।
यासां स्त्रीणां प्रियो भर्ता तासां लोका महोदयाः ॥ ३३

क्षमा यस्मिन्दमस्त्यागः सत्यं धर्मः कृतज्ञता ।
अहिंसा चैव भूतानां तमृते का गतिर्मम ॥ ३४

इति सा दुःखसन्तप्ता विललापायतेक्षणा ।
भर्तुः शिरो धनुस्तत्र समीक्ष्य जनकात्मजा ॥ ३५

एवं लालप्यमानायां सीतायां तत्र राक्षसः ।
अभिचक्राम भर्तारमनीकस्थः कृताञ्जलिः ॥ ३६

विजयस्वार्थपुत्रेति सोऽभिवाद्य प्रसाद्य च ।
न्यवेदयदनुप्राप्तं प्रहस्तं वाहिनीपतिम् ॥ ३७

अमात्यैः सहितः सर्वैः प्रहस्तः समुपस्थितः ।

तेन दर्शनकामेन वयं प्रस्थापिताः प्रभो ॥ ३८

नूनमस्ति महाराज राजभावात्क्षमान्वितम् ।

किञ्चिदात्ययिकं कार्यं तेषां त्वं दर्शनं कुरु ॥ ३९

एतच्छ्रुत्वा दशग्रीवो राक्षसप्रतिवेदितम् ।

अशोकवनिकां त्यक्त्वा मन्त्रिणां दर्शनं ययौ ॥ ४०

स तु सर्वं समर्थ्यैव मन्त्रिभिः कृत्यमात्मनः ।

सभां प्रविश्य विदधे विदित्वा रामविक्रमम् ॥ ४१

अन्तर्धानं तु तच्छीर्षं तच्च कार्मुकमुत्तमम् ।

जगाम रावणस्यैव निर्याणसमनन्तरम् ॥ ४२

राक्षसेन्द्रस्तु तैः सार्धं मन्त्रिभिर्भोमविक्रमैः ।

समर्थयामास तदा रामकार्यविनिश्चयम् ॥ ४३

अविदूरस्थितान्सर्वान् बलाध्यक्षान् हितैषिणः ।

अब्रवीत्कालसदृशो रावणो राक्षसाधिपः ॥ ४४

शीघ्रं भेरीनिनादेन स्फुटकोणाहतेन मे ।

समानयध्वं सैन्यानि वक्तव्यं च न कारणम् ॥ ४५

ततस्तथेति प्रतिगृह्य तद्वचो

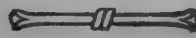
बलाधिपास्ते महदात्मनो बलम् ।

समानयंश्चैव समागमं च ते

न्यवेदयन् भर्तरि युद्धकाङ्क्षिणि ॥

४६

इति द्वात्रिंशः सर्गः ॥



त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥

सीतां तु मोहितां दृष्ट्वा सरमा नाम राक्षसी ।

आससादाशु वैदेहीं प्रियां प्रणयिनी सखी ॥

१

मोहितां राक्षसेन्द्रेण सीतां परमदुःखिताम् ।

आश्वासयामास तदा सरमा मृदुभाषिणी ॥

२

सा हि तत्र कृता मितं सीतया रक्ष्यमाणया ।

रक्षन्ती रावणादिष्टा सानुक्रोशा दृढव्रता ॥

३

सा ददर्श सखीं सीतां सरमा नष्टचेतनाम् ।

उपावृत्योत्थितां ध्वस्तां वडवामिव पांसुषु ॥

४

तां समाश्वासयामास सखीस्नेहेन सुव्रता ।

समाश्वसिहि वैदेहि माभूते मनसो व्यथा ॥

५

उक्ता यद्रावणेन त्वं प्रत्युक्तं च स्वयं त्वया ।
सखीस्नेहेन तद्भीरु मया सर्वं प्रतिश्रुतम् ॥ ६

लीनया गगने शून्ये भयमुत्सृज्य रावणात् ।
तव हेतोर्विशालाक्षि न हि मे जीवितं प्रियम् ॥ ७

स संभ्रान्तश्च निष्क्रान्तो यत्कृते राक्षसाधिपः ।
तच्च मे विदितं सर्वमभिनिष्क्रम्य मैथिलि ॥ ८

न शक्यं सौप्तिकं कर्तुं रामस्य विदितात्मनः ।
वधश्च पुरुषव्याघ्रे तस्मिन्नैवोपपद्यते ॥ ९

न त्वेव वानरा हन्तुं शक्याः पादपयोधिनः ।
सुरा देवर्षमेणेव रामेण हि सुरक्षिताः ॥ १०

दीर्घवृत्तभुजः श्रीमान् महोरस्कः प्रतापवान् ।
धन्वी संहननोपेतो धर्मात्मा भुवि विश्रुतः ॥ ११

धिक्रान्तो रक्षिता नित्यमात्मनश्च परस्य च ।
लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा कुशली नयशास्त्रवित् ॥ १२

हन्ता परबलौघानामचिन्त्यबलपौरुषः ।
न हतो राघवः श्रीमान् सीते शत्रुनिर्बहणः ॥ १३

अयुक्तबुद्धिकृत्येन सर्वभूतविरोधिना ।

रावणेन शठेन त्वां वशमानेतुमिच्छता ॥ १४

इयं प्रयुक्ता रौद्रेण माया मायाविदा त्वयि ।

शोकस्ते विगतः सर्वः कल्याणं त्वामुपस्थितम् ।

ध्रुवं त्वां भजते लक्ष्मीः प्रियं प्रीतिकरं शृणु ॥ १५

उत्तीर्य सागरं रामः सह वानरसेनया ।

सन्निविष्टः समुद्रस्य तीरमासाद्य दक्षिणम् ॥ १६

दृष्टो मे परिपूर्णार्थः काकुत्स्थः सहलक्ष्मणः ।

स हि तैः सागरान्तस्थैर्बलैस्तिष्ठति रक्षितः ॥ १७

अनेन प्रेषिता ये च राक्षसा लघुविक्रमाः ।

राघवस्तीर्ण इत्येव प्रवृत्तिस्तैरिहाहता ॥ १८

स तां श्रुत्वा विशालाक्षि प्रवृत्तिं राक्षसाधिपः ।

एष मन्त्रयते सर्वैः सचिवैः सह रावणः ॥ १९

इति ब्रुवाणा सरमा राक्षसी सीतया सह ।

सर्वोद्योगेन सैन्यानां शब्दं शुश्राव भैरवम् ॥ २०

दण्डनिर्घातवादिन्याः श्रुत्वा भेर्या महास्वनम् ।

उवाच सरमा सीतामिदं मधुरभाषिणी ॥ २१

- सन्नाहजननी ह्येषा भैरवा भीरु मेरिका ।
 मेरीनादं च गम्भीरं शृणु तोयदनिःस्वनम् ॥ २२
- कल्प्यन्ते मत्तमातङ्गा युज्यन्ते रथवाजिनः ।
 हृष्यन्ते तुरगारूढाः प्रासहस्ताः सहस्रशः ॥ २३
- तत्र तत्र च सन्नद्धाः संपतन्ति पदातयः ।
 आपूर्यन्ते राजमार्गाः सैन्यैरद्भुतदर्शनैः ॥ २४
- वेगवद्भिर्नदद्भिश्च तोयौघैरिव सागरः ।
 शस्त्राणां च प्रसन्नानां चर्मणां वर्मणां तथा ॥ २५
- रथवाजिगजानां च भूषितानां च रक्षसाम् ।
 प्रभां विसृजतां पश्य नानावर्णसमुत्थिताम् ॥ २६
- वनं निर्दहतो धर्मे प्रभामिव विभावसोः ।
 घण्टानां शृणु निर्घोषं रथानां शृणु निःस्वनम् ॥ २७
- हयानां हेषमाणानां शृणु तूर्यध्वनिं यथा ।
 उद्यतायुधहस्तानां राक्षसेन्द्रानुयायिनाम् ॥ २८
- संभ्रमो रक्षसामेष तुमुलो रोमहर्षणः ।
 श्रीस्त्वां भजति शोकघ्नी रक्षसां भयमागतम् ॥ २९

रामः कमलपलाक्षो दैत्यानामिव वासवः ।

विनिर्जित्य जितक्रोधस्त्वामचिन्त्यपराक्रमः ॥ ३०

रावणं समरे हत्वा ह्यचिरादेव मैथिलि ।

त्वया समग्रं प्रियया भर्ता त्वाऽधिगमिष्यति ॥ ३१

विक्रमिष्यति रक्षःसु भर्ता ते सहलक्ष्मणः ।

यथा शत्रुषु शत्रुघ्नो विष्णुना सह वासवः ॥ ३२

आगतस्य हि रामस्य क्षिप्रमङ्गतां सतीम् ।

अहं द्रक्ष्यामि सिद्धार्थां त्वां शत्रौ विनिपातिते ॥ ३३

अश्रूण्यानन्दजानि त्वं वर्तयिष्यसि शोभने ।

समागम्य परिष्वक्ता तस्योरसि महोरसः ॥ ३४

अचिरान्मोक्षयते सीते देवि ते जघनं गताम् ।

धृतामेतान्वहून्मासान् वेणीं रामो महाबलः ॥ ३५

तस्य दृष्ट्वा मुखं देवि पूर्णचन्द्रमिवोदितम् ।

मोक्षयसे शोकजं वारि निर्मोकमिव पन्नगी ॥ ३६

रावणं समरे हत्वा नचिरादेव मैथिलि ।

त्वया समग्रः प्रियया सुखार्हो लप्स्यते सुखम् ॥ ३७

समागता त्वं रामेण मोदिष्यसि महात्मना ।
सुवर्षेण समायुक्ता यथा सस्येन मेदिनी ॥

३८

गिरिवरमभितोऽनुवर्तमानो

हय इव मण्डलमाशु यः करोति ।

तमिह शरणमभ्युपैहि देवं

दिवसकरं प्रभवो ह्ययं प्रजानाम् ॥

३९

इति त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥



चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥

अथ तां जातसन्तापां तेन वाक्येन मोहिताम् ।

सरमा ह्लादयामास पृथिवीं द्यौरिवाम्भसा ॥

१

ततस्तस्या हितं सख्याश्चिकीर्षन्ती सखीवचः ।

उवाच काले कालज्ञा स्मितपूर्वाभिभाषिणी ॥

२

उत्सहेयमहं गत्वा त्वद्वाक्यमसितेक्षणे ।

निवेद्य कुशलं रामे प्रतिच्छन्ना निवर्तितुम् ॥

३

न हि मे क्रममाणाया निरालम्बे विहायसि ।

समर्थो गतिमन्वेतुं पवनो गरुडोऽपि वा ॥

४

एवं ब्रुवाणां तां सीता सरमां पुनरब्रवीत् ।
मधुरं श्लक्ष्णया वाचा पूर्वशोकाभिपन्नया ॥ ५

समर्था गगनं गन्तुमपि वा त्वं रसातलम् ।
अवगच्छाम्यकर्तव्यं कर्तव्यं ते मदन्तरे ॥ ६

मत्प्रियं यदि कर्तव्यं यदि बुद्धिः स्थिरा तव ।
ज्ञातुमिच्छामि तं गत्वा किं करोतीति रावणः ॥ ७

स हि मायाबलः क्रूरो रावणः शत्रुरावणः ।
मां मोहयति दुष्टात्मा पीतमात्रेव वासुणी ॥ ८

तर्जापयति मां नित्यं भर्त्सापयति चासकृत् ।
राक्षसीभिः सुघोराभिर्या मां रक्षन्ति नित्यशः ॥ ९

उद्विग्ना शङ्किता चास्मि न स्वस्थं च मनो मम ।
तद्भयाच्चाहमुद्विग्ना अशोकवनिकां गता ॥ १०

यदि नाम कथा तस्य निश्चितं वाऽपि यद्भवेत् ।
निवेदयेथाः सर्वं तत्परो मे स्यादनुग्रहः ॥ ११

सा त्वेवं ब्रुवतीं सीतां सरमा वल्गुभाषिणी ।
उवाच वदनं तस्याः स्पृशन्ती बाष्पविक्रबम् ॥ १२

- एष ते यद्यभिप्रायस्तस्माद्गच्छामि जानकि ।
 गृह्य शत्रोरभिप्रायमुपावृत्तां च पश्य माम् ॥ १३
- एवमुक्त्वा ततो गत्वा समीपं तस्य रक्षसः ।
 शुश्राव कथितं तस्य रावणस्य समन्त्रिणः ॥ १४
- सा श्रुत्वा निश्चयं तस्य निश्चयज्ञा दुरात्मनः ।
 पुनरेवागमत्क्षिप्रमशोकवनिकां तदा ॥ १५
- सा प्रविष्टा पुनस्तत्र ददर्श जनकात्मजाम् ।
 प्रतीक्षमाणां स्वामेव भ्रष्टपद्मामिव श्रियम् ॥ १६
- तां तु सीता पुनः प्राप्तां सरमां बल्लुभाषिणीम् ।
 परिष्वज्य च सुस्निग्धं ददौ च स्वयमासनम् ॥ १७
- इहासीना सुखं सर्वमाख्याहि मम तत्त्वतः ।
 क्रूरस्य निश्चयं तस्य रावणस्य दुरात्मनः ॥ १८
- एवमुक्ता तु सरमा सीतया वेपमानया ।
 कथितं सर्वमाचष्टे रावणस्य समन्त्रिणः ॥ १९
- न मोक्षयसि त्वां सुश्रोणि विना युद्धेन रावणः ।
 जनन्या राक्षसेन्द्रो वै त्वन्मोक्षार्थं बृहद्वचः ।
 अविद्धेन च वैदेहि मन्त्रिवृद्धेन बोधितः ॥ २०

- दीयतामभिसत्कृत्य मनुजेन्द्राय मैथिली ।
निदर्शनं ते पर्याप्तं जनस्थाने यदद्भुतम् ॥ २१
- लङ्घनं च समुद्रस्य दर्शनं च हनूमतः ।
वधं च रक्षसां युद्धे कः कुर्यान्मानुषो भुवि ॥ २२
- एवं स मन्त्रिवृद्धेन मात्रा च बहु भाषितः ।
न त्वामुत्सहते मोक्तुमर्थमर्थपरो यथा ॥ २३
- नोत्सहत्यमृतो मोक्तुं युद्धे त्वामिति मैथिलि ।
सामात्यस्य नृशंसस्य निश्चयो ह्येष वर्तते ॥ २४
- तदेषा निश्चिता बुद्धिर्मृत्युलोभादुपस्थिता ।
भयान्न शक्तस्त्वां मोक्तुमनिरस्तस्तु संयुगे ॥ २५
- राक्षसानां च सर्वेषामात्मनश्च वधेन हि ॥ २६
- निहत्य रावणं संख्ये सर्वथा निशितैः शरैः ।
प्रतिनेष्यति रामस्त्वामयोध्यामसितेक्षणे ॥ २७
- एतस्मिन्नन्तरे शब्दो भेरीशङ्खसमाकुलः ।
श्रुतो वानरसैन्यानां कम्पयन्धरणीतलम् ॥ २८

श्रुत्वा तु तद्वानरसैन्यशब्दं

लङ्कागता राक्षसराजभृत्याः ।

अष्टौजसो दैन्यपरीतचेष्टाः

श्रेयो न पश्यन्ति नृपस्य दोषात् ॥ २९

इति चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥



पञ्चविंशः सर्गः ॥

तेन शङ्खविमिश्रेण भेरीशब्देन राघवः ।

उपयाति महाबाहू रामः परपुरञ्जयः ॥ १

तं निनादं निशम्याथ रावणो राक्षसेश्वरः ।

मुहूर्ते ध्यानमास्थाय सचिवानभ्युदैक्षत ॥ २

अथ तान्सचिवांस्तत्र सर्वानाभाष्य रावणः ।

सभां सन्नादयन्सर्वामित्युवाच महाबलः ।

जगत्सन्तापनः क्रूरो गर्हयन् राक्षसेश्वरः ॥ ३

तरणं सागरस्यापि विक्रमं बलसञ्चयम् ।

यदुक्तवन्तो रामस्य भवन्तस्तन्मया श्रुतम् ॥ ४

भवतश्चाप्यहं वेद्मि युद्धे सत्यपराक्रमान् ।

तूष्णीकानीक्षतोऽन्योन्यं विदित्वा रामविक्रमम् ॥ ५

ततस्तु सुमहाप्राज्ञो माल्यवान्नाम राक्षसः ।

रावणस्य वचः श्रुत्वा मातुः पैतामहोऽब्रवीत् ॥ ६

विद्यास्वभिविनीतो यो राजा राजन्नयानुगः ।

स शास्ति चिरमैश्वर्यमरींश्च कुरुते वशे ॥ ७

सन्दधानो हि कालेन विगृह्णंश्चारिभिः सह ।

स्वपक्षवर्धनं कुर्वन् महदैश्वर्यमश्नुते ॥ ८

सपर्वतवनां कृत्स्नां महीं प्राप्यापि भूमिपः ।

तेजोभिर्दर्शयन्नर्थं क्षिप्रमेवोपहीयते ॥ ९

हीयमानेन कर्तव्यो राज्ञा सन्धिः समेन च ।

न शत्रुमवमन्येत ज्यायान्कुर्वीत विग्रहम् ॥ १०

तन्मह्यं रोचते सन्धिः सह रामेण रावण ।

यदर्थमभियुक्ताः स्म सीता तस्मै प्रदीयताम् ॥ ११

यस्य देवर्षयः सर्वे गन्धर्वाश्च जयैषिणः ।

विरोधं मा गमस्तेन सन्धिस्ते तेन रोचताम् ॥ १२

कामाद्वा यदि वा लोभान्मोहाद्वा यत्पुरा कृतम् ।

कृत्तिमं त्रिषु लोकेषु कियतां सांप्रतं हितम् ॥ १३

असृजद्भगवान्पक्षौ द्वावेव हि पितामहः ।

सुराणामसुराणां च धर्माधर्मौ तदाश्रयौ ॥ १४

धर्मो हि श्रूयते पक्ष अमराणां महात्मनाम् ।

अधर्मो रक्षसां पक्षो ह्यसुराणां च रावण ॥ १५

धर्मो वै ग्रसतेऽधर्मं ततः कृतमभूद्युगम् ।

अधर्मो ग्रसते धर्मं ततस्तिष्ठयः प्रवर्तते ॥ १६

तत्त्वया चरता लोकान् धर्मो विनिहतो महान् ।

अधर्मः प्रगृहीतश्च तेनास्मद्वलिनः परे ॥ १७

स प्रमादाद्विवृद्धस्तेऽधर्मोऽभिग्रसते हि नः ।

विवर्धयति पक्षं च सुराणां सुरभावनः ॥ १८

विषयेषु प्रसक्तेन यत्किञ्चित्कारिणा त्वया ।

ऋषीणामग्निकल्पानामुद्वेगो जनितो महान् ।

तेषां प्रभावो दुर्धर्षः प्रदीप्त इव पावकः ॥ १९

तपसा भावितात्मानो धर्मस्यानुग्रहे रताः ।

मुख्यैर्यज्ञैर्यजन्त्येते नित्यं तैस्तैर्द्विजातयः ॥ २०

जुह्वत्यग्नींश्च विधिवद्वेदांश्चोच्चैरधीयते ।

अभिभूय च रक्षांसि ब्रह्मघोषानुदैरयन् ॥ २१

दिशो विप्रद्रुताः सर्वाः स्तनयित्नुरिवोष्णगे ।

ऋषीणामग्निकल्पानामग्निहोत्रसमुत्थितः ॥ २२

आदत्ते रक्षसां तेजो धूमो व्याप्य दिशो दश ।

तेषु तेषु च देशेषु पुण्येष्वेव दृढव्रतैः ॥ २३

चर्यमाणं तपस्तीव्रं सन्तापयति राक्षसान् ।

देवदानवयक्षेभ्यो गृहीतश्च वरस्त्वया ॥ २४

मानुषा वानरा ऋक्षा गोलाङ्गूला महाबलाः ।

बलवन्त इहागम्य गर्जन्ति दृढविक्रमाः ॥ २५

उत्पातान्विविधान्दृष्ट्वा घोरान्बहुविधांस्तथा ।

विनाशमनुपश्यामि सर्वेषां रक्षसामहम् ॥ २६

खराभिस्तनिता घोरा मेघाः प्रतिभयङ्कराः ।

शोणितेनाभिवर्षन्ति लङ्कामुष्णेन सर्वतः ॥ २७

रुदतां वाहनानां च प्रपतन्त्यास्रविन्दवः ।

ध्वजा ध्वस्ता विवर्णाश्च न प्रमान्ति यथा पुरा ॥ २८

व्याला गोमायवो गृध्रा वाश्यन्ति च सुभैरवम् ।

प्रविश्य लङ्कामनिशं समवायांश्च कुर्वते ॥ २९

कालिकाः पाण्डुरैर्दन्तैः प्रहसन्त्यग्रतः स्थिताः ।

स्त्रियः स्वप्नेषु मुष्णन्ति गृहाणि प्रतिभाष्य च ॥ ३०

गृहाणां बलिकर्माणि श्वानः पर्युपभुञ्जते ।

खरा गोषु प्रजायन्ते मूषिका नकुलैः सह ॥ ३१

मार्जारा द्वीपिभिः सार्धं सूकराः शुनकैः सह ।

किन्नरा राक्षसैश्चापि समेयुर्मानुषैः सह ॥ ३२

पाण्डुरा रक्तपादाश्च विहङ्गाः कालचोदिताः ।

राक्षसानां विनाशाय कपोता विचरन्ति च ॥ ३३

बीचीकूचीति वाश्यन्त्यः शारिका वेश्मसु स्थिताः ।

पतन्ति ग्रथिताश्चापि निर्जिताः कलहैषिणः ॥ ३४

पक्षिणश्च मृगाः सर्वे प्रत्यादित्यं रुदन्ति वै ।

करालो विकटो मुण्डः पुरुषः कृष्णपिङ्गलः ॥ ३५

कालो गृहाणि सर्वेषां काले कालेऽन्ववेक्षते ।

एतान्यन्यानि दुष्टानि निमित्तान्युत्पतन्ति च ॥ ३६

विष्णुं मन्यामहे देवं मानुषं देहमास्थितम् ।

न हि मानुषमात्रोऽसौ राघवो दृढविक्रमः ॥ ३७

येन बद्धः समुद्रस्य स सेतुः परमाद्भुतः ।

कुरुष्व नरराजेन सन्धिं रामेण रावण ॥

३८

सीतार्थं ते महाप्राज्ञ महद्भयमुपस्थितम् ।

ज्ञात्वा प्रधार्य कार्याणि क्रियतामायतिक्षमम् ॥ ३९

इदं वचस्तत्र निगद्य माल्यवान्

परीक्ष्य रक्षोधिपतेर्मनः पुनः ।

अनुत्तमेषूत्तमपौरुषो बली

वभूव तूष्णीं समवेक्ष्य रावणम् ॥

४०

स तद्वचो माल्यवता प्रभाषितं

दशाननो न प्रतिशुश्रुवे तदा ।

भृशं जगर्हे च सुदुष्टमानसो

मुमूर्षुरत्युच्चवचांस्युदीरयन् ॥

४१

इति पञ्चत्रिंशः सर्गः ॥



षट्त्रिंशः सर्गः ॥

तच्च माल्यवतो वाक्यं हितमुक्तं दशाननः ।

न मर्षयति दुष्टात्मा कालस्य वशमागतः ॥

१

स बद्ध्वा भ्रुकुटिं वक्त्रे क्रोधस्य वशमागतः ।

अमर्षात्परिवृत्ताक्षो माल्यवन्तमथाब्रवीत् ॥ २

हितबुद्ध्या यदहितं वचः परुषमुच्यते ।

परपक्षं प्रविश्यैव नैतच्छ्रोत्रसुखं मम ॥ ३

मानुषं कृपणं राममेकं शाखामृगाश्रयम् ।

समर्थं मन्यसे केन त्यक्तं पित्रा वनाश्रयम् ॥ ४

रक्षसामीश्वरं मां च देवतानां भयङ्करम् ।

हीनं मां मन्यसे केन अहीनं सर्वविक्रमैः ॥ ५

वीरद्वेषेण वा शङ्के पक्षपातेन वा रिपोः ।

त्वयाऽहं परुषाण्युक्तः परप्रोत्साहनेन वा ॥ ६

प्रभवन्तं पदस्थं हि परुषं कोऽभिधास्यति ।

पण्डितः शास्त्रतत्त्वज्ञो विना प्रोत्साहनाद्रिपोः ॥ ७

आनीय च वनात्सीतां पद्महीनामिव श्रियम् ।

किमर्थं प्रतिदास्यामि रायवस्य भयादहम् ॥ ८

वृतं वानरकोटीभिः ससुग्रीवं सलक्ष्मणम् ।

पश्य कैश्चिदहोभिस्त्वं राघवं निहतं मया ॥ ९

द्वन्द्वे यस्य न तिष्ठन्ति दैवतान्यपि संयुगे ।
स कस्माद्रावणो युद्धे भयमाहारयिष्यति ॥ १०

द्विधा भज्येयमप्येवं न नमेयं तु कस्यचित् ।
एष मे सहजो दोषः स्वभावो दुरतिक्रमः ॥ ११

यदि तावत्समुद्रे तु सेतुर्बद्धो यदृच्छया ।
रामेण विस्मयः कोऽत्र येन ते भयमागतम् ॥ १२

स तु तीर्त्वाऽर्णवं रामः सह वानरसेनया ।
प्रतिजानामि ते सत्यं न जीवन् प्रतियास्यति ॥ १३

एवं ब्रुवाणं संरब्धं रुष्टं विज्ञाय रावणम् ।
व्रीडितो माल्यवान् वाक्यं नोत्तरं प्रत्यपद्यत ॥ १४

चिन्तयन्मनसा तस्य दुष्कर्मपरिपाकजम् ।
पापं नाशयति ह्येनं स्वस्य राष्ट्रस्य राक्षसैः ॥ १५

जयाशिषा च राजानं वर्धयित्वा यथोचितम् ।
माल्यवानभ्यनुज्ञातो जगाम स्वं निवेशनम् ॥ १६

रावणस्तु सहामात्यो मन्त्रयित्वा विमृश्य च ।
लङ्कायामतुलां गुप्तिं कारयामास राक्षसैः ॥ १७

व्यादिदेश च पूर्वस्यां प्रहस्तं द्वारि राक्षसम् ।
 दक्षिणस्यां महावीर्यौ महापार्श्वमहोदरौ ।
 व्यादिदेश महाकायौ राक्षसैर्बहुभिर्वृतौ ॥

१८

पश्चिमायामथो द्वारि पुत्रमिन्द्रजितं तथा ।
 व्यादिदेश महामायं राक्षसैर्बहुभिर्वृतम् ॥

१९

उत्तरस्यां पुरद्वारि व्यादिश्य शुकसारणौ ।
 स्वयं चात्र भविष्यामि मन्त्रिणस्तानुवाच ह ॥

२०

राक्षसं तु विरूपाक्षं महावीर्यपराक्रमम् ।
 मध्यमेऽस्थापयद्गुल्मे बहुभिः सह राक्षसैः ॥

२१

एवं विधानं लङ्कायां कृत्वा राक्षसपुङ्गवः ।
 कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यते कालचोदितः ॥

२२

विसर्जयामास ततः स मन्त्रिणो

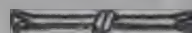
विधानमाज्ञाप्य पुरस्य पुष्कलम् ।

जयाशिषा मन्त्रिगणेन पूजितो

विवेश चान्तःपुरमृद्धिमन्महत् ॥

२३

इति षट्त्रिंशः सर्गः ॥



सप्तत्रिंशः सर्गः ॥

नरवानरराजौ तौ स च वायुसुतः कपिः ।

जाम्बवानृक्षराजश्च राक्षसश्च विभीषणः ॥

१

अङ्गदो वालिपुत्रश्च सौमित्रिः शरभः कपिः ।

सुषेणः सहदायादो मैन्दो द्विविद एव च ॥

२

गजो गवाक्षः कुमुदो नलोऽथ पनसस्तथा ।

अमित्रविषयं प्राप्ताः समवेताः समर्थयन् ॥

३

इयं सा लक्ष्यते लङ्का पुरी रावणपालिता ।

सासुरोरगगन्धर्वैरमरैरपि दुर्जया ॥

४

कार्यसिद्धिं पुरस्कृत्य मन्त्रयध्वं विनिर्णये ।

नित्यं सन्निहितो ह्यल रावणो राक्षसाधिपः ॥

५

तथा तेषु ब्रुवाणेषु रावणावरजोऽब्रवीत् ।

वाक्यमग्राम्यपदवत् पुष्कलार्थं विभीषणः ॥

६

अनलः शरमश्चैव संपातिः प्रघसस्तथा ।

गत्वा लङ्कां ममामात्याः पुरीं पुनरिहागताः ॥

७

भूत्वा शकुनयः सर्वे प्रविष्टाश्च रिपोर्बलम् ।
विधानं विहितं यच्च तद्दृष्ट्वा समुपस्थिताः ॥ ८

संविधानं यदाहुस्ते रावणस्य दुरात्मनः ।
राम तद्ब्रुवतः सर्वं याथातथ्येन मे शृणु ॥ ९

पूर्वं प्रहस्तः सबलो द्वारमासाद्य तिष्ठति ।
दक्षिणं च महावीर्यो महापार्श्वमहोदरौ ॥ १०

इन्द्रजित्पश्चिमद्वारं राक्षसैर्बहुभिर्वृतः ।
पट्टसासिधनुष्मद्भिः शूलमुद्गरपाणिभिः ॥ ११

नानाप्रहरणैः शूरैरावृतो रावणात्मजः ।
राक्षसानां सहस्रैस्तु बहुभिः शस्त्रपाणिभिः ॥ १२

युक्तः परमसंविग्नो राक्षसैर्बहुभिर्वृतः ।
उत्तरं नगरद्वारं रावणः स्वयमास्थितः ॥ १३

विरूपाक्षस्तु महता शूलखड्गधनुष्मता ।
बलेन राक्षसैः सार्धं मध्यमं गुल्ममास्थितः ॥ १४

एतानेवंविधान् गुल्मालङ्कायां समुदीक्ष्य ते ।
मामकाः सचिवाः सर्वे पुनः शीघ्रमिहागताः ॥ १५

- गजानां च सहस्रं च रथानामयुतं पुरे ।
हयानामयुते द्वे च साग्रकोटिश्च रक्षसाम् ॥ १६
- विक्रान्ता बलवन्तश्च संयुगेष्वततायिनः ।
इष्टा राक्षसराजस्य नित्यमेते निशाचराः ॥ १७
- एकैकस्यात्र युद्धार्थे राक्षसस्य निशां पते ।
परिवारः सहस्राणां सहस्रमुपतिष्ठते ॥ १८
- एतां प्रवृत्तिं लङ्कायां मन्त्रिप्रोक्तां विभीषणः ।
एवमुक्त्वा महाबाहू राक्षसांस्तानदर्शयत् ॥ १९
- लङ्कायां सचिवैः सर्वं रामाय प्रत्यवेदयत् ।
रामं कमलपत्राक्षमिदमुत्तरमब्रवीत् ॥ २०
- रावणावरजः श्रीमान् रामप्रियचिकीर्षया ।
कुबेरं तु यदा राम रावणः प्रत्यबुद्धयत ।
षष्टिः शतसहस्राणि तदा निर्यान्ति राक्षसाः ॥ २१
- पराक्रमेण वीर्येण तेजसा सत्त्वगौरवात् ।
सदृशा येऽत्र दर्पेण रावणस्य दुरात्मनः ॥ २२
- अत्र मन्युर्न कर्तव्यो रोषये त्वां न भीषये ।
समर्थो ह्यसि वीर्येण सुराणामपि निग्रहे ॥ २३

तद्भवांश्चतुरङ्गेण बलेन महता वृतः ।

व्यूह्येदं वानरानीकं निर्मथिष्यसि रावणम् ॥

२४

रावणावरजे वाक्यमेवं ब्रुवति राघवः ।

शत्रूणां प्रतिघातार्यमिदं वचनमब्रवीत् ॥

२५

पूर्वद्वारे तु लङ्काया नीलो वानरपुङ्गवः ।

प्रहस्तप्रतियोद्धा स्याद्वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥

२६

अङ्गदो वालिपुत्रस्तु बलेन महता वृतः ।

दक्षिणे बाधतां द्वारे महापार्श्वमहोदरौ ॥

२७

हनुमान्प्रश्चिमद्वारं निपीड्य पवनात्मजः ।

प्रविशत्वप्रमेयात्मा बहुभिः कपिभिर्वृतः ॥

२८

दैत्यदानवसङ्घानामृषीणां च महात्मनाम् ।

विप्रकारप्रियः क्षुद्रो वरदानबलान्वितः ॥

२९

परिक्रामति यः सर्वलोकान् सन्तापयन् प्रजाः ।

तस्याहं राक्षसेन्द्रस्य स्वयमेव वधे धृतः ॥

३०

उत्तरं नगरद्वारमहं सौमिलिणा सह ।

निपीड्याभिप्रवेक्ष्यामि सबलो यत्र रावणः ॥

३१

वानरेन्द्रश्च बलवान् ऋक्षराजश्च वीर्यवान् ।
राक्षसेन्द्रानुजश्चैव गुल्मो भवतु मध्यमः ॥ ३२

न चैव मानुषं रूपं कार्यं हरिभिराहवे ।
एषा भवतु संज्ञा नो युद्धेऽस्मिन् वानरे बले ॥ ३३

वानरा एव नश्चिह्नं स्वजनेऽस्मिन् भविष्यति ।
वयं तु मानुषेणैव सप्त योत्स्यामहे परान् ॥ ३४

अहमेष सह भ्राता लक्ष्मणेन महौजसा ।
आत्मना पञ्चमश्चायं सखा मम विभीषणः ॥ ३५

स रामः कृत्यसिद्धयर्थमेवमुक्त्वा विभीषणम् ।
सुवेलारोहणे बुद्धिं चकार मतिमान्मतिम् ॥ ३६

रमणीयतरं दृष्ट्वा सुवेलस्य गिरेस्तटम् ॥ ३७

इति सप्तत्रिंशः सर्गः ॥



अष्टत्रिंशः सर्गः ॥

स तु कृत्वा सुवेलस्य मतिमारोहणं प्रति ।
लक्ष्मणानुगतो रामः सुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ १

विभीषणं च धर्मज्ञमनुरक्तं निशाचरम् ।

मन्त्रज्ञं च विधिज्ञं च श्लक्ष्णया परया गिरा ॥ २

सुवेलं साधुशैलेन्द्रमिमं धातुशतैश्चितम् ।

अध्यारोहामहे सर्वे वत्स्यामोऽत्र निशामिमाम् ॥ ३

लङ्कां चालोकयिष्यामो निलयं तस्य रक्षसः ।

येन मे मरणान्ताय हता भार्या दुरात्मना ॥ ४

येन धर्मो न विज्ञातो न वृत्तं न कुलं तथा ।

राक्षस्या नीचया बुद्ध्या येन तद्गर्हितं कृतम् ॥ ५

तस्मिन्मे वर्धते रोषः कीर्तिते राक्षसाधमे ।

यस्यापराधान्नीचस्य वधं द्रक्ष्यामि रक्षसाम् ॥ ६

एको हि कुरुते पापं कालपाशवशं गतः ।

नीचेनात्मापचारेण कुलं तेन विनश्यति ॥ ७

एवं स मन्त्रयन्नेव सक्रोधो रावणं प्रति ।

रामः सुवेलं वासाय चित्रसानुमुपारुहत् ॥ ८

पृष्ठतो लक्ष्मणश्चैनमन्वगच्छत्समाहितः ।

सशरं चापमुद्यम्य सुमहद्विक्रमे रतः ॥ ९

- तमन्वरोहत्सुग्रीवः सामात्यः सविभीषणः ।
हनुमानङ्गदो नीलो मैन्दो द्विविद एव च ॥ १०
- गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः ।
पनसः कुमुदश्चैव हरो रम्भश्च यूथपः ॥ ११
- जाम्बवांश्च सुषेणश्च ऋषभश्च महामतिः ।
दुर्मुखश्च महातेजास्तथा शतबलिः कपिः ॥ १२
- एते चान्ये च बहवो वानराः शीघ्रगामिनः ।
ते वायुवेगप्रवणास्तं गिरिं गिरिचारिणः ॥ १३
- अध्यारोहन्त शतशः सुवेलं यत्र राघवः ।
ततः सुवेलमारुह्य रामस्तैः सह वानरैः ।
विषसाद गिरेस्तस्य शृङ्गे समतले शुभे ॥ १४
- ततः कपिगणाः सर्वे समावृत्य द्वियोजनम् ।
सुवेलमध्यमारोहन् प्लवन्तो दक्षिणामुखाः ॥ १५
- ते त्वदीर्घेण कालेन गिरिमारुह्य सर्वतः ।
ददृशुः शिखरे तस्य विषक्तामिव खे पुरीम् ॥ १६
- तां शुभां प्रवरद्वारां प्राकारपरिशोभिताम् ।
लङ्कां राक्षससम्पूर्णां ददृशुर्हरियूथपाः ॥ १७

प्राकारचयसंस्थैश्च तथा नीलैर्निशाचरैः ।

ददृशुस्ते हरिश्रेष्ठाः प्राकारमपरं कृतम् ॥

१८

ते दृष्ट्वा वानराः सर्वे राक्षसान् युद्धकाङ्क्षिणः ।

मुमुचुर्विविधान्नादांस्तत्र रामस्य पश्यतः ॥

१९

ततोऽस्तमगमत्सूर्यः सन्ध्यया प्रतिरञ्जितः ।

पूर्णचन्द्रप्रदीप्ता च क्षपा समभिवर्तते ॥

२०

सुवेलपृष्ठं प्राप्ता सा महतीराघवानुगा ।

शुशुभे वानरी सेना प्रदोषसमये स्थिता ॥

२१

ततः स रामो हरिवाहिनीपति-

र्विभीषणेन प्रतिनन्द्य सत्कृतः ।

सलक्ष्मणो यूथपयूथसंवृतः

सुवेलपृष्ठे न्यवसद्यथासुखम् ॥

२२

इति अष्टत्रिंशः सर्गः ॥



एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥



तां रालिमुषितास्तत्र सुवेले हरिपुङ्गवाः ।

लङ्कायां ददृशुर्वोरा वनान्युपवनानि च ॥

१

समसौम्यानि रम्याणि विशालान्यायतानि च ।
दृष्टिरम्याणि ते दृष्ट्वा बभूवुर्जातविस्मयाः ॥ २

चम्पकाशोकपुन्नागसालतालसमाकुला ।
तमालवनसंछन्ना नागमालासमावृता ॥ ३

हिन्तालैरर्जुनैर्नीपैः सप्तपर्णैश्च पुष्पितैः ।
तिलकैः कर्णिकारैश्च पाटलैश्च समन्ततः ॥ ४

शुशुभे पुष्पिताग्रैश्च लतापरिगतैर्द्रुमैः ।
लङ्का बहुविधैर्दिव्यैर्यथेन्द्रस्यामरावती ॥ ५

विचित्रकुसुमोपेतै रक्तकोमलपल्लवैः ।
शाद्वलैश्च तथा नीलैश्चित्राभिर्वनराजिभिः ॥ ६

गन्धाढ्यान्यभिरम्याणि पुष्पाणि च फलानि च ।
धारयन्त्यगमास्तत्र भूषणानीव मानवाः ॥ ७

तच्चैत्ररथसङ्काशं मनोज्ञं नन्दनोपमम् ।
वनं सर्वर्तुकं रम्यं शुशुभे षट्पदायुतम् ॥ ८

नत्यूहकोयष्टिमकैर्नृत्यमानैश्च बर्हिभिः ।
स्तं परभृतानां च शुश्रुवुर्वननिर्झरे ॥ ९

नित्यमत्तविहङ्गानि भ्रमराचरितानि च ।

कोकिलाकुलषण्डानि विहङ्गाभिरुतानि च ॥

१०

भृङ्गराजाभिगीतानि भ्रमरैः सेवितानि च ।

कोणालकविघुष्टानि सारसाभिरुतानि च ॥

११

विविशुस्ते ततस्तानि वनान्युपवनानि च ।

हृष्टाः प्रमुदिता वीरा हरयः कामरूपिणः ॥

१२

तेषां प्रविशतां तत्र वानराणां महौजसाम् ।

पुष्पसंसर्गसुरभिर्ववौ ब्राणसुखोऽनिलः ॥

१३

अन्ये तु हरिवीराणां यूथान्निष्क्रम्य यूथपाः ।

सुग्रीवेणाभ्यनुज्ञाता लङ्कां जग्मुः पताकिनीम् ॥

१४

वित्रासयन्तो विहगांस्त्रासयन्तो मृगद्विपान् ।

कम्पयन्तश्च तां लङ्कां नादैस्सर्वैर्नदतां वराः ॥

१५

कुर्वन्तस्ते महावेगा महीं चरणपीडिताम् ।

रजश्च सहसैवोर्ध्वं जगाम चरणोत्थितम् ॥

१६

ऋक्षाः सिंहा वराहाश्च महिषा वारणा मृगाः ।

तेन शब्देन वित्रस्ता जग्मुर्भीता दिशो दश ॥

१७

शिखरं तत्त्रिकूटस्य प्रांशु चैकं दिविस्पृशम् ।

समन्तात्पुष्पसंछन्नं महारजतसन्निभम् ॥ १८

शतयोजनविस्तीर्णं विमलं चारुदर्शनम् ।

श्लक्ष्णं श्रीमन्महच्चैव दुष्प्रापं शकुनैरपि ।

मनसाऽपि दुरारोहं किं पुनः कर्मणा जनैः ॥ १९

निविष्टा तत्र शिखरे लङ्का रावणपालिता ।

शतयोजनविस्तीर्णा त्रिंशद्योजनमायता ॥ २०

सा पुरी गोपुरैरुच्चैः पाण्डुराम्बुदसन्निभैः ।

काञ्चनेन च सालेन राजतेन च शोभिता ॥ २१

प्रासादैश्च विमानैश्च लङ्काऽत्यर्थं विराजते ।

घनैरिवातपापाये मध्यमं वैष्णवं पदम् ॥ २२

यस्यां स्तम्भसहस्रेण प्रासादः समलंकृतः ।

कैलासशिखराकारो दृश्यते खमिवोल्लिखन् ॥ २३

चैत्यः स राक्षसेन्द्रस्य बभूव पुरभूषणम् ।

शतेन रक्षसां नित्यं यः समग्रेण रक्ष्यते ॥ २४

मनोज्ञां काननवतीं पर्वतैरुपशोभिताम् ।

नानाधातुविचितैश्च उद्यानैरुपशोभिताम् ॥ २५

नानाविहगसंघुष्टां नानामृगनिषेविताम् ।
नानाकुसुमसंछन्नां नानाराक्षससेविताम् ॥

२४

तां समृद्धां समृद्धार्था लक्ष्मीवाँल्लक्ष्मणाग्रजः ।
रावणस्य पुरीं रामो ददर्श सह वानरैः ॥

२७

तां महागृहसंवाधां दृष्ट्वा लक्ष्मणपूर्वजः ।
नगरीममरप्रख्यो विस्मयं प्राप वीर्यवान् ॥

२८

तां रत्नपूर्णां बहुसंविधानां
प्रासादमालाभिरलंकृतां च ।

पुरीं महायन्त्रकवाटमुख्यां
ददर्श रामो महता बलेन ॥

२९

इति एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥



चत्वारिंशः सर्गः ॥

ततो रामः सुवेलाग्रं योजनद्वयमण्डलम् ।
आरूरोह ससुग्रीवो हरियूथपसंवृतः ॥

१

स्थित्वा मुहूर्तं तत्रैव दिशो दश विलोकयन् ।
लिङ्गकूटशिखरे रम्ये निर्मितां विश्वकर्मणा ॥

२

ददर्श लङ्कां सुन्यस्तां रम्यकाननशोभिताम् ।
तस्यां गोपुरशृङ्गस्थं राक्षसेन्द्रं दुरासदम् ॥ ३

श्वेतचामरपर्यन्तं विजयच्छत्रशोभितम् ।
रक्तचन्दनसंलितं रत्नाभरणभूषितम् ॥ ४

नीलजीमूतसङ्काशं हेमसंछादिताम्बरम् ।
ऐरावतविषाणाग्रैरुत्कृष्टकिणवक्षसम् ॥ ५

शशलोहितरागेण संवीतं रक्तवाससा ।
सन्ध्यातपेन संवीतं मेघराशिमिवाम्बरे ॥ ६

पश्यतां वानरेन्द्राणां राघवस्यापि पश्यतः ।
दर्शनाद्राक्षसेन्द्रस्य सुग्रीवः सहसोत्थितः ॥ ७

क्रोधवेगेन सन्तप्तः सत्वेन च बलेन च ।
अचलाग्रादथोत्थाय पुच्छुवे गोपुरस्थले ॥ ८

स्थित्वा मुहूर्तं संग्रेक्ष्य निर्भयेनान्तरात्मना ।
तृणीकृत्य च तद्रक्षः सोऽब्रवीत्परुषं वचः ॥ ९

लोकनाथस्य रामस्य सखा दासोऽस्मि राक्षस ।
न मया मोक्ष्यसेऽद्य त्वं पार्थिवेन्द्रस्य तेजसा ॥ १०

इत्युक्त्वा सहसोत्पत्य पुप्लुवे तस्य चोपरि ।

आकृष्य मकुटं चित्रं पातयित्वाऽपतद्भुवि ॥ १

समीक्ष्य तूर्णमायान्तमाबभाषे निशाचरः ।

सुग्रीवस्त्वं परोक्षं मे हीनग्रीवो भविष्यसि ॥ १

इत्युक्त्वोत्थाय तं क्षिप्रं बाहुभ्यामाक्षिपत्तले ।

कन्तुवत्तं समुत्थाय बाहुभ्यामाक्षिपद्धरिः ॥ १

परस्परं स्वेदविदिग्धगालौ

परस्परं शोणितदिग्धदेहौ ।

परस्परं श्लिष्टनिरुद्धचेष्टौ

परस्परं शालमलिकिंशुको यथा ॥ १४

मुष्टिप्रहारैश्च तलप्रहारै-

ररत्निघातैश्च कराग्रघातैः ।

तौ चक्रतुर्युद्धमसह्यरूपं

महाबलौ वानरराक्षसेन्द्रौ ॥ १५

कृत्वा नियुद्धं भृशमुग्रवेगौ

कालं चिरं गोपुरवेदिमध्ये ।

उत्क्षिप्य चाक्षिप्य विनम्य देहौ

पादक्रमाद्गोपुरवेदिलम्बौ ॥ १६

अन्योन्यमाविध्य विलम्बदेहौ

तौ पेततुः सालनिखातमध्ये ।

उत्पेततुर्भूतलमस्पृशन्तौ

स्थित्वा मुहूर्तं त्वभिनिश्चसन्तौ ॥

१७

आलिङ्ग्य चालिङ्ग्य च बाहुयोक्त्रैः

संयोजयामासतुराहवे तौ ।

संरम्भशिक्षाबलसंप्रयुक्तौ

सञ्चेरतुः संप्रति युद्धमार्गैः ॥

१८

शार्दूलसिंहाविव जातदर्पौ

गजेन्द्रपोताविव संप्रयुक्तौ ।

संहृत्य चापीड्य च तावुरोभ्यां

निपेततुर्वै युगपद्धरण्याम् ॥

१९

उद्यम्य चान्योन्यमधिक्षिपन्तौ

सञ्चक्रमाते बहुयुद्धमार्गैः ।

व्यायामशिक्षाबलसंप्रयुक्तौ

क्लमं न तौ जग्मतुराशु वीरौ ॥

२०

बाहूत्तमैर्वारणवारणाभै-

निवारयन्तौ वरवारणाभौ ।

चिरेण कालेन भृशं प्रयुक्तौ

सञ्चरतुर्मण्डलमार्गमाशु ॥

२

तौ परस्परमासाद्य यत्तावन्योन्यसूदने ।

मार्जारविव भक्षार्थं वितस्थाते मुहुर्मुहुः ॥

२

मण्डलानि विचित्राणि स्थानानि विविधानि च ।

गोमूत्रिकाणि चित्राणि गतप्रत्यागतानि च ॥

२

तिरश्चीनगतान्येव तथा वक्रगतानि च ।

परिमोक्षं प्रहाराणां वर्जनं परिधावनम् ॥

२

अभिद्रवणमाप्लावमास्थानं च सविग्रहम् ।

परावृत्तमपावृत्तमवद्रुतमवप्लुतम् ॥

२

उपन्यस्तमपन्यस्तं युद्धमार्गविशारदौ ।

तौ सञ्चरतुरन्योन्यं वानरेन्द्रश्च रावणः ॥

२

एतस्मिन्नन्तरे रक्षो मायाबलमथात्मनः ।

आरब्धुमुपसम्पेदे ज्ञात्वा तं वानराधिपः ॥

२

उत्पपात तदाऽऽकाशं जितकाशी जितक्लमः ।

रावणः स्थित एवात्र हरिराजेन वञ्चितः ॥

२

अथ हरिवरनाथः प्राप्य संग्रामकीर्तिं
निशिचरपतिमाजौ योजयित्वा श्रमेण ।
गगनमतिविशालं लङ्घयित्वाऽर्कसूनु-
हरिगणबलमध्ये रामपार्श्वं जगाम ॥

२९

इति स सवितृसूनुस्तत्र तत्कर्म कृत्वा
पवनगतिरनीकं प्राविशत्संप्रहृष्टः ।
रघुवरनृपसूनोर्विर्धयन् युद्धहर्षं
तरुमृगगणमुख्यैः पूज्यमानो हरीन्द्रः ॥

३०

इति चत्वारिंशः सर्गः ॥



एकचत्वारिंशः सर्गः ॥

अथ तस्मिन्निमित्तानि दृष्ट्वा लक्ष्मणपूर्वजः ।
सुग्रीवं संपरिष्वज्य तदा वचनमब्रवीत् ॥

१

असंमन्ज्य मया सार्धं तदिदं साहसं कृतम् ।
एवं साहसकर्माणि न कुर्वन्ति जनेश्वराः ॥

२

संशये स्थाप्य मां चेदं बलं च सविभीषणम् ।
कष्टं कृतमिदं वीर साहसं साहसप्रिय ॥

३

इदानीं मा कृथा वीर एवंविधमचिन्तितम् ।

त्वयि किञ्चित्समापन्ने किं कार्यं सीतया मम ॥ ४

भरतेन महाबाहो लक्ष्मणेन यवीयसा ।

शत्रुघ्नेन च शत्रुघ्न स्वशरीरेण वा पुनः ॥ ५

त्वयि चानागते पूर्वमिति मे निश्चिता मतिः ।

जानतश्चापि ते वीर्यं महेन्द्रवरुणोपम ॥ ६

हत्वाऽहं रावणं युद्धे सपुत्रबलवाहनम् ।

अभिषिच्य च लङ्कायां विभीषणमथापि च ॥ ७

भरते राज्यमावेश्य त्यक्ष्ये देहं महाबल ।

तमेवंवादिनं रामं सुग्रीवः प्रत्यभाषत ॥ ८

तव भार्यापहर्तारं दृष्ट्वा राघव रावणम् ।

मर्षयामि कथं वीर जानन् पौरुषमात्मनः ॥ ९

इत्येवंवादिनं वीरमभिनन्द्य स राघवः ।

लक्ष्मणं लक्ष्मिसम्पन्नमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १०

परिगृह्योदकं शीतं वनानि फलवन्ति च ।

बलौघं संविभज्येमं व्यूह्य तिष्ठाम लक्ष्मण ॥ ११

लोकक्षयकरं भीमं भयं पश्याम्युपस्थितम् ।

निबर्हणं प्रवीराणामृक्षवानररक्षसाम् ॥ १२

वाताश्च परुषा वान्ति कम्पते च वसुन्धरा ।

पर्वताग्राणि वेपन्ते नदन्ति धरणीधराः ॥ १३

मेघाः क्रव्यादसङ्काशाः परुषाः परुषस्वनाः ।

क्रूराः क्रूरं प्रवर्षन्ति मिश्रं शोणितबिन्दुभिः ॥ १४

रक्तचन्दनसङ्काशा सन्ध्या परमदारुणा ।

ज्वलच्च निपतत्येतदादित्यादग्निमण्डलम् ॥ १५

आदित्यमभिवाश्यन्ति जनयन्तो महद्भयम् ।

दीना दीनस्वरा घोरा अप्रशस्ता मृगद्विजाः ॥ १६

रजन्यामप्रकाशश्च सन्तापयति चन्द्रमाः ।

कृष्णरक्तांशुपर्यन्तो यथा लोकस्य संक्षये ॥ १७

ह्रस्वो रुक्षोऽप्रशस्तश्च परिवेषः सुलोहितः ।

आदित्यमण्डले नीलं लक्ष्म लक्ष्मण दृश्यते ॥ १८

दृश्यन्ते न यथावच्च नक्षत्राण्यभिवर्तते ।

युगान्तमिव लोकस्य पश्य लक्ष्मण शंसति ॥ १९

काकाः श्येनास्तथा गृध्रा नीचैः परिपतन्ति च ।

शिवाश्चाप्यशिवा वाचः प्रवदन्ति महास्वनाः ॥ २०

शैलैः शूलैश्च खड्गैश्च विसृष्टैः कपिराक्षसैः ।

भविष्यत्यावृता भूमिः मांसशोणितकर्दमा ॥ २१

क्षिप्रमद्य दुराधर्षा लङ्कां रावणपालिताम् ।

अभियाम जवेनैव सर्वतो हरिभिर्वृताः ॥ २२

इत्येवं तु वदन् वीरो लक्ष्मणं लक्ष्मणाग्रजः ।

तस्मादवातरच्छीघ्रं पर्वताग्रान्महाबलः ॥ २३

अवतीर्य च धर्मात्मा तस्माच्छैलात्स राघवः ।

परैः परमदुर्धर्षं ददर्श बलमात्मनः ॥ २४

संनह्य तु ससुग्रीवः कपिराजबलं महत् ।

कालज्ञो राघवः काले संयुगायाभ्यचोदयत् ॥ २५

ततः काले महाबाहुर्बलेन महता वृतः ।

प्रस्थितः पुरतो धन्वी लङ्कामभिमुखः पुरीम् ॥ २६

तं विभीषणसुग्रीवौ हनुमाञ्जाम्बवान्नलः ।

ऋक्षराजस्तथा नीलो लक्ष्मणश्चान्वयुस्तदा ॥ २७

- ततः पश्चात्सुमहती पृतनर्क्षवनौकसाम् ।
प्रच्छाद्य महतीं भूमिमनुयाति स्म राघवम् ॥ २८
- शैलशृङ्गाणि शतशः प्रवृद्धांश्च महीरुहान् ।
जगृहुः कुञ्जरप्रख्या वानराः परवारणाः ॥ २९
- तौ तु दीर्घेण कालेन भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
रावणस्य पुरीं लङ्कामासेदतुररिन्दमौ ॥ ३०
- पताकामालिनीं रम्यामुद्यानवनशोभिताम् ।
चित्रवप्रां सुदुष्प्रापामुच्चैः प्राकारतोरणाम् ॥ ३१
- तां सुरैरपि दुर्धर्षां रामवाक्यप्रचोदिताः ।
यथानिवेशं संपीड्य न्यविशन्त वनौकसः ॥ ३२
- लङ्कायास्तूत्तरद्वारं शैलशृङ्गमिवोन्नतम् ।
रामः सहानुजो धन्वी जुगोप च रुरोध च ॥ ३३
- लङ्कामुपनिविष्टश्च रामो दशरथात्मजः ।
लक्ष्मणानुचरो वीरः पुरीं रावणपालिताम् ॥ ३४
- उत्तरद्वारमासाद्य यत्र तिष्ठति रावणः ।
नान्यो रामाद्धि तद्द्वारं समर्थः परिरक्षितुम् ॥ ३५

रावणाधिष्ठितं भीमं वरुणेनेव सागरम् ।

सायुधै राक्षसैर्भीमैरभिगुप्तं समन्ततः ।

लघूनां त्रासजननं पातालमिव दानवैः ॥

३६

विन्यस्तानि च योधानां बहूनि विविधानि च ।

ददर्शायुधजालानि तथैव कवचानि च ॥

३७

पूर्वं तु द्वारमासाद्य नीलो हरिचमूपतिः ।

अतिष्ठत्सह मैन्देन द्विविदेन च वीर्यवान् ॥

३८

अङ्गदो दक्षिणद्वारं जग्राह सुमहाबलः ।

ऋषभेण गवाक्षेण गजेन गवयेन च ॥

३९

हनुमान् पश्चिमद्वारं ररक्ष बलवान् कपिः ।

प्लक्षश्चैव प्रभातश्च तावस्य सचिवावुभौ ।

प्रमाथिप्रघसाभ्यां च वीरैरन्यैश्च सङ्गतः ॥

४०

मध्यमे च स्वयं गुल्मे सुग्रीवः समतिष्ठत ।

सह सर्वैर्हरिश्चेष्टैः सुपर्णश्चसनोपमैः ॥

४१

वानराणां तु षट्त्रिंशत् कोट्यः प्रख्यातयूथपाः ।

निपीड्योपनिविष्टाश्च सुग्रीवो यत्र वानरः ॥

४२

शासनेन तु रामस्य लक्ष्मणः सविभीषणः ।
द्वारे द्वारे हरीणां तु कोटिं कोटिं न्यवेशयत् ॥ ४३

पश्चिमेन तु रामस्य सुग्रीवः सहजाम्भवान् ।
अदूरान्मध्यमे गुरमे तस्थौ बहुबलानुगः ॥ ४४

ते तु वानरशार्दूलाः शार्दूला इव दंष्ट्रिणः ।
गृहीत्वा द्रुमशैलाग्रान् हृष्टा युद्धाय तस्थिरे ॥ ४५

सर्वे विकृतलाङ्गूलाः सर्वे दंष्ट्रानखयुधाः ।
सर्वे विकृतचित्राङ्गाः सर्वे च विकृताननाः ॥ ४६

दशनागबलाः केचित् केचिद्दशगुणोत्तराः ।
केचिन्नागसहस्रस्य बभूवुस्तुल्यविक्रमाः ॥ ४७

सन्ति चौघबलाः केचित् केचिच्छतगुणोत्तराः ।
अप्रमेयबलाश्चान्ये तत्रासन् हरियूथपाः ॥ ४८

अद्भुतश्च विचित्रश्च तेषामासीत्समागमः ।
तत्र वानरसैन्यानां शलभानामिवोद्यमः ॥ ४९

परिपूर्णमिवाकाशं संछन्नेव च मेदिनी ।
लङ्कामुपनिविष्टैश्च सम्पतद्भिश्च वानरैः ॥ ५०

शतं शतसहस्राणां पृथगृक्षवनौकसाम् ।

लङ्काद्वाराण्युपाजग्मुरन्ये योद्धुं समन्ततः ॥ ५१

आवृतः स गिरिः सर्वैस्तैः समन्तात् प्लवङ्गमैः ।

अयुतानां सहस्रं च पुरीं तामभ्यवर्तत ॥ ५२

वानरैर्बलवद्भिश्च बभूव द्रुमपाणिभिः ।

संवृता सर्वतो लङ्का दुष्प्रवेशाऽपि वायुना ॥ ५३

राक्षसा विस्मयं जग्मुः सहसाऽभिनिपीडिताः ।

वानरैर्मेघसङ्काशैः शक्रतुल्यपराक्रमैः ॥ ५४

महाशब्दोऽभवत्तत्र बलौघस्याभिवर्ततः ।

सागरस्येव भिन्नस्य यथा स्यात् सलिलस्वनः ॥ ५५

तेन शब्देन महता सप्राकारा सतोरणा ।

लङ्का प्रचलिता सर्वा सशैलवनकानना ॥ ५६

रामलक्ष्मणगुप्ता सा सुग्रीवेण च वाहिनी ।

बभूव दुर्धर्षतरा सर्वैरपि सुरासुरैः ॥ ५७

राघवः सन्निवेश्यैव सैन्यं स्वं रक्षसां वधे ।

संमन्व्य मन्त्रिभिः सार्धं निश्चित्य च पुनः पुनः ॥ ५८

आनन्तर्यमभिप्रेप्सुः क्रमयोगार्थतत्त्ववित् ।

विभीषणस्यानुमते राजधर्ममनुस्मरन् ।

अङ्गदं वालितनयं समाहूयेदमब्रवीत् ॥ ५९

गत्वा सौम्य दशग्रीवं ब्रूहि मद्रचनात् कपे ।

लङ्घयित्वा पुरीं लङ्कां भयं त्यक्त्वा गतव्यथः ॥ ६०

भ्रष्टश्रीक गतैश्वर्यं मुमूर्षो नष्टचेतन ।

ऋषीणां देवतानां च गन्धर्वाप्सरसां तथा ॥ ६१

नागानामथ यक्षाणां राज्ञां च रजनीचर ।

यच्च पापं कृतं मोहादवलिप्तेन राक्षस ।

तस्य पापस्य संप्राप्ता व्युष्टिरद्य दुरावरा ॥ ६२

नूनमद्य गतो दर्पः स्वयंभूवरदानजः ।

यस्य दण्डधरस्तेऽहं दाराहरणकर्षितः ।

दण्डं धारयमाणस्तु लङ्काद्वारे व्यवस्थितः ॥ ६३

पदवीं देवतानां च महर्षीणां च राक्षस ।

राजर्षीणां च सर्वेषां गमिष्यसि युधि स्थितः ॥ ६४

बलेन येन वै सीतां मायया राक्षसाधम ।

मामतिक्रामयित्वा त्वं हतवांस्तद्विदर्शय ॥ ६५

अराक्षसमिमं लोकं कर्तास्मि निशितैः शरैः ।

न चेच्छरणमभ्येषि मामुपादाय मैथिलीम् ॥ ६६

धर्मात्मा रक्षसां श्रेष्ठः संप्राप्तोऽयं विभीषणः ।

लङ्कैश्वर्यं ध्रुवं श्रीमानयं प्राप्नोत्यकण्टकम् ॥ ६७

न हि राज्यमधर्मेण भोक्तुं क्षणमपि त्वया ।

शक्यं मूर्खसहायेन पापेनाविदितात्मना ॥ ६८

युद्धघस्व वा धृतिं कृत्वा शौर्यमालम्ब्य राक्षस ।

मच्छरैस्त्वं रणे शान्तस्ततः पूतो भविष्यसि ॥ ६९

यद्वा विशसि लोकांस्त्रीन् पक्षिभूतो मनोजवः ।

मम चक्षुष्पथं प्राप्य न जीवन् प्रतियास्यसि ॥ ७०

ब्रवीमि त्वां हितं वाक्यं क्रियतामौर्ध्वदैहिकम् ।

सुदृष्टा क्रियतां लङ्का जीवितं ते मयि स्थितम् ॥ ७१

इत्युक्तः स तु तारेयो रामेणाक्लिष्टकर्मणा ।

जगामाकाशमाविश्य मूर्तिमानिव हव्यवाह ॥ ७२

सोऽतिपत्य मुहूर्तेन श्रीमान् रावणमन्दिरम् ।

ददर्शासीनमव्यग्रं रावणं सचिवैः सह ॥ ७३

ततस्तस्याविदूरे स निपत्य हरिपुङ्गवः ।

दीप्ताग्निसदृशस्तस्यावङ्गदः कनकाङ्गदः ॥ ७४

तद्रामवचनं सर्वमन्यूनाधिकमुत्तमम् ।

सामात्यं श्रावयामास निवेद्यात्मानमात्मना ॥ ७५

दूतोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।

वालिपुत्रोऽङ्गदो नाम यदि ते श्रोत्रमागतः ॥ ७६

आह त्वां राघवो रामः कौसल्यानन्दवर्धनः ।

निष्पत्य प्रतियुद्धयस्व नृशंस पुरुषो भव ॥ ७७

हन्तास्मि त्वां सहामात्यं सपुत्रज्ञातिबान्धवम् ।

निरुद्धिमास्त्रयो लोका भविष्यन्ति हते त्वयि ॥ ७८

देवदानवयक्षाणां गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।

शत्रुमद्योद्धरिष्यामि त्वामृषीणां च कण्टकम् ॥ ७९

विभीषणस्य चैश्वर्यं भविष्यति हते त्वयि ।

न चेत् सत्कृत्य वैदेहीं प्रणिपत्य प्रदास्यसि ॥ ८०

इत्येवं परुषं वाक्यं ब्रुवाणे हरिपुङ्गवे ।

अमर्षवशमापन्नो निशाचरगणेश्वरः ॥ ८१

ततः स रोषताम्राक्षः शशास सचिवांस्तदा ।

गृह्यतामेष दुर्मेधा बध्यतामिति चासकृत् ॥ ८२

रावणस्य वचः श्रुत्वा दीप्ताग्निसमतेजसः ।

जगृहुस्तं ततो घोराश्चत्वारो रजनीचराः ॥ ८३

ग्राहयामास तारेयः स्वयमात्मानमात्मवान् ।

बलं दर्शयितुं वीरो यातुधानगणे तदा ॥ ८४

स तान् बाहुद्वये सक्तानादाय पतगानिव ।

प्रासादं शैलसङ्काशमुत्पपात।ङ्गदस्तदा ॥ ८५

तेऽन्तरिक्षाद्विनिर्धूतास्तस्य वेगेन राक्षसाः ।

भूमौ निपतिताः सर्वे राक्षसेन्द्रस्य पश्यतः ॥ ८६

ततः प्रासादशिखरं शैलशृङ्गमिवोन्नतम् ।

ददर्श राक्षसेन्द्रस्य वालिपुत्रः प्रतापवान् ॥ ८७

तत्पफाल पदाक्रान्तं दशग्रीवस्य पश्यतः ।

पुरा हिमवतः शृङ्गं वज्रिणेव विदारितम् ॥ ८८

भङ्क्त्वा प्रासादशिखरं नाम विश्राव्य चात्मनः ।

विनद्य सुमहानादमुत्पपात विहायसम् ॥ ८९

- व्यथयन् राक्षसान्सर्वान् हर्षयंश्चापि वानरान् ।
स वानराणां मध्ये तु रामपार्श्वमुपागतः ॥ ९०
- रावणस्तु परं चक्रे क्रोधं प्रासादधर्षणात् ।
विनाशं चात्मनः पश्यन्निश्वासपरमोऽभवत् ॥ ९१
- रामस्तु बहुभिर्हृष्टैर्निनदाद्भिः प्लवङ्गमैः ।
वृतो रिपुवधाकाङ्क्षी युद्धायैवाभ्यवर्तत ॥ ९२
- सुषेणस्तु महावीर्यो गिरिकूटोपमो हरिः ।
बहुभिः संवृतस्तत्र वानरैः कामरूपिभिः ॥ ९३
- चतुर्द्वाराणि सर्वाणि सुग्रीववचनात्कपिः ।
पर्यक्रामत दुर्धर्षो नक्षत्राणीव चन्द्रमाः ॥ ९४
- तेषामक्षौहिणिशतं समवेक्ष्य वनौकसाम् ।
लङ्कामुपनिविष्टानां सागरं चाभिवर्तताम् ॥ ९५
- राक्षसा विस्मयं जग्मुस्त्रासं जग्मुस्तथा परे ।
अपरे समरोद्धर्षाद्धर्षमेव प्रपेदिरे ॥ ९६
- कृत्स्नं हि कपिभिर्व्याप्तं प्राकारपरिखान्तरम् ।
ददृशू राक्षसा दीनाः प्राकारं वानरीकृतम् ।
हाहाकारमकुर्वन्त राक्षसा भयमोहिताः ॥ ९७

तस्मिन्महाभीषणके प्रवृत्ते
 कोलाहले राक्षसराजधान्याम् ।
 प्रगृह्य रक्षांसि महायुधानि
 युगान्तवाता इव संविचेरुः ॥

९८

इति एकचत्वारिंशः सर्गः ॥



द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥

ततस्ते राक्षसास्तत्र गत्वा रावणमन्दिरम् ।
 न्यवेदयन् पुरीं रुद्धां रामेण सह वानरैः ॥ १

रुद्धां तु नगरीं श्रुत्वा जातक्रोधो निशाचरः ।
 विधानं द्विगुणं कृत्वा प्रासादं सोऽध्यरोहत ॥ २

स ददर्शवृतां लङ्कां सशैलवनकाननाम् ।
 असंख्येयैर्हरिगणैः सर्वतो युद्धकाङ्क्षिभिः ॥ ३

स दृष्ट्वा वानरैः सर्वा वसुधां कवलीकृताम् ।
 कथं क्षपयितव्याः स्युरिति चिन्तापरोऽभवत् ॥ ४

स चिन्तयित्वा सुचिरं धैर्यमालम्ब्य रावणः ।
 राघवं हरियूथांश्च ददर्शयतलोचनः ॥ ५

राघवः सह सैन्येन मुदितो नाम पुप्लुवे ।
लङ्कां ददर्श गुप्तां वै सर्वतो राक्षसैर्वृताम् ॥ ६

दृष्ट्वा दाशरथिर्लङ्कां चित्रध्वजपताकिनीम् ।
जगाम मनसा सीतां दूयमानेन चेतसा ॥ ७

अत्र सा मृगशाबाक्षी मत्कृते जनकात्मजा ।
पीड्यते शोकसन्तप्ता कृशा स्थण्डिलशायिनी ॥ ८

पीड्यमानां स धर्मात्मा वैदेहीमनुचिन्तयन् ।
क्षिप्रमाज्ञापयामास वानरान् द्विषतां वधे ॥ ९

एवमुक्ते तु वचने रामेणाक्लिष्टकर्मणा ।
संहर्षमाणाः प्लवगाः सिंहनादैरनादयन् ॥ १०

शिखरैर्विकिरामैनां लङ्कां मुष्टिभिरेव वा ।
इति स्म दधिरे सर्वे मनांसि हरियूथपाः ॥ ११

उद्यम्य गिरिशृङ्गाणि शिखराणि महान्ति च ।
तरुंश्चोत्पात्य विविधांस्तिष्ठन्ति हरियूथपाः ॥ १२

प्रेक्षतो राक्षसेन्द्रस्य तान्यनीकानि भागशः ।
राघवप्रियकामार्थं लङ्कामारुरुहुस्तदा ॥ १३

ते ताम्रवक्त्राः हेमाभाः रामार्थे त्यक्तजीविताः ।
लङ्कामेवाभ्यवर्तन्त सालतालशिलायुधाः ॥ १४

ते द्रुमैः पर्वताग्रैश्च मुष्टिभिश्च प्लवङ्गमाः ।
प्राकाराग्राण्यनेकानि ममन्थुस्तोरणानि च ॥ १५

परिखाः पूरयन्ति स्म प्रसन्नसलिलायुताः ।
पांसुभिः पर्वताग्रैश्च तृणैः काष्ठैश्च वानराः ॥ १६

ततः सहस्रयूथाश्च कोटियूथाश्च वानराः ।
कोटीशतयुताश्चान्ये लङ्कामारुरुहुस्तदा ॥ १७

काञ्चनानि प्रमृदन्तस्तोरणानि प्लवङ्गमाः ।
कैलासशिखराभाणि गोपुराणि प्रमथ्य च ॥ १८

आप्लवन्तः प्लवन्तश्च गर्जन्तश्च प्लवङ्गमाः ।
लङ्कां तामभिधावन्ति महावारणसन्निभाः ॥ १९

जयत्यतिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबलः ।
राजा जयति सुग्रीवो राघवेणाभिपालितः ॥ २०

इत्येवं घोषयन्तश्च गर्जन्तश्च प्लवङ्गमाः ।
अभ्यधावन्त लङ्कायाः प्राकारं कामरूपिणः ॥ २१

वीरबाहुः सुबाहुश्च नलश्च वनगोचरः ।
निपीड्योपनिविष्टास्ते प्राकारं हरियूथपाः ।
एतस्मिन्नन्तरे चक्रुः स्कन्धावारनिवेशनम् ॥ २२

पूर्वद्वारं तु कुमुदः कोटीभि दशभिर्वृतः ।
आवृत्य बलवांस्तस्थौ हरिभिर्जितकाशिभिः ॥ २३

साहाय्यार्थं तु तस्यैव निविष्टः प्रघसो हरिः ।
पनसश्च महाबाहुर्वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥ २४

दक्षिणं द्वारमागम्य वीरः शतबलिः कपिः ।
आवृत्य बलवांस्तस्थौ विंशत्या कोटिभिर्वृतः ॥ २५

सुषेणः पश्चिमद्वारं गतस्तारापिता हरिः ।
आवृत्य बलवांस्तस्थौ षष्टिकोटिभिरावृतः ॥ २६

उत्तरं द्वारमासाद्य रामः सौमित्रिणा सह ।
आवृत्य बलवांस्तस्थौ सुग्रीवश्च हरीश्वरः ॥ २७

गोलाङ्गूलो महाकायो गवाक्षो भीमदर्शनः ।
वृतः कोट्या महावीर्यस्तस्थौ रामस्य पार्श्वतः ॥ २८

ऋक्षाणां भीमवेगानां धूम्रः शत्रुनिर्बहणः ।
वृतः कोट्या महावीर्यस्तस्थौ रामस्य पार्श्वतः ॥ २९

पश्चिमेन तु रामस्य सुग्रीवः सहजाम्बवान् ।
अदूरान्मध्यमे गुल्मे तस्थौ बहुबलान्वितः ॥ ३०

सन्नद्धस्तु महावीर्यो गदापाणिर्विभीषणः ।
वृतो यत्तैस्तु सचिवैस्तस्थौ तत्र महाबलः ॥ ३१

गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः ।
समन्तात्परिधावन्तो ररक्षुर्हरिवाहिनीम् ॥ ३२

ततः कोपपरीतात्मा रावणो राक्षसेश्वरः ।
निर्याणं सर्वसैन्यानां द्रुतमाज्ञापयत्तदा ॥ ३३

एतच्छ्रुत्वा ततो वाक्यं रावणस्य मुखोद्गतम् ।
सहसा भीमनिर्घोषमुद्धुष्टं रजनीचरैः ॥ ३४

ततः प्रचोदिता भेर्यश्चन्द्रपाण्डुरपुष्कराः ।
हेमकोणाहता भीमा राक्षसानां समन्ततः ॥ ३५

विनेदुश्च महाघोषाः शङ्खाः शतसहस्रशः ।
राक्षसानां सुघोराणां मुखमारुतपूरिताः ॥ ३६

ते बभुः शुकनीलाङ्गाः सशङ्खा रजनीचराः ।
वियुन्मण्डलसन्नद्धाः सबलाका इवाम्बुदाः ॥ ३७

निष्पतन्ति ततः सैन्या हृष्टा रावणचोदिताः ।

समये पूर्यमाणस्य वेगा इव महोदधेः ॥ ३८

ततो वानरसैन्येन मुक्तो नादः समन्ततः ।

मलयः पूरितो येन ससानुप्रस्थकन्दरः ॥ ३९

शङ्खदुन्दुभिसंघुष्टः सिंहनादस्तरखिनाम् ।

पृथिवीं चान्तरिक्षं च सागरं चैव नादयन् ॥ ४०

गजानां वृंहितैः सार्धं हयानां हेषितैरपि ।

रथानां नेमिघोषैश्च रक्षसां पादनिखनैः ॥ ४१

एतस्मिन्नन्तरे घोरः संग्रामः समवर्तत ।

रक्षसां वानराणां च यथा देवासुरे पुरा ॥ ४२

ते गदाभिः प्रदीप्ताभिः शक्तिशूलपरश्वधैः ।

निजधनुर्वानरान् घोराः कथयन्तः स्वविक्रमान् ॥ ४३

वानराश्च महावीर्या राक्षसान् जघनुराहवे ।

जयत्यतिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबलः ॥ ४४

राजा जयति सुग्रीव इति शब्दो महानभूत् ।

राजन् जय जयेत्युक्त्वा स्वस्वनामकथान्ततः ॥ ४५

तथा वृक्षैर्महाकायाः पर्वताग्रैश्च वानराः ।

निजघ्नुस्तानि रक्षांसि नखैर्दन्तैश्च वेगिताः ॥ ४६

राक्षसास्त्वपरे भीमाः प्राकारस्थान् महीगतान् ।

भिण्डिपालैश्च खड्गैश्च शूलैश्चैव व्यदारयन् ॥ ४७

वानराश्चापि संक्रुद्धाः प्राकारस्थान् महीगताः ।

राक्षसान् पातयामासुः समाप्लुत्य स्वबाहुभिः ॥ ४८

स संप्रहारस्तुमुलो मांसशोणितकर्दमः ।

रक्षसां वानराणां च संबभूवाद्भुतोपमः ॥ ४९

इति द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥



त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥



युद्धयतां तु ततस्तेषां वानराणां महात्मनाम् ।

रक्षसां संबभूवाथ बलकोपः सुदारुणः ॥ १

ते हयैः काञ्चनापीडैर्ध्वजैश्चाग्निशिखोपमैः ।

रथैश्चादित्यसङ्काशैः कवचैश्च मनोरमैः ॥ २

निर्ययू राक्षसव्याघ्रा नादयन्तो दिशो दश ।
राक्षसा भीमकर्माणो रावणस्य जयैषिणः ॥ ३

वानराणामपि चमूर्वृहती जयमिच्छताम् ।
अभ्यधावत तां सेनां रक्षसां कामरूपिणाम् ॥ ४

एतस्मिन्नन्तरे तेषामन्योन्यमभिधावताम् ।
रक्षसां वानराणां च द्वन्द्वयुद्धमवर्तत ॥ ५

अङ्गदेनेन्द्रजित्सार्धं वालिपुत्रेण राक्षसः ।
अयुध्यत महातेजास्त्रयम्बकेण यथाऽन्तकः ॥ ६

प्रजङ्घेन च संपातिर्नित्यं दुर्मर्षणो रणे ।
जम्बुमालिनमारब्धो हनुमानपि वानरः ॥ ७

सङ्गतः सुमहाक्रोधो राक्षसो रावणानुजः ।
समरे तीक्ष्णवेगेन मित्रघ्नेन विभीषणः ॥ ८

तपनेन गजः सार्धं राक्षसेन महाबलः ।
निकुम्भेन महातेजा नीलोऽपि समयुध्यत ॥ ९

वानरेन्द्रस्तु सुग्रीवः प्रघसेन समागतः ।
सङ्गतः समरे श्रीमान् विरूपाक्षेण लक्ष्मणः ॥ १०

अग्निकेतुश्च दुर्धर्षो रश्मिकेतुश्च राक्षसः ।

मित्रघ्नो यज्ञकोपश्च रामेण सह सङ्गताः ॥ ११

वज्रमुष्टिस्तु मैन्देन द्विविदेनाशनिप्रभः ।

राक्षसाभ्यां सुघोराभ्यां कपिमुख्यौ समागतौ ॥ १२

वीरः प्रतपनो घोरो राक्षसो रणदुर्धरः ।

समरे तीक्ष्णवेगेन नलेन समयुध्यत ॥ १३

धर्मस्य पुत्रो बलवान् सुषेण इति विश्रुतः ।

स विद्युन्मालिना सार्धमयुध्यत महाकपिः ॥ १४

वानराश्चापरे भीमा राक्षसैरपरैः सह ।

द्वन्द्वं समीयुर्बहुधा युद्धाय बहुभिः सह ॥ १५

तत्रासीत्सुमहद्युद्धं तुमुलं रोमहर्षणम् ।

रक्षसां वानराणां च वीराणां जयमिच्छताम् ॥ १६

हरिराक्षसदेहेभ्यः प्रभूताः केशशद्वलाः ।

शरीरसङ्घाटवहाः प्रसुप्तः शोणितापगाः ॥ १७

आनघानेन्द्रजित्कुद्धो वज्रेणेव शतक्रतुः ।

अङ्गदं गदया वीरं शत्रुसैन्यविदारणम् ॥ १८

तस्य काञ्चनचित्राङ्गं रथं साश्वं ससारथिम् ।
जघान समरे श्रीमानङ्गदो वेगवान् कपिः ॥ १९

सम्पातिस्तु त्रिभिर्बाणैः प्रजङ्घेन समाहतः ।
निजघानाश्वकर्णेन प्रजङ्घं रणमूर्धनि ॥ २०

जम्बुमाली रथस्थस्तु रथशक्त्या महाबलः ।
बिभेद समरे क्रुद्धो हनूमन्तं स्तनान्तरे ॥ २१

तस्य तं रथमास्थाय हनूमान्मारुतात्मजः ।
प्रममाथ तलेनाशु सह तेनैव रक्षसा ॥ २२

मित्रघ्नमरिदर्पघ्नमापतन्तं विभीषणः ।
आसाद्य गदया गुर्व्या जघान रणमूर्धनि ॥ २३

नदन् प्रतपनो घोरो नलं सोऽप्यन्वधावत ।
नलः प्रतपनस्याशु पातयामास चक्षुषी ॥ २४

भिन्नगात्रः शरैस्तीक्ष्णैः क्षिप्रहस्तेन रक्षसा ।
प्रजघानाद्रिशृङ्गेण तपनं वेगवान् गजः ॥ २५

भिन्नगात्रः शरैस्तीक्ष्णैर्मित्रघ्नेन विभीषणः ।
मित्रघ्नं गदया क्रुद्धो निजघान महाहवे ॥ २६

असन्तमिव सैन्यानि प्रघसं वानराधिपः ।
सुग्रीवः सप्तपर्णेन निर्विभेद जघान च ॥ २७

प्रपीड्य शरवर्षेण राक्षसं भीमदर्शनम् ।
निजघान विरूपाक्षं शरेणैकेन लक्ष्मणः ॥ २८

अग्निकेतुश्च दुर्धर्षो रश्मिकेतुश्च राक्षसः ।
सुप्तो यज्ञकोपश्च रामं निर्विभिदुः शरैः ॥ २९

तेषां चतुर्णां रामस्तु शिरांसि निशितैः शरैः ।
क्रुद्धश्चतुर्भिश्चिच्छेद घोरैरग्निशिखोपमैः ॥ ३०

वज्रमुष्टिस्तु मैन्देन मुष्टिना निहतो रणे ।
पपात सरथः साश्वः पुराट् इव भूतले ॥ ३१

निकुम्भस्तु रणे नीलं नीलाञ्जनचयप्रभम् ।
निर्विभेद शरैस्तीक्ष्णैः करैर्मैघमिवांशुमान् ॥ ३२

पुनः शरशतेनाथ क्षिप्रहस्तो निशाचरः ।
विभेद समरे नीलं निकुम्भः प्रजहास च ॥ ३३

तस्यैव रथचक्रेण नीलो विष्णुरिवाहवे ।
शिरश्चिच्छेद समरे निकुम्भस्य च सारथेः ॥ ३४

- वज्राशनिसमस्पर्शो द्विविदोऽप्यशनिप्रभम् ।
जघान गिरिशृङ्गेण मिषतां सर्वरक्षसाम् ॥ ३५
- द्विविदं वानरेन्द्रं तु नगयोधिनमाहवे ।
शरैरशनिसङ्काशैः स विव्याधाशनिप्रभः ॥ ३६
- स शरैरतिविद्धाङ्गो द्विविदः क्रोधमूर्च्छितः ।
सालेन सरथं साश्वं निजघानाशनिप्रभम् ॥ ३७
- विद्युन्माली रथस्थस्तु शरैः काञ्चनभूषणैः ।
सुषेणं ताडयामास ननाद च मुहुर्मुहुः ॥ ३८
- तं रथस्थमथो दृष्ट्वा सुषेणो वानरोत्तमः ।
गिरिशृङ्गेण महता रथमाशु न्यपातयत् ॥ ३९
- लाघवेन तु संयुक्तो विद्युन्माली निशाचरः ।
अपक्रम्य रथात्तूर्णं गदापाणिः क्षितौ स्थितः ॥ ४०
- ततः क्रोधसमाविष्टः सुषेणो हरिपुङ्गवः ।
शिलां सुमहतीं गृह्य निशाचरमभिद्रवत् ॥ ४१
- तमापतन्तं गदया विद्युन्माली निशाचरः ।
वक्षस्यभिजघानाशु सुषेणं हरिपुङ्गवम् ॥ ४२

गदाप्रहारं तं घोरमचिन्त्य प्लवगोत्तमः ।

तां शिलां पातयामास तस्योरसि महामृधे ॥

४३

शिलाप्रहाराभिहतो विद्युन्माली निशाचरः ।

निष्पिष्टहृदयो भूमौ गतासुर्निपपात ह ॥

४४

एवं तैर्वानरैः शूरैः शूरास्ते रजनीचराः ।

द्वन्द्वे विमृदितास्तत्र दैत्या इव दिवौकसैः ॥

४५

भग्नैः खड्गैर्गदाभिश्च शक्तितोमरपट्टसैः ।

अपविद्धैश्च भिन्नैश्च रथैः सांग्रामिकैर्हयैः ॥

४६

निहतैः कुञ्जरैर्मत्तैस्तथा वानरराक्षसैः ।

चक्राक्षयुगदण्डैश्च भग्नैर्धरणिसंश्रितैः ।

बभूवायोधनं घोरं गोमायुगणसंकुलम् ॥

४७

कबन्धानि समुत्पेतुर्दिक्षु वानररक्षसाम् ।

विमर्दे तुमुले तस्मिन् देवासुररणोपमे ॥

४८

विदार्यमाणा हरिपुङ्गवैस्तदा

निशाचराः शोणितदिग्धगात्राः ।

पुनः सुयुद्धं तरसा समास्थिताः

दिवाकरस्यास्तमयाभिकाङ्क्षिणः ॥

४९

इति त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥



चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥

युद्धयतामेव तेषां तु तदा वानररक्षसाम् ।
रविरस्तं गतो रात्रिः प्रवृत्ता प्राणहारिणी ॥ १

अन्योन्यं बद्धवैराणां घोराणां जयमिच्छताम् ।
संप्रवृत्तं निशायुद्धं तदा वानररक्षसाम् ॥ २

राक्षसोऽसीति हरयो हरिश्चासीति राक्षसाः ।
अन्योन्यं समरे जघ्नुस्तस्मिंस्तमसि दारुणे ॥ ३

मा गाः सुयोध तिष्ठेति मलयुद्धं प्रयच्छ मे ।
अन्योन्यं शङ्किलार्था मां हित्वा कुत्र च गच्छसि ॥ ४

श्रमं हि वा मया गच्छ क्षणं युध्यस्व निर्वृतः ।
इत्यन्योन्यं राक्षसानां वानराणां महात्मनाम् ॥ ५

जहि दारय चैहीति कथं विद्रवसीति च ।
एवं सुतुमलः शब्दस्तस्मिन्सैन्ये विशुश्रुवे ॥ ६

कालाः काञ्चनसन्नाहास्तस्मिंस्तमसि राक्षसाः ।
सम्प्रादृश्यन्त शैलेन्द्रा दीप्तौषधिवना इव ॥ ७

तस्मिंस्तमसि दुष्पारे राक्षसाः क्रोधमूर्च्छिताः ।

परिपेतुर्महावेगा भक्षयन्तः प्लवङ्गमान् ॥

८

ते हयान्काञ्चनापीडान् ध्वजांश्चाग्निशिखोपमान् ।

आप्लुत्य दशनैस्तीक्ष्णैर्भीमक्रोपा व्यदारयन् ॥

९

वानरा बलिनो युद्धेऽक्षोभयन् राक्षसीं चमूम् ।

कुञ्जरान्कुञ्जरारोहान् पताकाध्वजिनो रथान् ।

चकर्षुश्च ददंशुश्च दशनैः क्रोधमूर्च्छिताः ॥

१०

लक्ष्मणश्चापि रामश्च शरैराशीविषोपमैः ।

दृश्यादृश्यानि रक्षांसि प्रवराणि निजघ्नतुः ॥

११

तुरङ्गखुरविध्वस्तं रथनेमिसमुत्थितम् ।

रुरोध कर्णनेत्राणि युध्यतां धरणीरजः ॥

१२

वर्तमाने तदा घोरे संग्रामे रोमहर्षणे ।

रुधिरौघा महाघोरा नद्यस्तत्र प्रसुप्तवुः ॥

१३

ततो भैरीमृदङ्गानां पणवानां च निस्वनः ।

शङ्खवेणुस्वनोन्मिश्रः संबभूवादभुतोपमः ।

विमर्दे तुमुले तस्मिन् देवासुररणोपमे ॥

१४

- हतानां स्तनमानानां राक्षसानां च निखनः ।
शस्तानां वानराणां च समभूतत्र दारुणः ॥ १५
- हतैर्वानरमुख्यैश्च शक्तिशूलपरश्वधैः ।
निहतैः पर्वताग्रैश्च राक्षसैः कामरूपिभिः ॥ १६
- शस्त्रपुष्पोपहारा च तत्रासीद्युद्धमेदिनी ।
दुस्तरा दुर्निवेशा च शोणितास्त्रावकर्दमा ॥ १७
- सा बभूव निशा घोरा हरिराक्षसहारिणी ।
कालरात्रीव भूतानां सर्वेषां दुरतिक्रमा ॥ १८
- ततस्ते राक्षसास्तत्र तस्मिंस्तमसि दारुणे ।
राममेवाभ्यवर्तन्त संसृष्टाः शरवृष्टिभिः ॥ १९
- तेषामापततां शब्दः क्रुद्धानामभिगर्जताम् ।
उद्धर्त इव सप्तानां समुद्राणामभूत्स्वनः ॥ २०
- तेषां रामः शरैः षड्भिः षड् जघान निशाचरान् ।
निमेषान्तरमात्रेण शितैरग्निशिखोपमैः ॥ २१
- यमशत्रुश्च दुर्धर्षो महापार्श्वमहोदरौ ।
वज्रदंष्ट्रो महाकायस्तौ चोमौ शुकसारणौ ॥ २२

ते तु रामेण बाणौघैः सर्वे मर्मसु ताडिताः ।

युद्धादपसृतास्तत्र सावशेषायुषोऽभवन् ॥ २

तत्र काञ्चनचित्राङ्गैः शरैरग्निशिखोपमैः ।

दिशश्चकार विमलाः प्रदिशश्च महाबलः ।

रामनामाङ्कितैर्बाणैर्व्याप्तं तद्रणमण्डलम् ॥ २

ये त्वन्ये राक्षसा भीमा रामस्याभिमुखे स्थिताः ।

तेऽपि नष्टाः समासाद्य पतङ्गा इव पावकम् ॥ २

सुवर्णपुङ्खैर्विशिखैः सम्पतद्भिः सहस्रशः ।

बभूव रजनी चित्रा खद्योतैरिव शारदी ॥ २

राक्षसानां च निनदैर्हरीणां चापि निखनैः ।

सा बभूव निशा घोरा भूयो घोस्तरा तदा ॥ २

तेन शब्देन महता प्रवृद्धेन समन्ततः ।

त्रिकूटः कन्दराकीर्णः प्रव्याहरदिवाचलः ॥ २

गोलाङ्गूला महाकायास्तमसा तुल्यवर्चसः ।

संपरिष्वज्य बाहुभ्यां भक्षयन् रजनीचरान् ॥ २

अङ्गदस्तु रणे शत्रुं निहन्तुं समुपस्थितः ।

रावणिं निजघानाशु सारथिं च हयानपि ॥ ३

वर्तमाने तदा घोरे संग्रामे भृशदारुणे ।
इन्द्रजितु रथं त्यक्त्वा हताश्वो हतसारथिः ।
अङ्गदेन महामायस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ ३१

तत्कर्म बालिपुत्रस्य सर्वे देवाः महर्षिभिः ।
तुष्टुवुः पूजनार्हस्य तौ चोभौ रामलक्ष्मणौ ॥ ३२

प्रभावं सर्वभूतानि विदुरिन्द्रजितो युधि ।
अदृश्यः सर्वभूतानां योऽभवद् युधि दुर्जयः ॥ ३३

तेन ते तं महात्मानं तुष्टा दृष्ट्वा प्रधर्षितम् ।
ततः प्रहृष्टाः कपयः ससुग्रीवविभीषणाः ॥ ३४

साधु साध्विति नेदुश्च दृष्ट्वा शत्रुं प्रधर्षितम् ।
इन्द्रजितु तदा तेन निर्जितो भीमकर्मणा ॥ ३५

संयुगे बालिपुत्रेण क्रोधं चक्रे सुदारुणम् ।
एतस्मिन्नन्तरे रामो वानरान् वाक्यमब्रवीत् ॥ ३६

सर्वे भवन्तस्तिष्ठन्तु कपिराजेन सङ्गताः ।
स ब्रह्मणा दत्तवरस्त्रैलोक्यं बाधते भृशम् ॥ ३७

भवतामर्थसिद्ध्यर्थं कालेन स समागतः ।
अद्यैव क्षमितव्यं मे भवन्तो विगतज्वराः ॥ ३८

सोऽन्तर्धानगतः पापो रावणी रणकर्कशः ।
अदृश्यो निशितान्बाणान् मुमोचाशनिवर्चसः ॥

स रामं लक्ष्मणं चैव घोरैर्नागिमयैः शरैः ।
बिभेद समरे क्रुद्धः सर्वगात्रेषु राक्षसः ॥

मायया संवृतस्तत्र मोहयन्राघवौ युधि ।
अदृश्यः सर्वभूतानां कूटयोधी निशाचरः ।
बबन्ध शरबन्धेन भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥

तौ तेन पुरुषव्याघ्रौ क्रुद्धेनाशीविषैः शरैः ।
सहसा निहतौ वीरौ तदा प्रैक्षन्त वानराः ॥

प्रकाशरूपस्तु यदा न शक्त-

स्तौ बाधितुं राक्षसराजपुत्रः ।

मायां प्रयोक्तुं समुपाजगाम

बबन्ध तौ राजसुतौ मेहात्मा ॥

इति चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥



पञ्चचत्वारिंशः सर्गः ॥

- स तस्य गतिमन्विच्छन् राजपुत्रः प्रतापवान् ।
दिदेशातिबलो रामो दश वानरयूथपान् ॥ १
- द्वौ सुषेणस्य दायादौ नीलं च प्लवगर्षभम् ।
अङ्गदं वालिपुत्रं च शरभं च तरस्विनम् ॥ २
- द्विविदं च हनूमन्तं सानुप्रस्थं महाबलम् ।
ऋषभं चर्षभस्कन्धमादिदेश परन्तपः ॥ ३
- ते संप्रहृष्टा हरयो भीमानुद्यम्य पादपान् ।
आकाशं विविशुः सर्वे मार्गमाणा दिशो दक्ष ॥ ४
- तेषां वेगवतां वेगमिषुभिर्वेगवत्तरैः ।
अस्त्रवित्परमास्त्रैस्तु वारयामास रावणिः ॥ ५
- तं भीमवेगा हरयो नाराचैः क्षतविग्रहाः ।
अन्धकारे न ददृशुर्मधैः सूर्यमिवावृतम् ॥ ६
- रामलक्ष्मणयोरेव सर्वदेहभिदः शरान् ।
भृशमावेशयामास रावणिः समितिञ्जयः ॥ ७

निरन्तरशरीरौ तौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
 क्रुद्धेनेन्द्रजिता वीरौ पन्नगैः शरतां गतैः ॥ ८

तयोः क्षतजमार्गेण सुस्त्राव रुधिरं बहु ।
 तावुभौ च प्रकाशेते पुष्पिताविव किंशुकौ ॥ ९

ततः पर्यन्तरक्ताक्षो भिन्नाञ्जनचयोपमः ।
 रावणिभ्रातरौ वाक्यमन्तर्धानगतोऽब्रवीत् ॥ १०

युध्यमानमनालक्ष्यं शक्रोऽपि त्रिदशेश्वरः ।
 द्रष्टुमासादितुं वाऽपि न शक्तः किं पुनर्युवाम् ॥ ११

प्रावृताविषुजालेन राघवौ कङ्कपत्निणा ।
 एष रोषपरीतात्मा नयामि यमसादनम् ॥ १२

एवमुक्त्वा तु धर्मज्ञौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
 निर्बिभेद शितैर्बाणैः प्रजहर्ष ननाद च ॥ १३

भिन्नाञ्जनचयश्यामो विस्फार्य विपुलं धनुः ।
 भूयो भूयः शरान्घोरान् विससर्ज महामृधे ॥ १४

ततो मर्मसु मर्मज्ञो मज्जयन्निशिताञ्शरान् ।
 रामलक्ष्मणयोर्वीरो ननाद च मुहुर्मुहुः ॥ १५

बद्धौ तु शरबन्धेन तावुभौ रणमूर्धनि ।
निमेषान्तरमालेण न शेकतुरुदीक्षितुम् ॥ १६

ततो विभिन्नसर्वाङ्गौ शरशल्याचितौ कृतौ ।
ध्वजाविव महेन्द्रस्य रज्जुमुक्तौ प्रकम्पितौ ॥ १७

तौ संप्रचलितौ वीरौ मर्मभेदेन कर्षितौ ।
निपेततुर्महेष्वासौ जगत्यां जगतीपती ॥ १८

तौ वीरशयने वीरौ शयानौ रुधिरोक्षितौ ।
शरवेष्टितसर्वाङ्गावातौ परमपीडितौ ॥ १९

न ह्यविद्धं तयोर्गालं बभूवाङ्गुलमन्तरम् ।
नानिर्भिन्नं न चास्तब्धमाकराग्रादजिह्वगैः ॥ २०

तौ तु क्रूरेण निहतौ रक्षसा कामरूपिणा ।
असृक् सुस्रुवतुस्तीव्रं जलं प्रस्रवणाविव ॥ २१

पपात प्रथमं रामो विद्धो मर्मसु मार्गणैः ।
क्रोधादिन्द्रजिता येन पुरा शक्रो विनिर्जितः ॥ २२

रुक्मपुङ्खैः प्रसन्नाग्रैरधोगतिभिराशुगैः ।
नाराचैरर्धनाराचैर्मल्लैरञ्जलिकैरपि ।
विव्याध वत्सदन्तैश्च सिंहदंष्ट्रैः क्षुरैस्तथा ॥ २३

स वीरशयने शिश्ये विज्यमादाय कार्मुकम् ।

भिन्नमुष्टिपरीणाहं लिनतं रुक्मभूषितम् ॥ २४

बाणपातान्तरे रामं पतितं पुरुषर्षभम् ।

स तत्र लक्ष्मणो दृष्ट्वा निराशो जीवितेऽभवत् ॥ २५

रामं कमलपत्राक्षं शरबन्धपरिक्षितम् ।

शुशोच भ्रातरं दृष्ट्वा पतितं धरणीतले ।

हरयश्चापि तं दृष्ट्वा सन्तापं परमं गताः ॥ २६

बद्धौ तु वीरौ पतितौ शयानौ

तौ वानराः संपरिवार्य तस्थुः ।

समागता वायुसुतप्रमुख्या

विषादमार्ताः परमं च जग्मुः ॥ २७

इति पञ्चचत्वारिंशः सर्गः ॥



षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥

ततो द्यां पृथिवीं चैव वीक्षमाणा वनौकसः ।

ददृशुः सन्ततौ बाणैर्भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १

दृष्ट्वोपरते देवे कृतकर्मणि राक्षसे ।

आजगामाथ तं देशं ससुग्रीवो विभीषणः ॥ २

नीलद्विविदमैन्दाश्च सुषेणसुमुखाङ्गदाः ।

तूर्णं हनुमता सार्धमन्वशोचन्त राघवौ ॥ ३

अचेष्टौ मन्दनिःश्वासौ शोणितौघपरिप्लुतौ ।

शरजालाचितौ स्तब्धौ शयानौ शरतरुपयोः ॥ ४

निःश्वसन्तौ यथा सपौ निश्चेष्टौ मन्दविक्रमौ ।

रुधिरस्रावदिग्धाङ्गौ तापनीयाविव ध्वजौ ॥ ५

तौ वीरशयने वीरौ शयानौ मन्दचेष्टितौ ।

यूथपैस्तैः परिवृतौ बाष्पव्याकुललोचनैः ॥ ६

राघवौ पतितौ दृष्ट्वा शरजालसमावृतौ ।

यथा सपौ तु निश्चेष्टौ शयानौ मन्दचेष्टितौ ।

बभूवुर्व्यथिताः सर्वे वानराः सविभीषणाः ॥ ७

अन्तरिक्षं निरीक्षन्तो दिशः सर्वाश्च वानराः ।

न चैनं माययाच्छन्नं ददृशू रावणिं रणे ॥ ८

तं तु मायाप्रतिच्छन्नं माययैव विभीषणः ।

वीक्षमाणो ददर्शाथ भ्रातुः पुत्रमवस्थितम् ॥ ९

तमप्रतिमकर्माणमप्रतिद्वन्द्वमाहवे ।

ददर्शान्तर्हितं वीरं वरदानाद्विभीषणः ।

तेजसा यशसा चैव विक्रमेण च संयुतम् ॥ १०

इन्द्रजित्वात्मनः कर्म तौ शयानौ समीक्ष्य च ।

उवाच परमप्रीतो हर्षयन्सर्वनैर्ऋतान् ॥ ११

दूषणस्य च हन्तारौ खरस्य च महाबलौ ।

सादितौ मामकैर्बाणैर्भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १२

नेमौ मोक्षयितुं शक्यावेतस्मादिषुबन्धनात् ।

सर्वैरपि समागम्य सर्षिसङ्घैः सुरासुरैः ॥ १३

यत्कृते चिन्तयानस्य शोकार्तस्य पितुर्मम ।

अस्पृष्ट्वा शयनं गालैस्त्रियामा याति शर्वरी ॥ १४

कृत्स्नेयं यत्कृते लङ्का नदी वर्षास्त्रिवाकुला ।

सोऽयं मूलहरोऽनर्थः सर्वेषां निहतो मया ॥ १५

रामस्य लक्ष्मणस्यैव सर्वेषां च वनौकसाम् ।

विक्रमा निष्फलाः सर्वे यथा शरदि तोयदाः ॥ १६

एवमुक्त्वा तु तान्सर्वान् राक्षसान्परिपार्श्वतः ।

यूथपानपि तान्सर्वास्ताडयामास रावणिः ॥ १७

नीलं नवभिराहत्य भैन्दं च द्विविदं तथा ।

त्रिभिस्त्रिभिरमित्रघ्नस्तताप परमेषुभिः ॥ १८

जाम्बवन्तं महेष्वासो विदूध्वा बाणेन वक्षसि ।

हनूमतो वेगवतो विससर्ज शरान्दश ॥ १९

गवाक्षं शरभं चैव द्वावप्यमिततेजसौ ।

द्वाभ्यां द्वाभ्यां महावेगो विव्याध युधि रावणिः ॥ २०

गोलाङ्गूलेश्वरं चैव वालिपुत्रमथाङ्गदम् ।

विव्याध बहुभिर्बाणैस्त्वरमाणोऽथ रावणिः ॥ २१

तान्वानरवरान् भित्वा शरैरग्निशिखोपमैः ।

ननाद बलवांस्तत्र महासत्वः स रावणिः ॥ २२

तानर्दयित्वा बाणौघैस्त्रासयित्वा च वानरान् ।

प्रजहास महाबाहुर्वचनं चेदमब्रवीत् ॥ २३

शरबन्धेन घोरेण मया बद्धौ चमूमुखे ।

सहितौ भ्रातरावेतौ निशामयत राक्षसाः ॥ २४

एवमुक्तास्तु ते सर्वे राक्षसाः कूटयोधिनः ।

परं विस्मयमाजग्मुः कर्मणा तेन हर्षिताः ॥ २५

विनेदुश्च महानादान् सर्वतो जलदोपमाः ।
हतो राम इति ज्ञात्वा रावणिं समपूजयन् ॥ २६

निष्पन्दौ तु तदा दृष्ट्वा तावुभौ रामलक्ष्मणौ ।
वसुधायां निरुच्छ्वासौ हतावित्यन्वमन्यत ॥ २७

हर्षेण तु समाविष्ट इन्द्रजित्समितिञ्जयः ।
प्रविवेश पुरीं लङ्कां हर्षयन्सर्वराक्षसान् ॥ २८

रामलक्ष्मणयोर्दृष्ट्वा शरीरे सायकैश्चिते ।
सर्वाणि चाङ्गोपाङ्गानि सुग्रीवं भयमाविशत् ॥ २९

तमुवाच परित्रस्तं वानरेन्द्रं विभीषणः ।
सबाष्पवदनं दीनं शोकव्याकुललोचनम् ॥ ३०

अलं त्रासेन सुग्रीव बाष्पवेगो निगृह्यताम् ।
एवंप्रायाणि युद्धानि विजयो नास्ति नैष्ठिकः ॥ ३१

सशेषभाग्यताऽस्माकं यदि वीर भविष्यति ।
मोहमेतौ प्रहास्येते महात्मानौ महाबलौ ॥ ३२

पर्यवस्थापयात्मानमनाथं मां च वानर ।
सत्यधर्माभिरक्तानां नास्ति मृत्युकृतं भयम् ॥ ३३

एवमुक्त्वा ततस्तस्य जलक्लिन्नेन पाणिना ।
सुग्रीवस्य शुभे नेत्रे प्रममार्ज विभीषणः ॥ ३४

ततः सलिलमादाय विद्यया परिजप्य च ।
सुग्रीवनेत्रे धर्मात्मा स ममार्ज विभीषणः ॥ ३५

प्रमृज्य वदनं तस्य कपिराजस्य धीमतः ।
अब्रवीत्कालसंप्राप्तमसंभ्रममिदं वचः ॥ ३६

न कालः कपिराजेन्द्र वैक्लव्यमनुवर्तितुम् ।
अतिस्नेहोऽप्यकालेऽस्मिन् मरणायोपकरूपते ॥ ३७

तस्मादुत्सृज्य वैक्लव्यं सर्वकार्यविनाशनम् ।
हितं रामपुरोगाणां सैन्यानामनुचिन्त्यताम् ॥ ३८

अथ वा रक्ष्यतां रामो यावत्संज्ञाविपर्ययः ।
लब्धसंज्ञौ हि काकुत्स्थौ भयं नो व्यपनेष्यतः ॥ ३९

नैतत् किञ्चन रामस्य न च रामो मुमूर्षति ।
न ह्येनं हास्यते लक्ष्मीर्दुर्लभा या गतायुषाम् ॥ ४०

तस्मादाश्वासयात्मानं बलं चाश्वासय स्वकम् ।
यावत्कार्याणि सर्वाणि पुनः संस्थापयाम्यहम् ॥ ४१

एते हि फुल्लनयनास्त्रासादागतसाध्वसाः ।

कर्णे कर्णे प्रकथिता हरयो हरिसत्तम ॥ ४२

मां तु दृष्ट्वा प्रधावन्तमनीकं संप्रहर्षितुम् ।

त्यजन्तु हरयस्त्रासं भुक्तपूर्वामिव स्रजम् ॥ ४३

समाश्वास्य तु सुग्रीवं राक्षसेन्द्रो विभीषणः ।

विद्रुतं वानरानीकं तत्समाश्वासयत्पुनः ॥ ४४

इन्द्रजित्पुत्रं महामायः सर्वसैन्यसमावृतः ।

विवेश नगरीं लङ्कां पितरं चाभ्युपागमत् ॥ ४५

तत्र रावणमासीनमभिवाद्य कृताञ्जलिः ।

आचक्षे प्रियं पित्रे निहतौ रामलक्ष्मणौ ॥ ४६

उत्पपात ततो हृष्टः पुत्रं च परिष्वजे ।

रावणो रक्षसां मध्ये श्रुत्वा शत्रून् निपातितौ ॥ ४७

उपाग्राय स मूढर्न्येनं पप्रच्छ प्रीतमानसः ।

पृच्छते च यथावृत्तं पित्रे सर्वं न्यवेदयत् ॥ ४८

यथा तौ शरबन्धेन निश्चेष्टौ निष्प्रभौ कृतौ ।

विस्मित्यान्तर्हितः कृत्वा घोरं तच्छरबन्धनम् ॥ ४९

रावणोऽकारयलङ्कां पताकाध्वजमालिनीम् ।
घोषयित्वा तु लङ्कायां प्रहृष्टो राक्षसेश्वरः ।
राघवो लक्ष्मणश्चैव हताविन्द्रजिता रणे ॥

५०

स हर्षवेगानुगतान्तरात्मा

श्रुत्वा वचस्तस्य महारथस्य ।

जहौ ज्वरं दाशरथेः समुत्थितं

प्रहृष्य वाचाऽभिननन्द पुत्रम् ॥

५१

इति षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥



सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥

प्रतिप्रविष्टे लङ्कां तु कृतार्थे रावणात्मजे ।

राघवं परिवार्यार्ता ररक्षुर्वानरर्षभाः ॥

१

हनुमानङ्गदो नीलः सुषेणः कुमुदो नलः ।

गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः ॥

२

नाम्बवानृषभः सुन्दो रम्भः शतवलिः पृथुः ।

एते सर्वे महोत्साहा वानरा भीमविक्रमाः ॥

३

व्यूढानीकाश्च यत्ताश्च द्रुमानादाय सर्वतः ।
 वीक्षमाणा दिशः सर्वास्तिर्यगूर्ध्वं च वानराः ।
 तृणेष्वपि च चेष्टत्सु राक्षसा इति मेनिरे ॥ ४

रावणश्चापि संहृष्टो विसृज्येन्द्रजितं सुतम् ।
 आजुहाव ततः सीतारक्षिणी राक्षसीस्तदा ॥ ५

त्रिजटाप्रमुखास्तास्तु शासनात्समुपस्थिताः ।
 राक्षस्यो विनयोपेता राक्षसेन्द्रसमीपगाः ।
 उवाच च ततो हृष्टो राक्षसेन्द्रो महाबलः ॥ ६

हताविन्द्रजिताऽऽख्यात वैदेह्या रामलक्ष्मणौ ।
 पुष्पकं च समारोप्य दर्शयध्वं हतौ रणे ॥ ७

यदाश्रयादवष्टब्धा नेयं मामुपतिष्ठति ।
 सोऽस्या भर्ता सह भ्रात्रा निरस्तो रणमूर्धनि ॥ ८

निर्विशङ्का निरुद्विग्ना निरपेक्षा च मैथिली ।
 मामुपस्थास्यते सीता सर्वाभरणभूषिता ॥ ९

अद्य कालवशं प्राप्तं रणे रामं सलक्ष्मणम् ।
 अवेक्ष्य विनिवृत्ताशा नान्यां गतिमपश्यती ।
 अनपेक्षा विशालाक्षी मामुपस्थास्यते स्वयम् ॥ १०

- तस्य तद्वचनं श्रुत्वा रावणस्य दुरात्मनः ।
राक्षस्यस्तास्तथेत्युक्त्वा जग्मुर्वै यत्र पुष्पकम् ॥ ११
- ततः पुष्पकमादाय राक्षस्यो रावणाज्ञया ।
अशोकवनिकास्थां तां मैथिलीं समुपानयन् ॥ १२
- तामादाय तु राक्षस्यो भर्तृशोकपराजिताम् ।
सीतामारोपयामासुर्विमानं पुष्पकं तदा ॥ १३
- ततः पुष्पकमारोप्य सीतां त्रिजटया सह ।
जग्मुर्दर्शयितुं तस्यै राक्षस्यो रामलक्ष्मणौ ॥ १४
- रावणोऽकारयलङ्कां पताकाध्वजमालिनीम् ।
प्राघोषयत हृष्टश्च लङ्कायां राक्षसेश्वरः ।
राघवो लक्ष्मणश्चैव हताविन्द्रजिता रणे ॥ १५
- विमानेनापि सीता तु गता त्रिजटया सह ।
ददर्श वानराणां तु सर्वं सैन्यं निपातितम् ॥ १६
- प्रहृष्टमनसश्चापि ददर्श पिशिताशनान् ।
वानरांश्चापि दुःखार्तान् रामलक्ष्मणपार्श्वतः ॥ १७
- ततः सीता ददर्शोभौ शयानौ शरतरूपयोः ।
लक्ष्मणं चापि रामं च विसंज्ञौ शरपीडितौ ॥ १८

विध्वस्तकवचौ वीरौ विप्रविद्धशरासनौ ।
सायकैश्छिन्नसर्वाङ्गौ शरस्तम्बमयौ क्षितौ ॥ १९

तौ दृष्ट्वा भ्रातरौ तत्र वीरौ सा पुरुषर्षभौ ।
शयानौ पुण्डरीकाक्षौ कुमाराविव पावकी ॥ २०

शरतल्पगतौ वीरौ तथाभूतौ नरर्षभौ ।
दुःखार्ता सुभृशं सीता करुणं विललाप ह ॥ २१

भर्तारमनवद्याङ्गी लक्ष्मणं चासितेक्षणा ।
प्रेक्ष्य पांसुषु वेष्टन्तौ रुरोद जनकात्मजा ॥ २२

सा बाष्पशोकाभिहता समीक्ष्य
तौ भ्रातरौ देवसमप्रभावौ ।
वितर्कयन्ती निधनं तयोः सा
दुःखान्विता वाक्यमिदं जगाद ॥ २३

इति सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥



अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥

भर्तारं निहतं दृष्ट्वा लक्ष्मणं च महारथम् ।
साश्रुपातं तु करुणं तौ दृष्ट्वा रामलक्ष्मणौ ॥ १

विललाप भृशं सीता करुणं शोककर्षिता ।
आर्यपुत्रेति क्रोशन्ती बहुशो विललाप ह ॥ २

निष्पतन्ती स्वचरणं क्रोशन्ती मधुराक्षरम् ।
उवाच वचनं सीता शोकेन च परिप्लुता ॥ ३

ऊचुर्लाक्षणिका ये मां पुत्रिण्यविधवेति च ।
तेऽद्य सर्वे हते रामे ज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ ४

यज्वनो महिषीं ये मामूचुः पत्नीं च सलिणः ।
तेऽद्य सर्वे हते रामे ज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ ५

ऊचुः संश्रवणे ये मां द्विजाः कार्तान्तिकाः शुभाम् ।
तेऽद्य सर्वे हते रामे ज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ ६

वीरपार्थिवपत्नी त्वं ये धन्येति च मां विदुः ।
तेऽद्य सर्वे हते रामे ज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ ७

इमानि खलु पद्मानि पादयोर्यैः कुलस्त्रियः ।
आधिराज्येऽभिषिच्यन्ते नरेन्द्रैः पतिभिः सह ॥ ८

वैधव्यं यान्ति यैर्नार्यो लक्षणैर्भाग्यदुर्लभाः ।
नात्मनस्तानि पश्यामि पश्यन्ती हतलक्षणा ॥ ९

सत्यनामानि पद्मानि स्त्रीणामुक्तानि लक्षणैः ।
तान्यद्य निहते रामे वितथानि भवन्ति मे ॥ १०

केशाः सूक्ष्माः समा नीला भ्रुवौ चासङ्गते मम ।
वृते चारोमशो जङ्घे दन्ताश्चाविरला मम ॥ ११

शङ्खे नेत्रे करौ पादौ गुल्फावूरू च मे चितौ ।
अनुवृत्तनखाः स्निग्धाः समाश्चाङ्गुलयो मम ॥ १२

स्तनौ चाविरलौ पीनौ ममेमौ मग्नचूचुकौ ।
मग्ना चोत्सङ्गिनी नाभिः पार्श्वोरस्कं च मे चितम् ॥

मम वर्णो मणिनिभो मृदून्यङ्गरुहाणि च ।
प्रतिष्ठितां द्वादशभिर्मामूचुः शुभलक्षणाम् ॥ १४

समग्रयवमच्छिद्रं पाणिपादं च वर्णवत् ।
मन्दस्मितेत्येव च मां कन्यालक्षणिनो विदुः ॥ १५

आधिराज्येऽभिषेको मे ब्राह्मणैः पतिना सह ।
कृतान्तकुशलैरुक्तं तत्सर्वं वितथीकृतम् ॥ १६

यज्वनो महिषीं ये मामूचुः पत्नीं महीभृतः ।
तेऽद्य सर्वे हते रामे ज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ १७

शोधयित्वा जनस्थानं प्रवृत्तिमुपलभ्य मे ।
तीर्त्वा सागरमक्षोभ्यं भ्रातरौ गोष्पदे हतौ ॥ १८

ननु वारुणमाग्नेयमैन्द्रं वायव्यमेव च ।
अस्मि ब्रह्मशिरश्चैव राघवौ प्रत्यपद्यताम् ॥ १९

अदृश्यमानेन रणे मायया वासवोपमौ ।
मम नाथावनाथाया निहतौ रामलक्ष्मणौ ॥ २०

न हि दृष्टिपथं प्राप्य राघवस्य रणे रिपुः ।
जीवन्प्रतिनिवर्तेत यद्यपि स्यान्मनोजवः ॥ २१

न कालस्यातिभारोऽस्ति कृतान्तश्च सुदुर्जयः ।
यत्र रामः सह भ्रात्रा शेते युधि निपातितः ॥ २२

न शोचामि तथा रामं लक्ष्मणं च महारथम् ।
नात्मानं जननीं वाऽपि यथा श्वश्रूं तपस्विनीम् ॥ २३

सा तु चिन्तयते नित्यं समाप्तव्रतमागतम् ।

कदा द्रक्ष्यामि सीतां च रामं च सहलक्ष्मणम् ॥ २४

परिदेवयमानां तां राक्षसी लिजटाऽब्रवीत् ।

मा विषादं कृथा देवि भर्ताऽयं तव जीवति ॥ २५

कारणानि च वक्ष्यामि महान्ति सदृशानि च ।

यथेमौ जीवतो देवि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ २६

न हि कोपपरीतानि हर्षपर्युत्सुकानि च ।

भवन्ति युधि योधानां मुखानि निहते पतौ ॥ २७

इदं विमानं वैदेहि पुष्पकं नाम नामतः ।

दिव्यं त्वां धारयेन्नैवं यद्येतौ गतजीवितौ ॥ २८

हतवीरप्रधाना हि हतोत्साहा निरुद्यमा ।

सेना भ्रमति संख्येषु हतकर्णेव नौर्जले ॥ २९

इयं पुनरसंभ्रान्ता निरुद्विग्ना तरस्विनी ।

सेना रक्षति काकुत्स्थौ मया प्रीत्या निवेदितौ ॥ ३०

सा त्वं भव सुविस्मधा अनुमानैः सुखोदयैः ।

अहतौ पश्य काकुत्स्थौ स्नेहादेतद्वीमि ते ॥ ३१

अनृतं नोक्तपूर्वं मे न च वक्ष्ये कदाचन ।
चारित्रसुखशीलत्वात् प्रविष्टाऽसि मनो मम ॥ ३२

नेमौ शक्यौ रणे जेतुं सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ।
तादृशं दर्शनं दृष्ट्वा मया चावेदितं तव ॥ ३३

इदं च सुमहच्चिह्नं शनैः पश्यस्व मैथिलि ।
निःसंज्ञावप्युभावेतौ नैव लक्ष्मीर्वियुज्यते ॥ ३४

प्रायेण गतसत्त्वानां पुरुषाणां गतायुषाम् ।
दृश्यमानेषु वक्त्रेषु परं भवति वैकृतम् ॥ ३५

त्यज शोकं च दुःखं च मोहं च जनकात्मजे ।
रामलक्ष्मणयोरर्थे नाद्य शक्यमजीवितुम् ॥ ३६

श्रुत्वा तु वचनं तस्याः सीता सुरसुतोपमा ।
कृताञ्जलिरुवाचेदमेवमस्त्विति मैथिली ॥ ३७

विमानं पुष्पकं तत्तु सन्निवार्य मनोजवम् ।
दीना त्रिजटया सीता लङ्कामेव प्रवेशिता ॥ ३८

ततस्त्रिजटया सार्धं पुष्पकादवरुह्य सा ।
अशोकवनिकामेव राक्षसीभिः प्रवेशिता ॥ ३९

प्रविश्य सीता बहुवृक्षषण्डां
 तां राक्षसेन्द्रस्य विहारभूमिम् ।
 संप्रेक्ष्य सञ्चिन्त्य च राजपुत्रौ
 परं विषादं समुपाजगाम ॥

४ •

इति अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥



एकोनपञ्चाशः सर्गः ॥

घोरेण शरबन्धेन बद्धौ दशरथात्मजौ ।
 निःश्वसन्तौ यथा नागौ शयानौ रुधिरोक्षितौ ॥ १

सर्वे ते वानरश्रेष्ठाः ससुग्रीवा महाबलाः ।
 परिवार्य महात्मानौ तस्थुः शोकपरिप्लुताः ॥ २

एतस्मिन्नन्तरे रामः प्रत्यबुध्यत वीर्यवान् ।
 स्थिरत्वात्सत्वयोगाच्च शरैः सन्दानितोऽपि सन् ॥ ३

प्रत्यवेक्ष्य तदात्मानं शोणितौघपरिप्लुतम् ।
 विललाप तदा रामो मन्दमश्रूण्यवर्तयत् ॥ ४

लक्ष्मणं पतितं दृष्ट्वा मातृगोत्रमुदाहरन् ।
ततो दृष्ट्वा सरुधिरं विषण्णं गाढमर्पितम् ।
भ्रातरं दीनवदनं पर्यदेवयदातुरः ॥ ५

किं नु मे सीतया कार्यं किं कार्यं जीवितेन वा ।
शयानं योऽद्य पश्यामि भ्रातरं युधि निर्जितम् ॥ ६

शक्या सीतासमा नारी मर्त्यलोके विचिन्वता ।
न लक्ष्मणसमो भ्राता सचिवः सांपरायिकः ॥ ७

देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवाः ।
तं तु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः ॥ ८

परित्यक्ष्याम्यहं प्राणान् वानराणां तु पश्यताम् ।
यदि पञ्चत्वमापन्नः सुमित्रानन्दवर्धनः ॥ ९

किं नु वक्ष्यामि कौसल्यां मातरं किं नु कैकयीम् ।
कथमम्बां सुमित्रां च पुत्रदर्शनलालसाम् ॥ १०

विवत्सां वेषमानां च क्रोशन्तीं कुररीमिव ।
कथमाश्वासयिष्यामि यदि यास्यामि तं विना ॥ ११

कथं वक्ष्यामि शत्रुघ्नं भरतं च यशस्विनम् ।
मया सह वनं यातो विना तेनागतः पुनः ॥ १२

उपालम्भं न शक्यामि सोढुं वत सुमित्रया ।
इहैव देहं त्यक्ष्यामि न हि जीवितुमुत्सहे ॥ १३

धिङ् मां दुष्कृतकर्माणमनार्यं यत्कृते ह्यसौ ।
लक्ष्मणः पतितः शेते शरतरूपे गतासुवत् ॥ १४

त्वं नित्यं सुविषण्णं मामाश्वासयसि लक्ष्मण ।
गतासुर्नाद्य शक्नोषि मामार्तमभिभाषितुम् ॥ १५

येनाद्य निहता युद्धे राक्षसा विनिपातिताः ।
तस्यामेव क्षितौ वीरः स शेते निहतः परैः ॥ १६

तथा हि शरतरूपस्थं स्वशोणितपरिप्लुतम् ।
शरजालावृतं भूमौ पश्याम्येनमनाथवत् ॥ १७

शयानः शरतरूपेऽस्मिन् स्वशोणितपरिप्लुतः ।
शरजालैश्चितो भाति भास्करोऽस्तमिव व्रजन् ॥ १८

बाणाभिहतमर्मत्वान्न शक्नोत्यभिभाषितुम् ।
रुजा चाब्रुवतोऽप्यस्य दृष्टिरागेण सूच्यते ॥ १९

यथैव मां वनं यान्तमनुयातो महाद्युतिः ।
अहमप्यनुयास्यामि तथैवैनं यमक्षयम् ॥ २०

इष्टबन्धुजनो नित्यं मां च नित्यमनुव्रतः ।

इमामद्य गतोऽवस्थां ममानार्यस्य दुर्नयैः ॥ २१

सुरुष्टेनापि वीरेण लक्ष्मणेन न संस्मरे ।

परुषं विप्रियं वाऽपि श्रावितं मे कदाचन ॥ २२

विससर्जैकवेगेन पञ्चबाणशतानि यः ।

इष्वस्त्रेऽवधिकस्तस्मात् कार्तवीर्याच्च लक्ष्मणः ॥ २३

अस्त्रैरस्त्राणि यो हन्याच्छक्रस्यापि महात्मनः ।

सोऽयमुर्व्यां हतः शेते महार्हशयनोचितः ॥ २४

तच्च मिथ्याप्रलप्तं मां प्रधक्ष्यति न संशयः ।

यन्मया न कृतो राजा राक्षसानां विभीषणः ॥ २५

अस्मिन्मुहूर्ते सुग्रीव प्रतियातुमितोऽर्हसि ।

मत्वा हीनं मया राजन् रावणोऽभिद्रवेद्वली ॥ २६

अङ्गदं तु पुरस्कृत्य ससैन्यः ससुहज्जनः ।

सागरं तर सुग्रीव नीलेन च नलेन च ॥ २७

कृतं हनुमता कार्यं यदन्यैर्दुष्करं रणे ।

ऋक्षराजेन तुष्यामि गोलाङ्गूलाधिपेन च ॥ २८

अङ्गदेन कृतं कर्म मैन्देन द्विविदेन च ।
 सुषेणं चापि तुष्यामि नीलेन च नलेन च ।
 युद्धं केसरिणा संख्ये घोरं सम्पातिना कृतम् ॥ २९

गवयेन गवाक्षेण शरभेण गजेन च ।
 अन्यैश्च हरिभिर्युद्धं मदर्थे त्यक्तजीवितैः ।
 न चातिक्रामितुं शक्यं दैवं सुग्रीव मानुषैः ॥ ३०

यत्तु शक्यं वयस्येन सुहृदा च परन्तप ।
 कृतं सुग्रीव तत्सर्वं भवता धर्मभीरुणा ॥ ३१

मित्रकार्यं कृतमिदं भवद्भिर्वानरर्षभाः ।
 अनुज्ञाता मया सर्वे यथेष्टं गन्तुमर्हथ ॥ ३२

शुश्रुवुस्तस्य ते सर्वे वानराः परिदेवितम् ।
 वर्तयाञ्चक्रुरश्रूणि नेत्रैः कृष्णेतरेक्षणाः ॥ ३३

ततः सर्वाण्यनीकानि स्थापयित्वा विभीषणः ।
 आजगाम गदापाणिस्त्वरितो यत्र राघवः ॥ ३४

तं दृष्ट्वा त्वरितं यान्तं नीलाञ्जनचयोपमम् ।
 वानरा दुद्रवुः सर्वे मन्यमानास्तु रावणिम् ॥ ३५

इति एकोनपञ्चाशः सर्गः ॥



पञ्चाशः सर्गः ॥

अथोवाच महातेजा हरिराजो महाबलः ।
किमियं व्यथिता सेना मूढवातेव नौर्जले ॥ १

सुग्रीवस्य वचः श्रुत्वा वालिपुत्रोऽङ्गदोऽब्रवीत् ।
न त्वं पश्यसि रामं च लक्ष्मणं च महाबलम् ॥ २

शरजालाचितौ वीरावुभौ दशरथात्मजौ ।
शरतरूपे महात्मानौ शयानौ रुधिरोक्षितौ ॥ ३

अथाब्रवीद्वानरेन्द्रः सुग्रीवः पुत्रमङ्गदम् ।
नानिमित्तमिदं मन्ये भवितव्यं भयेन तु ॥ ४

विषण्णवदना ह्येते त्यक्तप्रहरणा दिशः ।
प्रपलायन्ति हरयस्त्रासादुत्फुल्ललोचनाः ॥ ५

अन्योन्यस्य न लज्जन्ते न निरीक्षन्ति पृष्ठतः ।
विप्रकर्षन्ति चान्योन्यं पतितं लङ्घयन्ति च ॥ ६

एतस्मिन्नन्तरे वीरो गदापाणिर्विभीषणः ।
सुग्रीवं वर्धयामास राघवं च निरैक्षत ॥ ७

विभीषणं तं सुग्रीवो दृष्ट्वा वानरभीषणम् ।

ऋक्षराजं समीपस्थं जाम्बवन्तमुवाच ह ॥

८

विभीषणोऽयं संप्राप्तो यं दृष्ट्वा वानरर्षभाः ।

द्रवन्त्यागतसन्त्रासा रावणात्मजशङ्कया ॥

९

शीघ्रमेतान्सुवित्रस्तान् बहुधा विप्रधावितान् ।

पर्यवस्थापयारूयाहि विभीषणमुपस्थितम् ॥

१०

सुग्रीवेणैवमुक्तस्तु जाम्बवानृक्षपार्थिवः ।

वानरान्सान्त्वयामास सन्निरुध्य प्रधावतः ॥

११

ते निवृत्ताः पुनः सर्वे वानरास्त्यक्तसंभ्रमाः ।

ऋक्षराजवचः श्रुत्वा तं च दृष्ट्वा विभीषणम् ॥

१२

विभीषणस्तु रामस्य दृष्ट्वा गालं शरैश्चितम् ।

लक्ष्मणस्य च धर्मात्मा बभूव व्यथितेन्द्रियः ॥

१३

जलक्लिन्नेन हस्तेन तयोर्नेत्रे प्रमृज्य च ।

शोकसम्पीडितमना रुरोद विललाप च ॥

१४

इमौ तौ सत्वसम्पन्नौ विक्रान्तौ प्रियसंयुगौ ।

इमामवस्थां गमितौ राक्षसैः कूटयोधिभिः ॥

१५

भ्रातुः पुत्रेण मे तेन दुष्पुत्रेण दुरात्मना ।
राक्षस्या जिह्वया बुद्ध्या चालितावृजुविक्रमौ ॥ १६

शरैरिमावलं विद्धौ रुधिरेण समुक्षितौ ।
वसुधायामिमौ सुप्तौ दृश्येते शल्यकाविव ॥ १७

ययोर्वीर्यमुपाश्रित्य प्रतिष्ठा कांक्षिता मया ।
तावुभौ देहनाशाय प्रसुप्तौ पुरुषर्षभौ ॥ १८

जीवन्नद्य विपन्नोऽसि नष्टराज्यमनोरथः ।
प्राप्तप्रतिज्ञश्च रिपुः सकामो रावणः कृतः ॥ १९

एवं विलपमानं तं परिष्वज्य विभीषणम् ।
सुग्रीवः सत्त्वसम्पन्नो हरिराजोऽब्रवीदिदम् ॥ २०

राज्यं प्राप्स्यसि धर्मज्ञ लङ्कायां नात्र संशयः ।
रावणः सह पुत्रेण स कामं नेह लप्स्यते ॥ २१

शरसंपीडितावेन्नावुभौ राघवलक्ष्मणौ ।
त्यक्त्वा मोहं वधिष्येते सगणं रावणं रणे ॥ २२

तमेवं सान्त्वयित्वा तु समाश्रय्य च राक्षसम् ।
सुषेणं श्वशुरं पार्श्वे सुग्रीवस्तमुवाच ह ॥ २३

सह शूरैर्हरिगणैर्लब्धसंज्ञावरिन्दमौ ।

गच्छ त्वं भ्रातरौ गृह्य किष्किन्धां रामलक्ष्मणौ ॥ २४

अहं तु रावणं हत्वा सपुत्रं सहबान्धवम् ।

मैथिलीमानयिष्यामि शक्रो नष्टामिव श्रियम् ॥ २५

श्रुत्वैतद्दानरेन्द्रस्य सुषेणो वाक्यमब्रवीत् ।

गरुडाधिष्ठितावेतावुभौ राघवलक्ष्मणौ ॥ २६

त्यक्त्वा मोहं वधिष्येते महात्मानौ महाबलौ ।

देवासुरमहद्युद्धमनुभूतं सुदारुणम् ॥ २७

तदा स्म दानवा देवाञ्छरसंस्पर्शकोविदाः ।

निजध्नुः शस्त्रविदुषश्छादयन्तो मुहुर्मुहुः ॥ २८

तानार्तान्निष्टसंज्ञांश्च परासूंश्च बृहस्पतिः ।

विद्याभिर्मन्त्रयुक्ताभिरोषधीभिश्चिकित्सति ॥ २९

तान्यौषधान्यानयितुं क्षीरोदं यान्तु सागरम् ।

जवेन वानराः शीघ्रं सम्पातिपनसादयः ॥ ३०

हरयस्ते विजानन्ति पार्वतीस्ता महौषधीः ।

सञ्जीवकरणीं दिव्यां विशल्यां देवनिर्मिताम् ॥ ३१

- चन्द्रश्च नाम द्रोणश्च क्षीरोदे सागरोत्तमे ।
अमृतं यत्र मथितं तत्र ते परमौषधी ॥ ३२
- ते तत्र निहिते देवैः पर्वते परमौषधी ।
अयं वायुसुतो राजन् हनुमांस्तत्र गच्छतु ॥ ३३
- एतस्मिन्नन्तरे वायुर्मेघाश्चापि सविद्युतः ।
पर्यस्यन्सागरे तोयं कम्पयन्निव पर्वतान् ॥ ३४
- महता पक्षवातेन सर्वद्वीपमहाद्रुमाः ।
निपेतुर्भग्नविटपाः समूला लवणाम्भसि ॥ ३५
- अभवन्पन्नगास्त्रस्ता भोगिनस्तत्रवासिनः ।
शीघ्रं सर्वाणि यादांसि जग्मुश्च लवणार्णवम् ॥ ३६
- ततो मुहूर्ताद्गरुडं वैनतेयं महाबलम् ।
वानरा ददृशुः सर्वे ज्वलन्तमिव पावकम् ॥ ३७
- तमागतमभिप्रेक्ष्य नागास्ते विप्रदुद्रुवुः ।
यैस्तौ सत्पुरुषौ बद्धौ शरभूतैर्महाबलौ ॥ ३८
- ततः सुपर्णः काकुत्स्थौ दृष्ट्वा प्रत्यमिनन्दितः ।
विमर्शं च पाणिभ्यां मुखे चन्द्रसमप्रभे ॥ ३९

वैनतेयेन संस्पृष्टास्तयोः संरुरुहुर्व्रणाः ।

सुवर्णे च तनू स्निग्धे तयोराशु बभूवतुः ॥

४०

तेजो वीर्यं बलं चौज उत्साहश्च महागुणः ।

प्रदर्शनं च बुद्धिश्च स्मृतिश्च द्विगुणं तयोः ॥

४१

तावुत्थाप्य महावीर्यौ गरुडो वासवोपमौ ।

उभौ तौ सस्वजे हृष्टौ रामश्चैनमुवाच ह ॥

४२

भवत्प्रसादाद्भ्यसनं रावणिप्रभवं महत् ।

आवामिह व्यतिक्रान्तौ शीघ्रं च बलिनौ कृतौ ॥

४३

यथा तातं दशरथं यथाऽजं च पितामहम् ।

तथा भवन्तमासाद्य हृदयं मे प्रसीदति ॥

४४

को भवान् रूपसम्पन्नो दिव्यस्रगनुलेपनः ।

वसानो विरजे वस्त्रे दिव्याभरणभूषितः ॥

४५

तमुवाच महातेजा वैनतेयो महाबलः ।

पतत्रिराजः प्रीतात्मा हर्षपर्याकुलेक्षणः ॥

४६

अहं सखा ते काकुत्स्थ प्रियः प्राणो बहिश्चरः ।

गरुत्मानिह संप्राप्तो युवाभ्यां साह्यकारणात् ॥

४७

असुरा वा महावीर्या दानवा वा महाबलाः ।

सुराश्चापि सगन्धर्वाः पुरस्कृत्य शतक्रतुम् ॥ ४८

नेमं मोक्षयितुं शक्ताः शरबन्धं सुदारुणम् ।

मायाबलादिन्द्रजिता निर्मितं क्रूरकर्मणा ॥ ४९

एते नागाः काद्रवेयास्तीक्ष्णदंष्ट्रा विषोलबणाः ।

रक्षोमायाप्रभावेन शरा भूत्वा त्वदाश्रिताः ॥ ५०

सभाग्यश्चासि धर्मज्ञ राम सत्यपराक्रम ।

लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा समरे रिपुघातिना ॥ ५१

इमं श्रुत्वा तु वृत्तान्तं त्वरमाणोऽहमागतः ।

सहसा युवयोः स्नेहात् सखित्वमनुपालयन् ॥ ५२

मोक्षितौ च महाघोरादस्मात्सायकबन्धनात् ।

अप्रमादश्च कर्तव्यो युवाभ्यां नित्यमेव हि ॥ ५३

प्रकृत्या राक्षसाः सर्वे संग्रामे कूटयोधिनः ।

शूराणां शुद्धभावानां भवतामार्जवं बलम् ॥ ५४

तन्न विश्वसितव्यं वो राक्षसानां रणाजिरे ।

एतेनैवोपमानेन नित्य जिज्ञा हि राक्षसाः ॥ ५५

एवमुक्त्वा ततो रामं सुपर्णः सुमहाबलः ।

परिष्वज्य सुहृत्स्निग्धमाप्रष्टुमुपचक्रमे ॥

५६

सखे राघव धर्मज्ञ रिपूणामपि वत्सल ।

अभ्यनुज्ञातुमिच्छामि गमिष्यामि यथागतम् ॥

५७

न च कौतूहलं कार्यं सखित्वं प्रति राघव ।

कृतकर्मा रणे वीर सखित्वमनुवेत्स्यसि ॥

५८

बालवृद्धावशेषां तु लङ्कां कृत्वा शरोर्मिभिः ।

रावणं च रिपुं हत्वा सीतां समुपलप्स्यसे ॥

५९

इत्येवमुक्त्वा वचनं सुपर्णः शीघ्रविक्रमः ।

रामं च विरुजं कृत्वा मध्ये तेषां वनौकसाम् ॥

६०

प्रदक्षिणं ततः कृत्वा परिष्वज्य च वीर्यवान् ।

जगामाकाशमाविश्य सुपर्णः पवनो यथा ॥

६१

विरुजौ राघवौ दृष्ट्वा ततो वानरयूथपाः ।

सिंहनादांस्तदा नेदुर्लाङ्गूलान् दुधुवुश्च ते ॥

६२

ततो भेरीः समाजघ्नुर्मृदङ्गांश्चाप्यनादयन् ।

दध्मुः शङ्खांश्च हृष्टास्ते क्ष्वेलन्त्यपि यथापुरम् ॥

६३

आस्फोट्यास्फोट्य विक्रान्ता वानरा नगयोधिनः ।

द्रुमानुत्पाद्य विविधांस्तस्थुः शतसहस्रशः ॥ ६४

विसृजन्तो महानादांस्त्रासयन्तो निशाचरान् ।

लङ्काद्वाराण्युपाजग्मुर्योद्धुकामाः प्लवङ्गमाः ॥ ६५

ततस्तु भीमस्तुमुलो निनादो

बभूव शाखामृगयूथपानाम् ।

क्षये निदाघस्य यथा घनानां

नादः सुभीमो नदतां निशीथे ॥ ६६

इति पञ्चाशः सर्गः ॥



एकपञ्चाशः सर्गः ॥

तेषां सुतुमुलं शब्दं वानराणां तरस्विनाम् ।

नर्दतां राक्षसैः सार्धं तदा शुश्राव रावणः ॥ १

स्निग्धगम्भीरनिर्घोषं श्रुत्वा च निनदं भृशम् ।

सचिवानां ततस्तेषां मध्ये वचनमब्रवीत् ॥ २

यथाऽसौ संप्रहृष्टानां वानराणां समुत्थितः ।

बहूनां सुमहानादो मेघानामिव गर्जताम् ॥ ३

व्यक्तं सुमहती प्रीतिरेतेषां नात्र संशयः ।

तथा हि विपुलैर्नादैश्चक्षुभे वरुणालयः ॥ ४

तौ तु बद्धौ शरैस्तीक्ष्णैर्भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

अयं च सुमहान्नादः शङ्कां जनयतीव मे ॥ ५

एतत्तु वचनं चोक्त्वा मन्त्रिणो राक्षसेश्वरः ।

उवाच नैर्ऋतांस्तत्र समीपपरिवर्तिनः ॥ ६

ज्ञायतां तूर्णमेतेषां सर्वेषां वनचारिणाम् ।

शोककाले समुत्पन्ने हर्षकारणमुत्थितम् ॥ ७

तथोक्तास्तेन संभ्रान्ताः प्राकारमधिरुह्य च ।

ददृशुः पालितां सेनां सुग्रीवेण महात्मना ॥ ८

तौ च मुक्तौ सुघोरेण शरबन्धेन राघवौ ।

समुत्थितौ महाभागौ विषेदुः प्रेक्ष्य राक्षसाः ॥ ९

सन्त्रस्तहृदयाः सर्वे प्राकारादवसृज्य ते ।

विषण्णवदना घोरा राक्षसेन्द्रमुपस्थिताः ॥ १०

तदप्रियं दीनमुखा रावणस्य निशाचरीः ।

कृत्स्नं निवेदयामासुर्यथावद्वाक्यकोविदाः ॥ ११

यौ ताविन्द्रजिता युद्धे भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
निबद्धौ शरबन्धेन निष्प्रकम्पभुजौ कृतौ ॥ १२

विमुक्तौ शरबन्धेन तौ दृश्येते रणाजिरे ।
पाशानिव गजौ छित्वा गजेन्द्रसमविक्रमौ ॥ १३

तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां राक्षसेन्द्रो महाबलः ।
चिन्ताशोकसमाक्रान्तो विषण्णवदनोऽब्रवीत् ॥ १४

घोरैर्दत्तवरैर्बद्धौ शरैराशीविषोपमैः ।
अमोघैः सूर्यसङ्काशैः प्रमथ्येन्द्रजिता युधि ॥ १५

तदस्त्रबन्धमासाद्य यदि मुक्तौ रिपू मम ।
संशयस्थमिदं सर्वमनुपश्याम्यहं बलम् ॥ १६

निष्फलाः खलु संवृत्ताः शरा वासुकितेजसः ।
आदत्तं यैस्तु संग्रामे रिपूणां मम जीवितम् ॥ १७

एवमुक्त्वा तु संक्रुद्धो निःश्वसन्नुरगो यथा ।
अब्रवीद्रक्षसां मध्ये धूम्राक्षं नाम राक्षसम् ॥ १८

बलेन महता युक्तो रक्षसां भीमविक्रम ।
त्वं वधायामिनिर्याहि रामस्य सह वानरैः ॥ १९

एवमुक्तस्तु धूम्राक्षो राक्षसेन्द्रेण धीमता ।
कृत्वा प्रणामं संहृष्टो निर्जगाम नृपालयात् ॥ २०

अभिनिष्क्रम्य तद्द्वारं बलाध्यक्षमुवाच ह ।
त्वरयस्व बलं तूर्णं किं चिरेण युयुत्सतः ॥ २१

धूम्राक्षवचनं श्रुत्वा बलाध्यक्षो बलानुगः ।
बलमुद्योजयामास रावणस्याज्ञया द्रुतम् ॥ २२

ते बद्धषण्टा बलिनो घोररूपा निशाचराः ।
विनद्यमानाः संहृष्टा धूम्राक्षं पर्यवारयन् ॥ २३

विविधायुधहस्ताश्च शूलमुद्गरपाणयः ।
गदाभिः पट्टसैर्दण्डैरायसैर्मुसलैर्भृशम् ॥ २४

परिघैर्भिण्डिपालैश्च भल्लैः प्रासैः परश्वधैः ।
निर्ययू राक्षसा दिग्भ्यो नर्दन्तो जलदा यथा ॥ २५

रथैः कवचिनस्त्वन्ये ध्वजैश्च समलंकृतैः ।
सुवर्णजालविहितैः खरैश्च विविधाननैः ॥ २६

हयैः परमशीघ्रैश्च गजेन्द्रैश्च मदोत्कटैः ।
निर्ययू राक्षसव्याघ्रा व्याघ्रा इव दुरासदाः ॥ २७

वृकसिंहमुखैर्युक्तं खरैः कनकभूषणैः ।

आरुरोह रथं दिव्यं धूम्राक्षः खरनिःस्वनः ॥ २८

स निर्यातो महावीर्यो धूम्राक्षो राक्षसैर्वृतः ।

प्रहसन् पश्चिमद्वारं हनूमान् यत्र यूथपः ॥ २९

रथप्रवरमास्थाय खरयुक्तं खरस्वनम् ।

प्रयान्तं तु महाघोरं राक्षसं भीमविक्रमम् ॥ ३०

अन्तरिक्षगता घोराः शकुनाः प्रत्यवारयन् ।

रथशीर्षे महाभीमो गृध्रश्च निपपात ह ॥ ३१

ध्वजाग्रे ग्रथिताश्चैव निपेतुः कुणपाशनाः ।

रुधिराद्रो महाज्ज्वेतः कबन्धः पतितो भुवि ॥ ३२

विस्वरं चोत्सृजन्नादं धूम्राक्षस्य समीपतः ।

ववर्ष रुधिरं देवः सञ्चाल च मेदिनी ॥ ३३

प्रतिलोमं ववौ वायुर्निर्घातसमनिःस्वनः ।

तिमिरौघावृतास्तत्र दिशश्च न चकाशिरे ॥ ३४

स तूत्पातांस्ततो दृष्ट्वा राक्षसानां भयावहान् ।

प्रादुर्भूतान्सुघोरांश्च धूम्राक्षो व्यथितोऽभवत् ।

मुमुहू राक्षसाः सर्वे धूम्राक्षस्य पुरःसराः ॥ ३५

ततः सुभीमो बहुभिर्निशाचरै-

वृतोऽभिनिष्क्रम्य रणोत्सुको बली ।

ददर्श तां राघवबाहुपालितां

महौघकल्पां बहुवानरीं चमूम् ॥

३६

इति एकपञ्चाशः सर्गः ॥



द्विपञ्चाशः सर्गः ॥

धूम्राक्षं प्रेक्ष्य निर्यान्तं राक्षसं भीमविक्रमम् ।

विनेदुर्वानराः सर्वे प्रहृष्टा युद्धकाङ्क्षिणः ॥

१

तेषां सुतुमुलं युद्धं सञ्जज्ञे कपिरक्षसाम् ।

अन्योन्यं पादपैर्घोरं निघ्नतां शूलमुद्गरैः ।

घोरैश्च परिघैश्चित्तैश्चिशूलैश्चापि संहतैः ॥

२

राक्षसैर्वानरा घोरैर्विनिकृताः समन्ततः ।

वानरै राक्षसाश्चापि दुर्मैर्भूमौ समीकृताः ॥

३

राक्षसास्त्वभिसंकुद्धा वानरान्निशितैः शरैः ।

विव्यधुर्घोरसङ्काशैः कङ्कपत्नैरजिह्वैः ॥

४

ते गदाभिश्च भीमाभिः पट्टसैः कूटमुद्गरैः ।
घोरैश्च परिघैश्चलैस्त्रिशूलैश्चापि संशितैः ॥ ५

विदार्यमाणा रक्षोभिर्वानरास्ते महाबलाः ।
अमर्षाज्जनितोद्धर्षाश्चक्रुः कर्माण्यभीतवत् ॥ ६

शरनिर्भिन्नगात्रास्ते शूलनिर्भिन्नदेहिनः ।
जगृहुस्ते द्रुमांस्तत्र शिलाश्च हरियूथपाः ॥ ७

ते भीमवेगा हरयो नर्दमानास्ततस्ततः ।
ममन्थू राक्षसान् भीमान्नामानि च बभाषिरे ॥ ८

तद्वभूवादभुतं घोरं युद्धं वानररक्षसाम् ।
शिलाभिर्विविधामिश्च बहुशाखैश्च पादपैः ॥ ९

राक्षसा मथिताः केचिद्वानरैर्जितकाशिभिः ।
प्रवेमू रुधिरं केचिन्मुखै रुधिरभोजनाः ॥ १०

पार्श्वेषु दारिताः केचित् केचिद्राशीकृता द्रुमैः ।
शिलाभिश्चूर्णिताः केचित् केचिद्वन्तैर्विदारिताः ॥ ११

ध्वजैर्विमथितैर्मग्नैः खरैश्च विनिपातितैः ।
रथैर्विध्वंसितैः केचिद्वथिता रजनीचरैः ॥ १२

- गजेन्द्रैः पर्वताकारैः पर्वताग्रैर्वनौकसाम् ।
मथितैर्वाजिभिः कीर्णं सारोहैर्वसुधातलम् ॥ १३
- वानरैर्भीमविक्रान्तैराप्लुत्याप्लुत्य वेगितैः ।
राक्षसाः करजैस्तीक्ष्णैर्मुखेषु विनिकर्तिताः ॥ १४
- विवर्णवदना भूयो विप्रकीर्णशिरोरुहाः ।
गूढाः शोणितगन्धेन निपेतुर्धरणीतले ॥ १५
- अन्ये परमसंकुद्धा राक्षसा भीमनिःस्वनाः ।
तलैरेवाभिधावन्ति वज्रस्पर्शसमैर्हरीन् ॥ १६
- वानरैरापतन्तस्ते वेगिता वेगवत्तरैः ।
मुष्टिभिश्चरणैर्दन्तैः पादपैश्चावपोथिताः ।
वानरैर्भिद्यमानास्ते राक्षसा विप्रदुद्रुवुः ॥ १७
- सैन्यं तु विद्रुतं दृष्ट्वा धूम्राक्षो राक्षसर्षभः ।
क्रोधेन कदनं चक्रे वानराणां युयुत्सताम् ॥ १८
- प्रासैः प्रमथिताः केचिद्वानराः शोणितस्रवाः ।
मुद्गरैराहताः केचित् पतिता धरणीतले ॥ १९
- परिघैर्मथिताः केचिद्विण्डिपालैर्विदारिताः ।
पट्टसैराहताः केचिद्विह्वलन्तो गतासवः ॥ २०

- केचिद्विनिहता भूमौ रुधिरार्द्रा वनौकसः ।
केचिद्विद्राविता नष्टाः सबलै राक्षसैर्युधि ॥ २१
- विभिन्नहृदयाः केचिदेकपार्श्वेन दारिताः ।
विदारितास्त्रिशूलैश्च केचिदान्तैर्विनिःसृताः ॥ २२
- तत्सुभीमं महायुद्धं हरिराक्षससंकुलम् ।
प्रबभौ शब्दबहुलं शिलापादपसंकुलम् ॥ २३
- धनुर्ज्यातन्त्रिमधुरं हिकातालसमन्वितम् ।
मन्दस्तनितसङ्गीतं युद्धगान्धर्वमाबभौ ॥ २४
- धूम्राक्षस्तु धनुष्पाणिर्वानरान् रणमूर्धनि ।
हसन्विद्रावयामास दिशस्तान्शरवृष्टिभिः ॥ २५
- धूम्राक्षेणार्दितं सैन्यं व्यथितं दृश्य मारुतिः ।
अभ्यवर्तत संक्रुद्धः प्रगृह्य विपुलं शिलाम् ॥ २६
- क्रोधाद्द्विगुणताम्राक्षः पितृतुल्यपराक्रमः ।
शिलां तां पातयामास धूम्राक्षस्य रथं प्रति ॥ २७
- आपतन्तीं शिलां दृष्ट्वा गदामुद्यम्य संभ्रमात् ।
रथादाप्लुत्य वेगेन वसुधायां व्यतिष्ठत ॥ २८

- सा प्रमथ्य रथं तस्य निपपात शिला भुवि ।
सचक्रकूबरं साश्वं सध्वजं सशरासनम् ॥ २९
- स भङ्क्त्वा तु रथं तस्य हनुमान्मारुतात्मजः ।
रक्षसां कदनं चक्रे सस्कन्धविटपैर्द्रुमैः ॥ ३०
- विभिन्नशिरसो भूत्वा राक्षसाः शोणितोक्षिताः ।
द्रुमैः प्रमथिताश्चान्ये निपेतुर्धरणीतले ॥ ३१
- विद्राव्य राक्षसं सैन्यं हनुमान्मारुतात्मजः ।
गिरेः शिखरमादाय धूम्राक्षमभिदुद्रुवे ॥ ३२
- तमापतन्तं धूम्राक्षो गदामुद्यम्य वीर्यवान् ।
विनर्दमानः सहसा हनुमन्तमभिद्रवत् ॥ ३३
- तस्य क्रुद्धस्य वेगेन गदां तां बहुकण्टकाम् ।
पातयामास धूम्राक्षो मस्तके तु हनूमतः ॥ ३४
- ताडितः स तया तत्र गदया भीमरूपया ।
स कपिर्मारुतबलस्तं प्रहारमचिन्तयन् ॥ ३५
- धूम्राक्षस्य शिरोमध्ये गिरिशृङ्गमपातयत् ॥ ३६
- स विह्वलितसर्वाङ्गो गिरिशृङ्गेण ताडितः ।
पपात सहसा भूमौ विकीर्ण इव पर्वतः ॥ ३७

धूम्राक्षं निहतं दृष्ट्वा हतशेषा निशाचराः ।

त्रस्ताः प्रविविशुर्लङ्कां वध्यमानाः प्लवङ्गमैः ॥ ३८

स तु पवनसुतो निहत्य शत्रुं

क्षतजवहाः सरितश्च सन्निकीर्य ।

रिपुवधजनितश्रमो महात्मा

मुदमगमत्कपिभिः सुपूज्यमानः ॥ ३९

इति द्विपञ्चाशः सर्गः ॥



त्रिपञ्चाशः सर्गः ॥

धूम्राक्षं निहतं श्रुत्वा रावणो राक्षसेश्वरः ।

क्रोधेन महताऽऽविष्टो निःश्वसन्नुरगो यथा ॥ १

दीर्घमुष्णं विनिःश्वस्य क्रोधेन कलुषीकृतः ।

अब्रवीद्राक्षसं शूरं वज्रदंष्ट्रं महाबलम् ॥ २

गच्छ त्वं वीर निर्याहि राक्षसैः परिवारितः ।

जहि दाशरथिं रामं सुग्रीवं बानरैः सह ॥ ३

तथेत्युक्त्वा द्रुततरं मायावी राक्षसेश्वरः ।
निर्जगाम बलैः सार्धं बहुभिः परिवारितः ॥ ४

नागैरश्वैः खरैरुष्ट्रैः संयुक्तः सुसमाहितः ।
पताकाध्वजचितैश्च रथैश्च समलंकृतैः ॥ ५

ततो विचित्रकेयूरमकुटैश्च विभूषितः ।
तनुत्राणि च संरुद्धञ्च सधनुर्निर्ययौ द्रुतम् ॥ ६

पताकालंकृतं दीप्तं तप्तकाञ्चनभूषणम् ।
रथं प्रदक्षिणं कृत्वा समारोहच्चमूपतिः ॥ ७

यष्टिभिस्तोमरैश्चित्तैः शूलैश्च मुसलैरपि ।
भिण्डिपालैश्च पाशैश्च शक्तिभिः षट्सैरपि ॥ ८

खड्गैश्चक्रैर्गदाभिश्च निशितैश्च परश्वधैः ।
पदातयश्च निर्यान्ति विविधाः शस्त्रपाणयः ॥ ९

विचित्रवाससः सर्वे दीप्ता राक्षसपुङ्गवाः ।
गणा मदोत्कटाः शूराश्चलन्त इव पर्वताः ॥ १०

ते युद्धकुशलै रूढास्तोमराङ्कुशपाणिभिः ।
अन्ये लक्षणसंयुक्ताः शूरा रूढा महाबलाः ॥ ११

तद्राक्षसबलं घोरं विप्रस्थितमशोभत ।

प्रावृट्काले यथा मेघा नर्दमानाः सविद्युतः ॥ १२

निःसृता दक्षिणद्वारादङ्गदो यत्र यूथपः ।

तेषां निष्क्रममाणानामशुभं समजायत ॥ १३

आकाशाद्विघनात्तीव्रा उल्काश्चाभ्यपतन्तदा ।

वमन्तः पावकज्वालाः शिवा घोरा ववाशिरे ॥ १४

व्याहरन्ति मृगा घोरा रक्षसां निधनं तदा ।

समापतन्तो योधास्तु प्रास्वलन्तत्र दारुणम् ॥ १५

एतानौत्पातिकान्दृष्ट्वा वज्रदंष्ट्रो महाबलः ।

धैर्यमालम्ब्य तेजस्वी निर्जगाम रणोत्सुकः ॥ १६

तांस्तु निष्क्रमतो दृष्ट्वा वानरा जितकाशिनः ।

प्रणेदुः सुमहानादान् दिशः शब्देन पूरयन् ॥ १७

ततः प्रवृत्तं तुमुलं हरीणां राक्षसैः सह ।

घोराणां भीमरूपाणामन्योन्यवधकाङ्क्षिणाम् ॥ १८

निष्पतन्तो महोत्साहा भिन्नदेहशिरोधराः ।

रुधिरोक्षितसर्वाङ्गा न्यपतन्धरणीतले ॥ १९

केचिदन्योन्यमासाद्य शूराः परिघपाणयः ।

चिक्षिपुर्विविधाञ्छस्त्रान् समरेष्वनिवर्तिनः ॥ २

द्रुमाणां च शिलानां च शस्त्राणां चापि निस्वनः ।

श्रूयते सुमहांस्तत्र घोरो हृदयभेदनः ॥ २

रथनेमिस्वनस्तत्र धनुषश्चापि निःस्वनः ।

शङ्खभेरीमृदङ्गानां बभूव तुमुलः स्वनः ॥ २

केचिदस्त्राणि संसृज्य बाहुयुद्धमकुर्वत ।

तलैश्च चरणैश्चापि मुष्टिभिश्च द्रुमैरपि ॥ २

जानुभिश्च हताः केचिद्भिन्नदेहास्तु राक्षसाः ।

शिलाभिश्चूर्णिताः केचिद्धानरैर्युद्धदुर्मदैः ॥ २

वज्रदंष्ट्रो भृशं बाणैस्सर्वान् वित्रासयन् हरीन् ।

चचार लोकसंहारे पाशहस्त इवान्तकः ॥ २

बलवन्तोऽस्त्रविदुषो नानाप्रहरणा रणे ।

जघ्नुर्वानरसैन्यानि राक्षसाः क्रोधमूर्च्छिताः ॥ २

निघ्नतो राक्षसान्दृष्ट्वा सर्वान्वालिमुतो रणे ।

क्रोधेन द्विगुणाविष्टः संवर्तक इवानलः ॥ २

तान्राक्षसगणान्सर्वान् वृक्षमुद्यम्य वीर्यवान् ।

अङ्गदः क्रोधताम्राक्षः सिंहः क्षुद्रमृगानिव ।

चकार कदनं घोरं शक्रतुल्यपराक्रमः ॥

२८

अङ्गदाभिहतास्तत्र राक्षसा भीमविक्रमाः ।

विभिन्नशिरसः पेतुर्निकृता इव पादपाः ॥

२९

रथैरश्वैर्ध्वजैश्चितैः शरीरैर्हरिरक्षसाम् ।

रुधिरेण च संछन्ना भूमिर्भयकरी तदा ॥

३०

हारकेयूरवस्त्रैश्च विचितैः समलंकृता ।

भूमिर्भाति रणे तत्र शारदीव यथा निशा ॥

३१

अङ्गदस्य च वेगेन तद्राक्षसबलं महत् ।

प्राकम्पत तदा तत्र पवनेनाम्बुदो यथा ॥

३२

इति त्रिपञ्चाशः सर्गः ॥



चतुःपञ्चाशः सर्गः ॥

बलस्य च निघातेन अङ्गदस्य जवेन च ।

राक्षसः क्रोधमाविष्टो वज्रदंष्ट्रो महाबलः ॥

१

विष्कार्य च धनुर्घोरं शक्राशनिसमस्वनम् ।

वानराणामनीकानि प्राकिरच्छरवृष्टिभिः ॥

राक्षसाश्चापि मुख्यास्ते रथैश्च समवस्थिताः ।

नानाप्रहरणाः शूराः प्रायुध्यन्त तदा रणे ॥

वानराणां तु शूरास्तु सर्वे ते प्लवगर्षभाः ।

अयुध्यन्त शिलाहस्ताः समवेताः समन्ततः ॥

तत्रायुधसहस्राणि तस्मिन्नायोधने भृशम् ।

राक्षसाः कपिमुख्येषु पातयाञ्चक्रिरे तदा ॥

वानराश्चापि रक्षस्तु महावृक्षान्महाशिलाः ।

प्रवीराः पातयामासुर्मत्तवारणसन्निभाः ॥

शूराणां युध्यमानानां समरेष्वनिवर्तिनाम् ।

तद्राक्षसगणानां च सुयुद्धं समवर्तत ॥

प्रभिन्नशिरसः केचिच्छन्नैः पादैश्च बाहुभिः ।

शस्त्रैरर्पितदेहास्तु रुधिरेण समुक्षिताः ॥

हरयो राक्षसाश्चैव शेरते गां समाश्रिताः ।

कङ्कगृध्रबलाढ्याश्च गोमायुगणसंकुलाः ॥

कबन्धानि समुत्पेतुर्भीरूणां भीषणानि वै ।
भुजपाणिशिरश्छिन्नाश्छिन्नकायाश्च भूतले ।
वानरा राक्षसाश्चापि निपेतुस्तत्र वै रणे ॥ १०

ततो वानरसैन्येन हन्यमानं निशाचरम् ।
प्राभज्यत बलं सर्वं वज्रदंष्ट्रस्य पश्यतः ॥ ११

राक्षसान्भयवित्रस्तान् हन्यमानान् प्लवङ्गमैः ।
दृष्ट्वा स रोषताम्राक्षो वज्रदंष्ट्रः प्रतापवान् ॥ १२

अविवेश धनुष्पाणिस्त्रासयन् हरिवाहिनीम् ।
शरैर्विदारयामास कङ्कपत्नैरजिह्वगैः ॥ १३

विभेद वानरांस्तत्र सप्ताष्टौ नव पञ्च च ।
विव्याध परमक्रुद्धो वज्रदंष्ट्रः प्रतापवान् ॥ १४

त्रस्ताः सर्वे हरिगणाः शरैः संकृतकन्धराः ।
अङ्गदं संप्रधावन्ति प्रजापतिमिव प्रजाः ॥ १५

ततो हरिगणान्मग्नान् दृष्ट्वा वालिसुतस्तदा ।
क्रोधेन वज्रदंष्ट्रं तमुदीक्षन्तमुदैक्षत ॥ १६

वज्रदंष्ट्रोऽङ्गदश्चोभौ सङ्गतौ हरिराक्षसौ ।
चेरतुः परमक्रुद्धौ हरिमत्तगजाविव ॥ १७

ततः शरसहस्रेण वालिपुत्रं महाबलः ।

जघान मर्मदेशेषु शरैरग्निशिखोपमैः ॥

१८

रुधिरोक्षितसर्वाङ्गो वालिसूनुर्महाबलः ।

चिक्षेप वज्रदंष्ट्राय वृक्षं भीमपराक्रमः ॥

१९

दृष्ट्वा पतन्तं तं वृक्षमसंभ्रान्तश्च राक्षसः ।

चिच्छेद बहुधा सोऽपि मथितः पतितो भुवि ॥

२०

तं दृष्ट्वा वज्रदंष्ट्रस्य विक्रमं प्लवगर्षभः ।

प्रगृह्य विपुलं शैलं चिक्षेप च ननाद च ॥

२१

समापतन्तं तं दृष्ट्वा रथादाप्लुत्य वीर्यवान् ।

गदापाणिरसंभ्रान्तः पृथिव्यां समतिष्ठत ॥

२२

अङ्गदेन शिला क्षिप्ता गत्वा तु रणमूर्धनि ।

सचक्रकूबरं साश्वं प्रममाथ रथं तदा ॥

२३

ततोऽन्यं गिरिमाक्षिप्य विपुलं द्रुमभूषितम् ।

वज्रदंष्ट्रस्य शिरसि पातयामास वानरः ॥

२४

अभवच्छोणितोद्गारी वज्रदंष्ट्रः स मूर्च्छितः ।

मुहूर्तमभवन्मूढो गदामालिङ्ग्य निःश्वसन् ॥

२५

स लब्धसंज्ञो गदया वालिपुत्रमवस्थितम् ।

जघान परमक्रुद्धो वक्षोदेशे निशाचरः ॥ २६

गदां त्यक्त्वा ततस्तत्र मुष्टियुद्धमवर्तत ।

अन्योन्यं जघ्नतुस्तत्र तावुभौ हरिराक्षसौ ॥ २७

रुधिरोद्गारिणौ तौ तु प्रहारैर्जनितश्रमौ ।

बभूवतुः सुविक्रान्तावङ्गारकबुधाविव ॥ २८

ततः परमतेजस्वी अङ्गदः कपिकुञ्जरः ।

उत्पाठ्य वृक्षं स्थितवान् बहुपुष्पफलाचितम् ॥ २९

जग्राह चार्षभं चर्म खड्गं च विपुलं शुभम् ।

किङ्किणीजालसंछन्नं चर्मणा च परिष्कृतम् ॥ ३०

विचित्रांश्चेरतुर्मार्गान् रुषितौ कपिराक्षसौ ।

जघ्नतुश्च तदाऽन्योन्यं निर्दयं जयकाङ्क्षिणौ ॥ ३१

व्रणैः सासैरशोभेतां पुष्पिताविव किंशुकौ ।

युध्यमानौ परिश्रान्तौ जानुभ्यामवनीं गतौ ॥ ३२

निमेषान्तरमात्रेण अङ्गदः कपिकुञ्जरः ।

उदतिष्ठत दीप्ताक्षो दण्डाहत इवोरगः ॥ ३३

निर्मलेन सुधौतेन खड्गेनास्य महच्छिरः ।

जघान वज्रदंष्ट्रस्य वालिसूनुर्महाबलः ॥

३४

रुधिरोक्षितगात्रस्य बभूव पतितं द्विधा ।

सरोषपरिवृत्ताक्षं शुभं खड्गं हतं शिरः ॥

३५

वज्रदंष्ट्रं हतं दृष्ट्वा राक्षसा भयमोहिताः ।

त्रस्ताः प्रत्यपतल्लङ्कां वध्यमानाः प्लवङ्गमैः ।

विषण्णवदना दीना हिया किञ्चिदवाङ्मुखाः ॥ ३६

निहत्य तं वज्रधरप्रभावं

स वालिसूनुः कपिसैन्यमध्ये ।

जगाम षर्षं महितो महाबलः

सहस्रनेत्रस्त्रिदशैरिवावृतः ॥

३७

इति चतुःपञ्चाशः सर्गः ॥



पञ्चपञ्चाशः सर्गः ॥



वज्रदंष्ट्रं हतं श्रुत्वा वालिपुत्रेण रावणः ।

बलाध्यक्षमुवाचेदं कृताञ्जलिमुपस्थितम् ॥

१

- शीघ्रं निर्यान्तु दुर्धर्षा राक्षसा भीमविक्रमाः ।
अकम्पनं पुरस्कृत्य सर्वशस्त्रप्रकोविदम् ॥ २
- एष शास्ता च गोप्ता च नेता च युधि संमतः ।
भूतिकामश्च मे नित्यं नित्यं च समरप्रियः ॥ ३
- एष जेष्यति काकुत्स्थौ सुग्रीवं च महाबलम् ।
वानरांश्चापरान्घोरान् वधिष्यति परन्तपः ॥ ४
- परिगृह्य स तामाज्ञां रावणस्य महाबलः ।
बलं संत्वरयामास तदा लघुपराक्रमः ॥ ५
- ततो नानाप्रहरणा भीमाक्षा भीमदर्शनाः ।
निष्पेतू राक्षसां मुख्या बलाध्यक्षप्रचोदिताः ॥ ६
- रथमास्थाय विपुलं तप्तकाञ्चनकुण्डलः ।
मेघाभो मेघवर्णश्च मेघस्वनमहास्वनः ।
राक्षसैः संवृतो भीमैस्तदा निर्यात्यकम्पनः ॥ ७
- न हि कम्पयितुं शक्यः सुरैरपि महामृधे ।
अकम्पनस्ततस्तेषामादित्य इव तेजसा ॥ ८
- तस्य निर्धाविमानस्य संरब्धस्य युयुत्सया ।
अकस्माद्दैन्यमागच्छद्भयानां रथवाहिनाम् ॥ ९

व्यस्फुरन्नयनं चास्य सव्यं युद्धाभिनन्दिनः ।

विवर्णो मुखवर्णश्च गद्गदश्चाभवत्स्वनः ॥ १०

अभवत्सुदिने चापि दुर्दिनं रूक्षमारुतम् ।

ऊचुः खगा मृगाः सर्वे वाचः क्रूरा भयावहाः ॥ ११

स सिंहोपचितस्कन्धः शार्दूलसमविक्रमः ।

तानुत्पातानचिन्त्यैव निर्जगाम रणाचिरम् ॥ १२

तदा निर्गच्छतस्तस्य रक्षसः सह राक्षसैः ।

बभूव सुमहान्नादः क्षोभयन्निव सागरम् ॥ १३

तेन शब्देन वित्रस्ता वानराणां महाचभूः ।

द्रुमशैलप्रहरणा योद्धुं समवतिष्ठत ॥ १४

तेषां युद्धं महारौद्रं सञ्जज्ञे हरिरक्षसाम् ।

रामरावणयोरर्थे समभित्यक्तजीविनाम् ॥ १५

सर्वे ह्यतिबलाः शूराः सर्वे पर्वतसन्निभाः ।

हरयो राक्षसाश्चैव परस्परजिघांसया ॥ १६

तेषां विनर्दतां शब्दः संयुगेऽतितरस्विनाम् ।

शुश्रुवे सुमहान्क्रोधादन्योन्यमभिगर्जताम् ॥ १७

- रजश्चारुणवर्णाभं सुभीममभवद्भृशम् ।
उद्धूतं हरिरक्षोभिः संरुोध दिशो दश ॥ १८
- अन्योन्यं रजसा तेन कौशेयोद्धतपाण्डुना ।
संवृतानि च भूतानि ददृशुर्न रणाजिरे ॥ १९
- न ध्वजा न पताका वा चर्म वा तुरगोऽपि वा ।
आयुधं स्यन्दनं वाऽपि ददृशे तेन रेणुना ॥ २०
- शब्दश्च सुमहांस्तेषां नर्दतामभिधावताम् ।
श्रूयते तुमुले युद्धे न रूपाणि चकाशिरे ॥ २१
- हरीनेव सुसंकुद्धा हरयो जघ्नुराहवे ।
राक्षसाश्चापि रक्षांसि निजघ्नुस्तिमिरे तदा ॥ २२
- परांश्चैव विनिघ्नन्तः स्वांश्च वानरराक्षसाः ।
रुधिरार्द्रां तदा चक्रुर्महीं पङ्कानुलेपनाम् ॥ २३
- ततस्तु रुधिरौघेण सिक्तं व्यपगतं रजः ।
शरीरशवसङ्कीर्णा बभूव च वसुन्धरा ॥ २४
- द्रुमशक्तिशिलाप्रासैर्गदापरिघतोमरैः ।
हरयो राक्षसाश्चैव जघ्नुरन्योन्यमोजसा ॥ २५

बाहुभिः परिघाकारैर्युध्यन्तः पर्वतोपमाः ।

हरयो भीमकर्माणो राक्षसाञ्जघ्नुराहवे ॥

२६

राक्षसास्त्वपि संक्रुद्धाः प्रासतोमरपाणयः ।

कपीन्निजघ्निरे तत्र शस्त्रैः परमदारुणैः ॥

२७

अकम्पनः सुसंक्रुद्धो राक्षसानां चमूपतिः ।

संहर्षयति तान्सर्वान् राक्षसान् भीमविक्रमान् ॥

२८

हरयस्त्वपि रक्षांसि महाद्रुममहाश्मभिः ।

विदारयन्त्यभिक्रम्य शस्त्राण्याच्छिद्य वीर्यतः ॥

२९

एतस्मिन्नन्तरे वीरा हरयः कुमुदो नलः ।

मैन्दश्च द्विविदः क्रुद्धाश्चकुर्वेगमनुत्तमम् ॥

३०

ते तु वृक्षैर्महावेगा राक्षसानां चमूमुखे ।

कदनं सुमहच्चकुर्लीलया हरियूथपाः ।

ममन्थू राक्षसान्सर्वे वानरा गणशो भृशम् ॥

३१

इति पञ्चपञ्चाशः सर्गः ॥



षट्पञ्चाशः सर्गः ॥

तद्दृष्ट्वा सुमहत्कर्म कृतं वानरसत्तमैः ।

क्रोधमाहारयामास युधि तीव्रमकम्पनः ॥ १

क्रोधमूर्च्छितरूपस्तु धून्वन्परमकार्मुकम् ।

दृष्ट्वा तु कर्म शत्रूणां सारथिं वाक्यमब्रवीत् ॥ २

तलैव तावत्त्वरितं रथं प्रापय सारथे ।

यत्नैते बहवो भ्रन्ति सुबहून्राक्षसान्रणे ॥ ३

एतेऽत्र बलवन्तो हि भीमकायाश्च वानराः ।

द्रुमशैलप्रहरणास्तिष्ठन्ति प्रमुखे मम ॥ ४

एतान्निहन्तुमिच्छामि समरश्लाघिनो ह्यहम् ।

एतैः प्रमथितं सर्वं दृश्यते राक्षसं बलम् ॥ ५

ततः प्रजवनाश्चेन रथेन रथिनां वरः ।

हरीनभ्यहनत्क्रोधाच्छरजालैरकम्पनः ॥ ६

न स्थातुं वानराः शोकः किं पुनर्योद्धुमाहवे ।

अकम्पनशरैर्भग्नाः सर्व एव विदुद्रुवुः ॥ ७

तान्मृत्युवशमापन्नानकम्पनवशं गतान् ।

समीक्ष्य हनुमाञ्ज्ञातीनुपतस्थे महाबलः ॥

८

तं महाप्लवगं दृष्ट्वा सर्वे प्लवगयूथपाः ।

समेत्य समरे वीराः सहिताः पर्यवारयन् ॥

९

अवस्थितं हनूमन्तं ते दृष्ट्वा हरियूथपाः ।

बभूवुर्बलवन्तो हि बलवन्तं समाश्रिताः ॥

१०

अकम्पनस्तु शैलाभं हनूमन्तमवस्थितम् ।

महेन्द्र इव धाराभिः शरैरभिववर्ष ह ॥

११

अचिन्तयित्वा बाणौघाञ्छरीरे पतिताञ्शितान् ।

अकम्पनवधार्थाय मनो दध्रे महाबलः ॥

१२

स प्रसह्य महातेजा हनूमान्मारुतात्मजः ।

अभिदुद्राव तद्रक्षः कम्पयन्निव मेदिनीम् ॥

१३

तस्याभिनर्दमानस्य दीप्यमानस्य तेजसा ।

बभूव रूपं दुर्धर्षं दीप्तस्येव विभावसोः ॥

१४

आत्मानं त्वप्रहरणं ज्ञात्वा क्रोधसमन्वितः ।

शैलमुत्पाटयामास वेगेन हरिपुङ्गवः ॥

१५

तं गृहीत्वा महाशैलं पाणिनैकेन मारुतिः ।
स विनद्य महानादं भ्रामयामास वीर्यवान् ॥

ततस्तमभिदुद्राव राक्षसेन्द्रमकम्पनम् ।
यथा हि नमुचिं संख्ये वज्रेणेव पुरन्दरः ॥ १७

अकम्पनस्तु तद्दृष्ट्वा गिरिशृङ्गं समुद्यतम् ।
दूरादेव महाबाणैरर्धचन्द्रैर्व्यदारयत् ॥ १८

तत्पर्वताग्रमाकाशे रक्षोबाणविदारितम् ।
विशीर्णं पतितं दृष्ट्वा हनुमान्क्रोधमूर्च्छितः ॥ १९

सोऽश्वकर्णं समासाद्य रोषदर्पान्वितो हरिः ।
तूर्णमुत्पाटयामास महागिरिमिवोच्छ्रितम् ॥ २०

तं गृहीत्वा महास्कन्धं सोऽश्वकर्णं महाद्युतिः ।
प्रहस्य परया प्रीत्या भ्रामयामास संयुगे ॥ २१

प्रधावन्नूरुवेगेन प्रभञ्जंस्तरसा द्रुमान् ।
हनुमान्परमक्रुद्धश्चरणैर्दारयन् क्षितिम् ॥ २२

गजांश्च सगजारोहान् सरथान् रथिनस्तथा ।
जघान हनुमान्धीमान् राक्षसांश्च पदातिगान् ॥ २३

तमन्तकमिव क्रुद्धं समरे प्राणहारिणम् ।

हनुमन्तमभिप्रेक्ष्य राक्षसा विषदुर्दुवुः ॥

२४

तमापतन्तं संक्रुद्धं राक्षसानां भयावहम् ।

ददर्शकम्पनो वीरश्चुकोप च ननाद च ॥

२५

स चतुर्दशभिर्बाणैः शितैर्देहविदारणैः ।

निर्बिभेद हनूमन्तं महावीर्यमकम्पनः ॥

२६

स तदा प्रतिविद्धस्तु बह्वीभिः शरवृष्टिभिः ।

हनुमान्ददृशे वीरः प्ररूढ इव सानुमान् ॥

२७

विरराज महाकायो महावीर्यो महामनाः ।

पुष्पिताशोकसङ्काशो विधूम इव पावकः ॥

२८

ततोऽन्यं वृक्षमुत्पाठ्य कृत्वा वेगमनुत्तमम् ।

शिरस्यभिजघानाशु राक्षसेन्द्रमकम्पनम् ॥

२९

स वृक्षेण हतस्तेन सक्रोधेन महात्मना ।

राक्षसो वानरेन्द्रेण पपात च ममार च ॥

३०

तं दृष्ट्वा निहतं भूमौ राक्षसेन्द्रमकम्पनम् ।

व्यथिता राक्षसाः सर्वे क्षितिकम्प इव द्रुमाः ॥

३१

त्यक्तप्रहरणाः सर्वे राक्षसास्ते पराजिताः ।

लङ्कामभिययुस्त्रस्ता वानरैस्तैरभिद्रुताः ॥ ३२

ते मुक्तकेशाः संभ्रान्ता भग्नमानाः पराजिताः ।

स्रवच्छूमजलैरङ्गैः श्वसन्तो विप्रदुद्रुवुः ॥ ३३

अन्योन्यं प्रममन्थुस्ते विविशुर्नगरं भयात् ।

पृष्ठतस्ते हनूमन्तं प्रेक्षमाणा मुहुर्मुहुः ॥ ३४

तेषु लङ्कां प्रविष्टेषु राक्षसेषु महाबलाः ।

समेत्य हरयः सर्वे हनूमन्तमपूजयन् ॥ ३५

सोऽपि प्रहृष्टस्तान्सर्वान् हरीन्प्रत्यभ्यपूजयत् ।

हनुमान्सत्त्वसम्पन्नो यथार्हमनुकूलतः ॥ ३६

विनेदुश्च यथाप्राणं हरयो जितकाशिनः ।

चकर्षुश्च पुनस्तत्र सप्राणानपि राक्षसान् ॥ ३७

स वीरशोभामभजन्महाकपिः

समेत्य रक्षांसि निहत्य मारुतिः ।

महासुरं भीमममित्रनाशनं

यथैव विष्णुर्वह्निं चमूमुखे ॥ ३८

अपूजयन्देवगणास्तदा कपिं
 स्वयं च रामोऽतिबलश्च लक्ष्मणः ।
 तथैव सुग्रीवमुखाः प्लवङ्गमा
 विभीषणश्चैव महाबलस्तथा ॥

इति षट्पञ्चाशः सर्गः ॥



सप्तपञ्चाशः सर्गः ॥

अकम्पनवधं श्रुत्वा क्रुद्धो वै राक्षसेश्वरः ।
 किञ्चिद्दीनमुखश्चापि सचिवांस्तानुदैक्षत ॥

स तु ध्यात्वा मुहूर्तं तु मन्त्रिभिः संविचार्य च ।
 ततस्तु रावणः पूर्वं दिवसे राक्षसाधिपः ।
 पुरीं परिययौ लङ्कां सर्वान्गुलमानवेक्षितुम् ॥

तां राक्षसगणैर्गुप्तां गुल्मैर्बहुमिरावृताम् ।
 ददर्श नगरीं लङ्कां पताकाध्वजमालिनीम् ॥

रुद्धां तु नगरीं दृष्ट्वा रावणो राक्षसेश्वरः ।
 उवाचामर्षितः काले प्रहस्तं युद्धकोविदम् ॥

पुरस्योपनिविष्टस्य सहसा पीडितस्य च ।

नान्यं युद्धात्प्रपश्यामि मोक्षं युद्धविशारद ॥ ५

अहं वा कुम्भकर्णो वा त्वं वा सेनापतिर्मम ।

इन्द्रजिह्वा निकुम्भो वा वह्नेयुर्भारमीदृशम् ॥ ६

स त्वं बलमतः शीघ्रमादाय परिगृह्य च ।

विजयायामिनिर्याहि यत्र सर्वे वनौकसः ॥ ७

निर्याणादेव ते नूनं चपला हरिवाहिनी ।

नर्दतां राक्षसेन्द्राणां श्रुत्वा नादं द्रविष्यति ॥ ८

चपला ह्यविनीताश्च चलचित्ताश्च वानराः ।

न सहिष्यन्ति ते नादं सिंहनादमिव द्विषाः ॥ ९

विद्रुते च बले तस्मिन् रामः सौमित्रिणा सह ।

अवशस्ते निरालम्बः प्रहस्त वशमेप्यति ॥ १०

आपत्संशयिता श्रेयो न तु निःसंशयीकृता ।

प्रतिलोमानुलोमं वा यद्वा नो मन्यसे हितम् ॥ ११

रावणेनैवमुक्तस्तु प्रहस्तो वाहिनीपतिः ।

राक्षसेन्द्रमुवाचेदमसुरेन्द्रमिवोशना ॥ १२

राजन्मन्त्रितपूर्वं नः कुशलैः सह मन्त्रिभिः ।

विवादश्चापि नो वृत्तः समवेक्ष्य परस्परम् ॥ १३

प्रदानेन तु सीतायाः श्रेयो व्यवसितं मया ।

अप्रदाने पुनर्युद्धं दृष्टमेतत्तथैव नः ॥ १४

सोऽहं दानैश्च मानैश्च सततं पूजितस्त्वया ।

सान्त्वैश्च विविधैः काले किं न कुर्यां प्रियं तव ॥ १५

न हि मे जीवितं रक्ष्यं पुत्रदारधनानि वा ।

त्वं पश्य मां जुह्वन्तं त्वदर्थं जीवितं युधि ॥ १६

एवमुक्त्वा तु भर्तारं रावणं बाहिनीपतिः ।

उवाचेदं बलाध्यक्षान् प्रहस्तः पुरतः स्थितान् ।

समानयत मे शीघ्रं राक्षसानां महद्वलम् ॥ १७

मह्नाणाशनिवेगेन हतानां तु रणाजिरे ।

अद्य तृप्यन्तु मांसादाः पक्षिणः काननौकसाम् ॥ १८

इत्युक्तास्ते प्रहस्तेन बलाध्यक्षाः कृतत्वरः ।

बलमुद्योजयामासुस्तस्मिन् राक्षसमन्दिरे ॥ १९

सा बभूव सुहूर्तेन तिग्मनानाविधायुधैः ।

लङ्का राक्षसवीरैस्तैर्गजैरिव समाकुला ॥ २०

- हुताशनं तर्पयतां ब्राह्मणांश्च नमस्यताम् ।
आज्यगन्धप्रतिवहः सुरभिर्मरुतो बवौ ॥ २१
- स्रजश्च विविधाकारा जगृहुस्त्वभिमन्त्रिताः ।
संग्रामसज्जाः संहृष्टा धारयन्राक्षसास्तदा ॥ २२
- सधनुष्काः कवचिनो वेगादाप्लुत्य राक्षसाः ।
रावणं प्रेक्ष्य राजानं प्रहस्तं पर्यवारयन् ॥ २३
- अथामन्व्य च राजानं भेरीमाहत्य भैरवाम् ।
आरुरोह रथं दिव्यं प्रहस्तः सज्जकल्पितम् ॥ २४
- हयैर्महाजवैर्युक्तं सम्यक्सूतं सुसंयतम् ।
महाजलदनिर्घोषं साक्षाच्चन्द्रार्कभास्वरम् ॥ २५
- उरगध्वजदुर्धर्षं सुबलं स्ववस्करम् ।
सुवर्णजालसंयुक्तं प्रहसन्तमिव श्रिया ॥ २६
- ततस्तं रथमास्थाय रावणार्पितशासनः ।
लङ्काया निर्ययौ तूर्णं बलेन महताऽऽवृतः ॥ २७
- ततो दुन्दुभिनिर्घोषः पर्जन्यनिनदोपमः ।
वादित्राणां च निनदः पूरयन्निव सागरम् ।
शुश्रुवे शङ्खशब्दश्च प्रयाते वाहिनीपतौ ॥ २८

निनदन्तः स्वरान्घोरान् राक्षसा जग्मुरग्रतः ।

भीमरूपा महाकायाः प्रहस्तस्य पुरःसराः ॥

२९

नरान्तकः कुम्भहनुर्महानादः समुन्नतः ।

प्रहस्तसचिवा ह्येते निर्ययुः परिवार्य तम् ॥

३०

व्यूढेनैव सुघोरेण पूर्वद्वारात्स निर्ययौ ।

गजयूथनिकाशेन बलेन महता वृतः ॥

३१

सागरप्रतिमौघेन वृतस्तेन बलेन सः ।

प्रहस्तो निर्ययौ तूर्णं कालान्तकयमोपमः ॥

३२

तस्य निर्याणघोषेण राक्षसानां च नर्दताम् ।

लङ्कायां सर्वभूतानि विनेदुर्विकृतैः स्वरैः ॥

३३

व्यभ्रमाकाशमाविश्य मांसशोणितभोजनाः ।

मण्डलान्यपसव्यानि खगाश्चकू रथं प्रति ॥

३४

वमन्त्यः पावकज्वालाः शिवा घोरा ववाशिरे ।

अन्तरिक्षात्पपातोलका वायुश्च परुषो ववौ ॥

३५

अन्योन्यमभिसंरब्धा ग्रहाश्च न चकाशिरे ।

मेघाश्च खरनिर्घोषा रथस्योपरि रक्षसः ।

ववर्षू रुधिरं चास्य सिषिचुश्च पुरःसरान् ॥

३६

केतुमूर्धनि गृध्रोऽस्य निलीनो दक्षिणामुखः ।

तुदन्नुभयतः पार्श्वे संग्रामहरत्प्रभाम् ॥ ३७

सारथेर्बहुशश्वास्य संग्राममवगाहतः ।

प्रतोदो न्यपतद्धस्तात्सूतस्य हयसादिनः ॥ ३८

निर्याणश्रीश्च याऽस्यासीद्भास्वरा च सुदुर्लभा ।

सा ननाश मुहूर्तेन समे च स्खलिता हयाः ॥ ३९

प्रहस्तं त्वभिनिर्यान्तं प्रख्यातबलपौरुषम् ।

युधि नानाप्रहरणा कपिसेनाऽभ्यवर्तत ॥ ४०

अथ घोषः सुतुमुलो हरीणां समजायत ।

वृक्षानारुजतां चैव गुर्वीर्षे गृह्णतां शिलाः ॥ ४१

नदतां राक्षसानां च वानराणां च गर्जताम् ।

उभे प्रमुदिते सैन्ये रक्षोगणवनौकसाम् ॥ ४२

वेगितानां समर्थानामन्योन्यवधकाङ्क्षिणाम् ।

परस्परं चाह्वयतां निनादः श्रूयते महान् ॥ ४३

ततः प्रहस्तः कपिराजवाहिनी-

मभिप्रतस्थे विजयाय दुर्मतिः ।

विवृद्धवेगां च विवेश तां चमूं
यथा मुमूर्षुः शलभो विभावसुम् ॥

४४

इति सप्तपञ्चाशः सर्गः ॥



अष्टपञ्चाशः सर्गः ॥



ततः प्रहस्तं निर्यान्तं दृष्ट्वा भीमपराक्रमम् ।

उवाच सस्मितं रामो विभीषणमरिन्दमः ॥

१

क एष सुमहाकायो बलेन महता वृतः ।

आचक्ष्व मे महाबाहो वीर्यवन्तं निशाचरम् ॥

२

राघवस्य वचः श्रुत्वा प्रत्युवाच विभीषणः ।

एष सेनापतिस्तस्य प्रहस्तो नाम राक्षसः ॥

३

लङ्कायां राक्षसेन्द्रस्य त्रिभागबलसंवृतः ।

वीर्यवानस्त्रविच्छूरः प्रख्यातश्च पराक्रमे ॥

४

ततः प्रहस्तं निर्यान्तं भीमं भीमपराक्रमम् ।

गर्जन्तं सुमहाकायं राक्षसैरभिसंवृतम् ॥

५

ददर्श महती सेना वानराणां बलीयसाम् ।

अतिसञ्जातरोषाणां प्रहस्तमभिगर्जताम् ॥ ६

खड्गशक्त्यृष्टिबाणाश्च शूलानि मुसलानि च ।

गदाश्च परिघाः प्रासा विविधाश्च परश्वधाः ॥ ७

धनूंषि च विचित्राणि राक्षसानां जयैषिणाम् ।

प्रगृहीतान्यशोभन्त वानरानुपधावताम् ॥ ८

जगृहुः पादपांश्चापि पुष्पितान् वानरर्षभाः ।

शिलाश्च विपुला दीर्घा योद्धुकामाः प्लवङ्गमाः ॥ ९

तेषामन्योन्यमासाद्य संग्रामः सुमहानभूत् ।

बहूनामश्मवृष्टिं च शरवृष्टिं च वर्षताम् ॥ १०

बहवो राक्षसा युद्धे बहून् वानरयूथपान् ।

वानरा राक्षसाश्चापि निजघ्नुर्बहवो बहून् ॥ ११

शूलैः प्रमथिताः केचित् केचिच्च परमायुधैः ।

परिघैराहताः केचित् केचिच्छिन्नाः परश्वधैः ॥ १२

निरुच्छासाः पुनः केचित् पतिता धरणीतले ।

विभिन्नहृदयाः केचिदिपुमन्धानसादिताः ॥ १३

केचिद्विधा कृताः खड्गैः स्फुरन्तः पतिता मुवि ।

वानरा राक्षसैः शूलैः पार्श्वतश्च विदारिताः ॥ १४

वानरैश्चापि संकुद्धैः राक्षसौघाः समन्ततः ।

पादपैर्गिरिशृङ्गैश्च संपिष्टा वसुधातले ॥ १५

वज्रस्पर्शतलैर्हस्तैर्मुष्टिभिश्च हता भृशम् ।

वेमुः शोणितमास्येभ्यो विशीर्णदशनेक्षणाः ॥ १६

आर्तस्वनं च स्वनतां सिंहनादं च नर्दताम् ।

बभूव तुमुलः शब्दो हरीणां रक्षसां युधि ॥ १७

वानरा राक्षसाः क्रद्धा वीरमार्गमनुव्रताः ।

विवृत्तनयनाः क्रूराश्चक्रुः कर्माण्यभीतवत् ॥ १८

नरान्तकः कुम्भहनुर्महानादः समुन्नतः ।

एते प्रहस्तसचिवाः सर्वे जघ्नुर्वनौकसः ॥ १९

तेषामापततां शीघ्रं निघ्नतां चापि वानरान् ।

द्विविदो गिरिशृङ्गेण जघानैकं नरान्तकम् ॥ २०

दुर्मुखः पुनरुत्पात्य कपिः स विपुलद्रुमम् ।

राक्षसं क्षिप्रहस्तस्तु समुन्नतमपोथयत् ॥ २१

- जाम्बवांस्तु सुसंकुद्धः प्रगृह्य महतीं शिलाम् ।
पातयामास तेजस्वी महानादस्य वक्षसि ॥ २२
- अथ कुम्भहनुस्तत्र तारेणासाद्य वीर्यवान् ।
वृक्षेणाभिहतो मूर्ध्नि प्राणान् सन्त्याजयद्रणे ॥ २३
- अमृष्यमाणस्तत्कर्म प्रहस्तो रथमास्थितः ।
चकार कदनं घोरं धनुष्पाणिर्वनौकसाम् ॥ २४
- आवर्त इव सञ्जज्ञे उभयोः सेनयोस्तदा ।
क्षुभितस्याप्रमेयस्य सागरस्येव निःस्वनः ॥ २५
- महता हि शरौघेण प्रहस्तो युद्धकोविदः ।
अर्दयामास संक्रुद्धो वानरान्परमाहवे ॥ २६
- वानराणां शरीरैश्च राक्षसानां च मेदिनी ।
बभूवातिचिता घोरा पतितैरिव पर्वतैः ॥ २७
- सा मही रुधिरौघेण प्रच्छन्ना संप्रकाशते ।
संछन्ना माधवे मासि पलाशैरिव पुष्पितैः ॥ २८
- हतवीरौघवप्रां तु भग्नायुधमहाद्रुमाम् ।
शोणितौघमहातोयां यमसागरगामिनीम् ॥ २९

यकृत्प्लीहमहापङ्कां विनिकीर्णान्त्रशैवलाम् ।

भिन्नकायशिरोमीनामङ्गावयवशाद्वलाम् ॥ ३०

गृध्रहंसगणाकीर्णां कङ्कसारससेविताम् ।

मेदःफेनसमाकीर्णामार्तस्तनितनिःस्वनाम् ॥ ३१

तां कापुरुषदुस्तारां युद्धभूमिमयीं नदीम् ।

नदीमिव घनापाये हंससारससेविताम् ॥ ३२

राक्षसाः कपिमुख्याश्च तेरुस्तां दुस्तारां नदीम् ।

यथा पद्मरजोध्वस्तां नलिनीं गजयूथपाः ॥ ३३

ततः सृजन्तं बाणौघान् प्रहस्तं स्यन्दने स्थितम् ।

ददर्श तरसा नीलो विनिघ्नन्तं प्लवङ्गमान् ॥ ३४

उद्धूत इव वायुः खे महदभ्रबलं बलात् ।

समीक्ष्याभिद्रुतं युद्धे प्रहस्तो वाहिनीपतिः ॥ ३५

रथेनादित्यवर्णेन नीलमेवाभिदुद्रुवे ।

स धनुर्धन्विनां श्रेष्ठो विकृप्य परमाहवे ॥ ३६

नीलाय विसृजद्बाणान् प्रहस्तो वाहिनीपतिः ।

ते प्राप्य विशिखा नीलं विनिर्भिद्य समाहिताः ॥ ३७

महीं जग्मुर्महावेगा रुषिता इव पन्नगाः ।
नीलः शरैरभिहतो निशितैर्ज्वलनोपमैः ॥ ३८

स तं परमदुर्धर्षमापतन्तं महाकपिः ।
प्रहस्तं ताडयामास वृक्षमुत्पात्य वीर्यवान् ॥ ३९

स तेनाभिहतः क्रुद्धो वदन् राक्षसपुङ्गवः ।
ववर्ष शरवर्षाणि प्लवङ्गानां चमूपतौ ॥ ४०

तस्य बाणगणान्घोरान् राक्षसस्य महाबलः ।
अपारयन्वारयितुं प्रत्यगृह्णन्निमीलितः ॥ ४१

यथैव गोवृषो वर्षं शारदं शीघ्रमागतम् ।
एवमेव प्रहस्तस्य शरवर्षं दुरासदम् ॥
निमीलिताक्षः शिरसा नीलः सेहे सुदारुणम् ॥ ४२

रोषितः शरवर्षेण सालेन महता महान् ।
प्रजघान हयान्नीलः प्रहस्तस्य मनोजवान् ॥ ४३

ततः स चापमुद्गृह्य प्रहस्तस्य महाबलः ।
बभञ्ज तरसा नीलो ननाद च पुनः पुनः ॥ ४४

विधनुस्तु कृतस्तेन प्रहस्तो बभूविनीपतिः ।
प्रगृह्य मुसलं घोरं स्यन्दनादवपुःप्लुवे ॥ ४५

तावुभौ वाहिनीमुख्यौ जातवैरौ तरस्विनौ ।

स्थितौ क्षतजदिग्धाङ्गौ प्रभिन्नाविव कुञ्जरौ ॥

४६

उल्लिखन्तौ सुतीक्ष्णाभिर्दंष्ट्राभिरितरेतरम् ।

सिंहशार्दूलसदृशौ सिंहशार्दूलचेष्टितौ ॥

४७

विक्रान्तविजयौ वीरौ समरेष्वनिवर्तिनौ ।

काङ्क्षमाणौ यशः प्राप्तुं वृत्रवासवयोः समौ ॥

४८

आजघान तदा नीलं ललाटे मुसलेन सः ।

प्रहस्तः परमायत्तस्तस्य सुस्त्राव शोणितम् ॥

४९

ततः शोणितदिग्धाङ्गः प्रगृह्य सुमहातरुम् ।

प्रहस्तस्योरसि क्रुद्धो विससर्ज महाकपिः ॥

५०

तमचिन्त्यप्रहारं स प्रगृह्य मुसलं महत् ।

अभिदुद्राव बलिनं बली नीलं प्लवङ्गमम् ॥

५१

तमुग्रवेगं संरब्धमापतन्तं महाकपिः ।

ततः संप्रेक्ष्य जग्राह महावेगो महाशिलाम् ॥

५२

तस्य युद्धामिकामस्य मृधे मुसलयोधिनः ।

प्रहस्तस्य शिलां नीलो मूर्ध्नि तूर्णमपातयत् ॥

५३

- सा तेन कपिमुख्येन विमुक्ता महती शिला ।
 बिभेद बहुधा घोरा प्रहस्तस्य शिरस्तदा ॥ ५४
- स गतासुर्गतश्रीको गतसत्त्वो गतेन्द्रियः ।
 पपात सहसा भूमौ छिन्नमूल इव द्रुमः ॥ ५५
- विभिन्नशिरसस्तस्य बहु सुस्त्राव शोणितम् ।
 शरीरादपि सुस्त्राव गिरेः प्रस्रवणं यथा ॥ ५६
- हते प्रहस्ते नीलेन तदकम्प्यं महद्वलम् ।
 रक्षसामप्रहृष्टानां लङ्कामभिजगाम ह ॥ ५७
- न शेकुः समरे स्थातुं निहते बाहिनीपतौ ।
 सेतुबन्धं समासाद्य विकीर्णं सलिलं यथा ॥ ५८
- हते तस्मिंश्चमूमुख्ये राक्षसास्ते निरुद्यमाः ।
 रक्षःपतिगृहं गत्वा ध्यानमूकत्वमास्थिताः ॥ ५९
- प्राप्ताः शोकार्णवं तीव्रं निःसंज्ञा इव तेऽभवन् ॥ ६०

ततस्तु नीलो विजयी महाबलः

प्रशस्यमानः स्वकृतेन कर्मणा ।

समेत्य रामेण सलक्ष्मणेन च

प्रहृष्टरूपस्तु बभूव यूथपः ॥ ६१

इति अष्टपञ्चाशः सर्गः ॥



एकोनषष्टितमः सर्गः ॥

तस्मिन् हते राक्षससैन्यपाले
प्लवङ्गमानामृषभेण युद्धे ।
भीमायुधं सागरतुल्यवेगं
विदुद्रुवे राक्षसराजसैन्यम् ॥

गत्वाऽथ रक्षोधिपतेः शशंसुः
सेनापतिं पावकसूनुशस्तम् ।
तच्चापि तेषां वचनं निशम्य
रक्षोधिपः क्रोधवशं जगाम ॥

संख्ये प्रहस्तं निहतं निशम्य
शोकार्दितः क्रोधपरीतचेताः ।
उवाच तान्नैर्ऋतयोधमुख्या-
निन्द्रो यथा चामरयोधमुख्यान् ॥

नावज्ञा रिपवे कार्या यैरिन्द्रबलसूदनः ।
सूदितः सैन्यपालो मे सानुयात्रः सकुञ्जरः ॥

सोऽहं रिपुविनाशाय विजयायाविचारयन् ।
स्वयमेव गमिष्यामि रणशीर्षं तदद्भुतम् ॥

अद्य तं वानरानीकं रामं च सहलक्ष्मणम् ।
निर्दहिष्यामि बाणौघैर्वनं दीप्तैरिवाग्निभिः ॥ ६

स एवमुक्त्वा ज्वलनप्रकाशं
रथं तुरङ्गोत्तमराजयुक्तम् ।
प्रकाशमानं वपुषा ज्वलन्तं
समारुरोहामरराजशत्रुः ॥ ७

स शङ्खभेरीपणवप्रणादैः
रास्फोटितक्ष्वेलितसिंहनादैः ।
पुण्यैः स्तवैश्चाप्यभिपूज्यमान-
स्तदा ययौ राक्षसराजमुख्यः ॥ ८

स शैलजीमूतनिकाशरूपै-
र्मासादनैः पावकदीप्तनेत्रैः ।
बभौ वृतो राक्षसयोधमुख्यो
भूतैर्वृतो रुद्र इवामरेशः ॥ ९

ततो नगर्याः सहसा महौजसा
निष्क्रम्य तद्वानरसैन्यमुग्रम् ।
महार्णवाभ्रस्तनितं ददर्श
समुद्यतं पादपशैलहस्तम् ॥ १०

तद्राक्षसानीकमतिप्रचण्ड-

मालोक्य रामो भुजगेन्द्रबाहुः ।

विभीषणं शस्त्रभृतां वरिष्ठ-

मुवाच सेनानुगतः पृथुश्रीः ॥

११

नानापताकाध्वजशस्त्रजुष्टं

प्रासासिशूलायुधशस्त्रजुष्टम् ।

सैन्यं नगेन्द्रोपमनागजुष्टं

कस्येदमक्षोभ्यमभीरुजुष्टम् ॥

१२

ततस्तु रामस्य निशम्य वाक्यं

विभीषणः शक्रसमानवीर्यः ।

शशंस रामस्य बलप्रवेकं

महात्मनां राक्षसपुङ्गवानाम् ॥

१३

योऽसौ गजस्कन्धगतो महात्मा

नवोदितार्कोपमताम्रवक्त्रः ।

प्रकम्पयन्नागशिरोऽभ्युपैति

ह्यकम्पनं त्वेवमवेहि राजन् ॥

१४

योऽसौ रथस्थो मृगराजकेतु-

र्धून्वन् धनुः शक्रधनुःप्रकाशम् ।

करीव भात्युग्रविवृतदंष्ट्रः

स इन्द्रजिन्नाम वरप्रधानः ॥

१५

यश्चैष विन्ध्यास्तमहेन्द्रकल्पो

धन्वी रथस्योऽतिरथोऽतिवीरः ।

विस्फारयंश्चापमतुल्यमानं

नाम्नाऽतिकायोऽतिविवृद्धकायः ॥

१६

योऽसौ नवार्कोदितताम्रचक्षु-

रारुह्य घण्टानिनदप्रणादम् ।

गजं खरं गर्जति वै महात्मा

महोदरो नाम स एष वीरः ॥

१७

योऽसौ हयं काञ्चनचित्रभाण्ड-

मारुह्य सन्ध्याभ्रगिरिप्रकाशम् ।

प्राप्तं समुद्यम्य मरीचिनद्धं

पिशाच एषोऽशनितुल्यवेगः ॥

१८

यश्चैष शूलं निशितं प्रगृह्य

विद्युत्प्रभं किङ्करवज्रवेगम् ।

वृषेन्द्रमास्थाय शशिप्रकाश-

मायाति योऽसौ त्रिशिरा यशस्वी ॥

१९

असौ च जीमूतनिकाशरूपः

कुन्भः पृथुव्यूढसुजातवक्षाः ।

समाहितः पन्नगराजकेतु-

र्विस्फारयन् भाति धनुर्विधून्वन् ॥

२०

यश्चैष जाम्बूनदवज्रजुष्टं

दीप्तं सधूमं परिधं प्रगृह्य ।

आयाति रक्षोबलकेतुभूत-

स्त्वसौ निकुम्भोऽद्भुतघोरकर्मा ॥

२१

यश्चैष चापासिशरौघजुष्टं

पताकिनं पावकदीप्तरूपम् ।

रथं समास्थाय विभात्युदग्रो

नरान्तकोऽसौ नगशृङ्गयोधी ॥

२२

यश्चैष नानाविधघोररूपै-

र्व्याघ्रोष्ट्रनागेन्द्रमृगाश्ववक्त्रैः ।

भूतैर्वृतो भाति विवृत्तनेत्रैः

सोऽसौ सुराणामपि दर्पहन्ता ॥

२३

यत्नैतदिन्द्रप्रतिमं विभाति

छलं सितं सूक्ष्मशलाकमग्न्यम् ।

अत्रैष रक्षोधिपतिर्महात्मा

भूतैर्वृतो रुद्र इवावभाति ॥

२४

असौ किरीटी चलकुण्डलास्यो

नगेन्द्रविन्ध्योपमभीमकायः ।

महेन्द्रवैवस्वतदर्पहन्ता

रक्षोधिपः सूर्य इवावभाति ॥

२५

प्रत्युवाच ततो रामो विभीषणमरिन्दमम् ।

अहो दीप्तो महातेजा रावणो राक्षसेश्वरः ॥

२६

आदित्य इव दुष्प्रेक्षो रश्मिभिर्भाति रावणः ।

सुव्यक्तं लक्षये ह्यस्य रूपं तेजःसमावृतम् ॥

२७

देवदानववीराणां वपुर्नैवंविधं भवेत् ।

यादृशं राक्षसेन्द्रस्य वपुरेतत्प्रकाशते ॥

२८

सर्वे पर्वतसङ्काशाः सर्वे पर्वतयोधिनः ।

सर्वे दीप्तायुधधरा योधाश्चास्य महौजसः ॥

२९

भाति राक्षसराजोऽसौ प्रदीप्तैर्भीमविक्रमैः ।

भूतैः परिवृतस्तीक्ष्णैर्देहवद्भिरिवान्तकः ॥

३०

दिष्ट्याऽयमद्य पापात्मा मम दृष्टिपथं गतः ।

अद्य क्रोधं विमोक्ष्यामि सीताहरणसंभवम् ॥ ३१

एवमुक्त्वा ततो रामो धनुरादाय वीर्यवान् ।

लक्ष्मणानुचरस्तस्थौ समुद्धृत्य शरोत्तमम् ॥ ३२

ततः स रक्षोधिपतिर्महात्मा

रक्षांसि तान्याह महाबलानि ।

द्वारेषु चर्यागृहगोपुरेषु

सुनिर्वृतास्तिष्ठत निर्विशङ्काः ॥ ३३

इहागतं मां सहितं भवद्भि-

र्वनौकसश्छिद्रमिदं विदित्वा ।

शून्यां पुरीं दुष्प्रसहं प्रमथ्य

प्रधर्षयेयुः सहसा समेताः ॥ ३४

विसर्जयित्वा सहितांस्ततस्तान्

गतेषु रक्षःसु यथानियोगम् ।

व्यदारयद्दानरसागरौघं

महाझषः पूर्णमिवार्णवौघम् ॥ ३५

तमापतन्तं सहसा समीक्ष्य

दीप्तेषुचापं युधि राक्षसेन्द्रम् ।

महत्समुत्पाद्य महीधराग्रं

दुद्राव रक्षोधिपतिं हरीशः ॥

३६

तच्छैलशृङ्गं बहुवृक्षसानुं

प्रगृह्य चिक्षेप निशाचराय ।

तमापतन्तं सहसा समीक्ष्य

बिभेद बाणैस्तपनीयपुङ्खैः ॥

३७

तस्मिन् प्रवृद्धोत्तमसानुवृक्षे

शृङ्गे विकीर्णे पतिते पृथिव्याम् ।

महाहिकल्पं शरमन्तकाभं

समाददे राक्षसलोकनाथः ॥

३८

स तं गृहीत्वाऽनिलतुल्यवेगं

सविस्फुलिङ्गज्वलनप्रकाशम् ।

बाणं महेन्द्राशनितुल्यवेगं

चिक्षेप सुग्रीववधाय रुष्टः ॥

३९

स सायको रावणबाहुमुक्तः

शकाशनिमुख्यवपुः शिताग्रः ।

सुग्रीवमासाद्य बिभेद वेगाद्-

गुहेरिता कौञ्चमिवोग्रशक्तिः ॥

४०

स सायकार्तो विपरीतचेताः

कूजन् पृथिव्यां निपपात वीरः ।

तं प्रेक्ष्य भूमौ पतितं विसंज्ञं

नेदुः प्रहृष्टा युधि यातुधानाः ॥

४१

ततो गवाक्षो गवयः सुदंष्ट्र-

स्तथर्षभो ज्योतिमुखो नलश्च ।

शैलान् समुद्यम्य विवृद्धकायाः

प्रदुद्रुवुस्तं प्रति राक्षसेन्द्रम् ॥

४२

तेषां प्रहारान् स चकार मोघान्

रक्षोधिपो बाणगणैः शिताग्रैः ।

तान्वानरेन्द्रानपि बाणजालै-

र्विभेद जाम्बूनदचित्रपुङ्खैः ॥

४३

ते वानरेन्द्रास्त्रिदशारिबाणै-

र्भिन्ना निपेतुर्भुवि भीमरूपाः ।

ततस्तु तद्वानरसैन्यमुग्रं

प्रच्छादयामास स बाणजालैः ॥

४४

ते वध्यमानाः पतिताग्र्यवीरा

नानद्यमाना भयशल्यविद्धाः ।

शाखामृगा रावणसायकार्ता

जग्मुः शरण्यं शरणं स्म रामम् ॥

४५

ततो महात्मा स धनुर्धनुष्मान्

आदाय रामः सहसा जगाम ।

तं लक्ष्मणः प्राञ्जलिरभ्युपेक्ष

उवाच वाक्यं परमार्थयुक्तम् ॥

४६

काममार्यः सुपर्याप्तो वधायास्य दुरात्मनः ।

विधमिष्याम्यहं नीचमनुजानीहि मां विभो ॥

४७

तमब्रवीन्महातेजा रामः सत्यपराक्रमः ।

गच्छ यत्परश्चापि भव लक्ष्मण संयुगे ॥

४८

रावणो हि महावीर्यो रणेऽद्भुतपराक्रमः ।

तैलोक्येनापि संकुद्धो दुष्प्रसह्यो न संशयः ॥

४९

तस्य छिद्राणि मार्गस्व स्वच्छिद्राणि च गोपय ।

चक्षुषा धनुषा यत्नाद्रक्षात्मानं समाहितः ॥

५०

राघवस्य वचः श्रुत्वा संपरिष्वज्य पूज्य च ।

अभिवाद्य ततो रामं ययौ सौमित्रिराहवम् ॥

५१

स रावणं वारणहस्तबाहु-

र्ददर्श दीप्तोद्यतभीमचापम् ।

प्रच्छादयन्तं शरवृष्टिजालै-

स्तान्वानरान् मित्रविकीर्णदेहान् ॥

५२

तमालोक्य महातेजा हनूमान्मारुतात्मजः ।

निवार्य शरजालानि प्रदुद्राव स रावणम् ॥

५३

रथं तस्य समासाद्य भुजमुद्यम्य दक्षिणम् ।

त्रासयन् रावणं धीमान् हनूमान्वाक्यमब्रवीत् ॥

५४

देवदानवगन्धर्वा यक्षाश्च सह राक्षसैः ।

अवश्यं तु त्वया भग्ना वानरेभ्यस्तु ते भयम् ॥

५५

एष मे दक्षिणो बाहुः पञ्चशाखः समुद्यतः ।

विधमिष्यति ते देहाद्भूतात्मानं चिरोषितम् ॥

५६

श्रुत्वा हनुमतो वाक्यं रावणो भीमविक्रमः ।

संरक्तनयनः क्रोधादिदं वचनमब्रवीत् ॥

५७

क्षिप्रं प्रहर निःशङ्कं स्थिरां कीर्तिमवाप्नुहि ।

ततस्त्वां ज्ञातविक्रान्तं नाशयिष्यामि वानर ॥

५८

रावणस्य वचः श्रुत्वा वायुसूनुर्वचोऽब्रवीत् ।

प्रहृतं हि मया पूर्वमक्षं स्मर सुतं तव ॥

५९

एवमुक्तो महातेजा रावणो राक्षसेश्वरः ।

आजघानानिलसुतं तलेनोरपि वीर्यवान् ॥

६०

स तलाभिहतस्तेन चचाल च मुहुर्मुहुः ।

स्थित्वा मुहूर्तं तेजस्वी स्थैर्यं कृत्वा महामतिः ॥

आजघानाभिसंकुद्धस्तलेनैवामरद्विषम् ॥

६१

ततस्तलेनाभिहतो वानरेण महात्मना ।

दशग्रीवः समाधूतो यथा भूमिचलेऽचलः ॥

६२

संग्रामे तं तथा दृष्ट्वा रावणं तलताडितम् ।

ऋषयो वानराः सिद्धा नेदुर्देवाः सहासुराः ॥

६३

अथाश्वास्य महातेजा रावणो वाक्यमब्रवीत् ।

साधु वानर वीर्येण श्लाघनीयोऽसि मे रिपुः ॥

६४

रावणेनैवमुक्तस्तु मारुतिर्वाक्यमब्रवीत् ॥

६५

धिगस्तु मम वीर्यं तु यस्त्वं जीवसि रावण ।

सकृत्तु प्रहरेदानीं दुर्बुद्धे किं विकथसे ॥

६६

ततस्त्वां मामिका मुष्टिर्नयिष्यति यमक्षयम् ।

ततो मारुतिवाक्येन क्रोधस्तस्य तदाऽज्ज्वलत् ॥ ६७

संरक्तनयनो यत्नान्मुष्टिमुद्यम्य दक्षिणम् ।

पातयामास वेगेन वानरोरसि वीर्यवान् ॥

हनूमान्वक्षसि व्यूढे सञ्चचाल हतः पुनः ॥ ६८

विह्वलं तु तदा दृष्ट्वा हनुमन्तं महाबलम् ।

रथेनातिरथः शीघ्रं नीलं प्रति सगम्यगात् ॥ ३९

राक्षसानामधिपतिर्दशग्रीवः प्रतापवान् ।

पन्नगप्रतिमैर्भीमैः परमर्मातिभेदिभिः ॥ ७०

शरैरादीपयामास नीलं हरिचमूपतिम् ॥ ७१

स शरौघसमायस्तो नीलः कपिचमूपतिः ।

करेणैकेन शैलाग्रं रक्षोऽधिपतयेऽसृजत् ॥ ७२

हनूमानपि तेजस्वी समाश्वस्तो महामनाः ।

विप्रेक्षमाणो युद्धेप्सुः सरोषमिदमब्रवीत् ॥ ७३

नीलेन सह संयुक्तं रावणं राक्षसेश्वरम् ।

अन्येन युध्यमानस्य न युक्तमभिधावनम् ॥ ७४

रावणोऽपि महातेजास्तच्छृङ्गं सप्तभिः शरैः ।
आजघान सुतीक्ष्णाग्रैस्तद्विकीर्णं पपात ह ॥ ७५

तद्विकीर्णं गिरेः शृङ्गं दृष्ट्वा हरिचमूपतिः ।
कालाग्निरिव जज्वाल क्रोधेन परवीरहा ॥ ७६

सोऽश्वकर्णान्धवान्सालांश्चूतांश्चापि सुपुष्पितान् ।
अन्यांश्च विविधान्वृक्षान् नीलश्चिक्षेप संयुगे ॥ ७७

स तान्वृक्षान्समासाद्य प्रतिचिच्छेद रावणः ।
अभ्यवर्षत्सुघोरेण शरवर्षेण पावकिम् ॥ ७८

अभिवृष्टः शरौघेण मेघेनेव महाचलः ।
ह्रस्वं कृत्वा तदा रूपं ध्वजाग्रे निपपात ह ॥ ७९

पावकात्मजमालोक्य ध्वजाग्रे समवस्थितम् ।
जज्वाल रावणः क्रोधात्ततो नीलो ननाद च ॥ ८०

ध्वजाग्रे धनुषश्चाग्रे किरीटाग्रे च तं हरिम् ।
लक्ष्मणोऽथ हनूमांश्च दृष्ट्वा रामश्च विस्मितः ॥ ८१

रावणोऽपि महातेजाः कपिलाघवविस्मितः ।
अस्त्रमाहारयामास दीप्तमाग्नेयमद्भुतम् ॥ ८२

ततस्ते चुक्रुशुर्हृष्टा लब्धलक्षाः प्लवङ्गमाः ।

नीललाघवसंभ्रान्तं दृष्ट्वा रावणमाहवे ॥

८३

वानराणां च नादेन संरब्धो रावणस्तदा ।

संभ्रमाविष्टहृदयो न किञ्चित् प्रत्यपद्यत ॥

८४

आग्नेयेनाथ संयुक्तं गृहीत्वा रावणः शरम् ।

ध्वजशीर्षस्थितं नीलमुदैक्षत निशाचरः ॥

ततोऽब्रवीन्महातेजा रावणो राक्षसेश्वरः ॥

८५

कपे लाघवयुक्तोऽसि मायया परयाऽनया ।

जीवितं खलु रक्षस्व यदि शक्नोपि वानर ॥

८६

तानितान्यात्मरूपाणि सृजसित्वमनेकशः ॥

८७

तथाऽपि त्वां मया मुक्तः सायकोऽस्त्रप्रयोजितः ।

जीवितं परिरक्षन्तं जीविताद्भ्रंशयिष्यति ॥

८८

एवमुक्त्वा महाबाहू रावणो राक्षसेश्वरः ।

सन्धाय बाणमस्त्रेण चमूपतिमताडयत् ॥

८९

सोऽस्त्रयुक्तेन बाणेन नीलो वक्षसि ताडितः ।

निर्दह्यमानः सहसा निपपात महीतले ॥

९०

पितृमाहात्म्यसंयोगादात्मनश्चापि तेजसा ।
जानुभ्यामपतद्भूमौ न च प्राणैर्ययुज्यत ॥ ९१

विसंज्ञं वानरं दृष्ट्वा दशग्रीवो रणोत्सुकः ।
रथेनाम्बुदनादेन सौमित्रिमभिद्रुवे ॥ ९२

आसाद्य रणमध्ये तु वारयित्वा स्थितो ज्वलन् ।
धनुर्विष्फारयामास कम्पयन्निव मेदिनीम् ॥ ९३

तमाह सौमित्रिरदीनसत्त्वो
विष्फारयन्तं धनुरप्रमेयम् ।
अन्वेहि मामेव निशाचरेन्द्र
न वानरांस्त्वं प्रति योद्धुमर्हसि ॥ ९४

स तस्य वाक्यं प्रतिपूर्णघोषं
ज्याशब्दमुग्रं च निशम्य राजा ।
आसाद्य सौमित्रिमवस्थितं तं
कोपान्वितो वाक्यमुवाच रक्षः ॥ ९५

दिष्ट्याऽसि मे राघव दृष्टिमार्गं
प्राप्तोऽन्तगामी विपरीतबुद्धिः ।
अस्मिन् क्षणे यास्यसि मृत्युदेशं
संसाद्यमानो मम बाणजालैः ॥ ९६

तमाह सौमित्रिस्सयानो
 गर्जन्तमुद्वृत्तसिताग्रदंष्ट्रम् ।
 राजन्न गर्जन्ति महाप्रभावा
 विकत्थसे पापकृतां वरिष्ठ ॥

९७

जानामि वीर्यं तव राक्षसेन्द्र
 बलं प्रतापं च पराक्रमं च ।
 अवस्थितोऽहं शरचापपाणि-
 रागच्छ किं मोघविकत्थनेन ॥

९८

स एवमुक्तः कुपितः ससर्ज
 रक्षोधिपः सप्त शरान्मुपुङ्खान् ।
 तान् लक्ष्मणः काञ्चनचित्रपुङ्खै-
 शिच्छच्छेद बाणैर्निशिताग्रधारैः ॥

९९

तान्प्रेक्षमाणः सहसा निकृत्तान्
 निकृत्तभोगानिव पन्नगेन्द्रान् ।
 लङ्केश्वरः क्रोधवशं जगाम
 ससर्ज चान्यान्निशितान्पृषत्कान् ॥

१००

स बाणवर्षं तु ववर्ष तीव्रं
 रामानुजः कार्मुकसंप्रयुक्तम् ।

क्षुरार्धचन्द्रोत्तमकीर्णमल्लैः

शरांश्च चिच्छेद न चुक्षुमे च ॥ १०१

स बाणजालान्यथ तानि तानि

मोघानि पश्यंस्त्रिदशाधिराजः ।

विसिष्मये लक्ष्मणलाघवेन

पुनश्च बाणान्निशितान्मुमोच ॥ १०२

स लक्ष्मणश्चाशु शरान् शिताग्रान्

महेन्द्रवज्राशनितुल्यवेगान् ।

सन्धाय चापे ज्वलनप्रकाशान्

ससर्ज रक्षोधिपतेर्वधाय ॥ १०३

स तान्प्रचिच्छेद हि राक्षसेन्द्र-

श्छित्त्वा च ताल्लक्ष्मणमाजघान ।

शरेण कालाग्निसमप्रभेण

स्वयम्भुदत्तेन ललाटदेशे ॥ १०४

स लक्ष्मणो रावणसायकार्त-

श्चचाल चापं शिथिलं प्रगृह्य ।

पुनश्च संज्ञां प्रतिलभ्य कृच्छ्रा-

च्छिच्छेद चापं त्रिदशेन्द्रशत्रोः ॥ १०५

निकृत्तचापं त्रिभिराजधान

बाणैस्तदा दाशरथिः शिताग्रैः ।

स सायकार्तो धिचचाल राजा

कृच्छ्राच्च संज्ञां पुनराससाद ॥

१०४

स कृत्तचापः शरताडितश्च

मेदार्द्रगात्रो रुधिरावसिक्तः ।

जग्राह शक्तिं समुदग्रशक्तिः

स्वयम्भुदत्तां युधि देवशत्रुः ॥

१०५

स तां विधूमानलसन्निकाशां

वित्रासिनीं वानरवाहिनीनाम् ।

चिक्षेप शक्तिं तरसा ज्वलन्तीं

सौमित्रये राक्षसराष्ट्रनाथः ॥

१०६

तामापतन्तीं भरतानुजोऽस्रै-

र्जधान बाणैश्च हुताग्निकल्पैः ।

तथाऽपि सा तस्य विवेश शक्ति-

र्भुजान्तरं दाशरथेर्विशालम् ॥

१०७

स शक्तिमान्शक्तिसमाहतः सन्

मुहुः प्रजज्वाल रघुप्रवीरः ।

तं विह्वलन्तं सहसाऽभ्युपेत्य

जग्राह राजा तरसा भुजाभ्याम् ॥ ११०

हिमवान्मन्दरो मेरुस्त्रैलोक्यं वा सहामरैः ।

शक्यं भुजाभ्यामुद्धर्तुं न संख्ये भरतानुजः ॥ १११

शक्या ब्राह्मणा हि सौमित्रिस्ताडितस्तु स्तनान्तरे ।

विष्णोरचिन्त्यं स्वं भागमात्मानं प्रत्यनुस्मरन् ॥ ११२

ततो दानवदर्पघ्नं सौमित्रिं देवकण्ठकः ।

तं पीडयित्वा बाहुभ्यां न प्रभुर्लङ्घनेऽभवत् ॥ ११३

अथैनं वैष्णवं भागं मानुषं देहमास्थितम् ।

विसंज्ञं लक्ष्मणं दृष्ट्वा रावणं विस्मितोऽभवत् ॥ ११४

अथ वायुसुतः क्रुद्धो रावणं समभिद्रवत् ।

आजघानोरसि क्रुद्धो वज्रकल्पेन मुष्टिना ॥ ११५

तेन मुष्टिप्रहारेण रावणो राक्षसेश्वरः ।

जानुभ्यामपतद्भूमौ चचाल च पपात च ॥

आस्यैः सनेत्रश्रवणैर्विवाम रुधिरं बहु ॥ ११६

विघूर्णमानो निश्चेष्टो रथोपस्थ उपाविशत् ।

विसंज्ञो मूर्च्छितश्चासीन्न च स्थानं समालभत् ॥ ११७

विसंज्ञं रावणं दृष्ट्वा समरे भीमविक्रमम् ।

ऋषयो वानराः सर्वे नेदुर्देवाः सवासवाः ॥ ११

हनूमानपि तेजस्वी लक्ष्मणं रावणार्दितम् ।

अनयद्राघवाभ्याशं बाहुभ्यां परिगृह्य तम् ॥ ११

वायुसूनोः सुहृत्वेन भक्त्या परमया च सः ।

शत्रूणामप्रकम्प्योऽपि लघुत्वमगमत्कपेः ॥ १२

तं समुत्सृज्य सा शक्तिः सौमित्रिं युधि दुर्जयम् ।

रावणस्य रथे तस्मिन् स्थानं पुनरुपागता ॥ १२

आश्वस्तश्च विशल्यश्च लक्ष्मणः शत्रुसूदनः ।

विष्णोर्भागममीमांस्यमात्मानं प्रत्यनुस्मरन् ॥ १२

रावणोऽपि महातेजाः प्राप्य संज्ञां महाहवे ।

आददे निशितान्बाणाञ्जग्राह च महद्धनुः ॥ १२

न्यहनत्स च संक्रुद्धो वानराणां महाचमूम् ।

ते हन्यमाना रौद्रेण क्षिप्रहस्तेन रक्षसा ॥ १२

राघवं शरणं जग्मुः प्रजापतिमिव प्रजाः ।

राघवोऽपि रणे दृष्ट्वा कर्म रौद्रस्य रक्षसः ॥ १२

धनुः सज्यमुपादाय चामीकरविभूषितम् ।

रथस्थं समरे शूरमभिदुद्राव रावणम् ॥ १२६

निपातितमहावीरां द्रवन्तीं वानरीं चमूम् ।

राघवस्तु रणे दृष्ट्वा रावणं समभिद्रवत् ॥ १२७

अथैनमुपसङ्गम्य हनूमान्वाक्यमब्रवीत् ।

मम पृष्ठं समारुह्य राक्षसं शास्तुमर्हसि ॥ १२८

विष्णुर्यथा गरुत्मन्तमारुह्यामरवैरिणः ।

तच्छ्रुत्वा राघवो वाक्यं वायुपुत्रेण भाषितम् ॥ १२९

आरोहत्सहसा शूरो बलवन्तं महाकंपिम् ।

रथस्थं रावणं संख्ये ददर्श मनुजाधिपः ॥ १३०

तमालोक्य महातेजाः प्रदुद्राव स राघवः ।

वैरोचनिमिव क्रुद्धो विष्णुरभ्युद्यतायुधः ॥ १३१

ज्याशब्दमकरोत्तीव्रं वज्रनिष्पेषनिस्वनम् ।

गिरा गम्भीरया रामो राक्षसेन्द्रमुवाच ह ॥ १३२

तिष्ठ तिष्ठ मम त्वं हि कृत्वा विप्रियमीदृशम् ।

क नु राक्षसशार्दूल गतो मोक्षमवाप्स्यसि ॥ १३३

यदीन्द्रवैवस्वतभास्करान् वा

स्वयम्भुवैश्वानरशङ्करान् वा ।

गमिष्यसि त्वं दशधा दिशोऽथ

तथाऽपि मे नाद्य गतो विमोक्ष्यसे ॥ १३४

यश्चैव शक्त्याऽभिहतस्त्वयाऽद्य

इच्छन्विषादं सहसाऽभ्युपेतः ।

स एव रक्षोगणराजमृत्युः

सपुत्रदारस्य तवाद्य युद्धे ॥ १३५

एतेन चात्यद्भुतदर्शनानि

शरैर्जनस्थानकृतालयानि ।

चतुर्दशान्यात्तवरायुधानि

रक्षःसहस्राणि निष्पूदितानि ॥ १३६

राघवस्य वचः श्रुत्वा राक्षसेन्द्रो महाकपिम् ।

वायुपुत्रं महावीर्यं वहन्तं राघवं रणे ॥ १३७

आजघान शरैस्तीक्ष्णैः कालानलशिखोपमैः ॥ १३८

राक्षसेनाहवे तस्य ताडितस्यापि सायकैः ।

स्वभावतेजोयुक्तस्य भूयस्तेजो व्यवर्धत ॥ १३९

ततो रामो महातेजा रावणेन कृतव्रणम् ।
दृष्ट्वा प्लवगशार्दूलं कोपस्य वशमेयिवान् ॥

१४०

तस्यापि संक्रम्य रथं सचक्रं

साश्वध्वजच्छत्रमहापताकम् ।

ससारथि साशनिशूलखड्गं

रामः प्रचिच्छेद शरैः सुपुङ्खैः ॥

१४१

अथेन्द्रशत्रुं तरसा जघान

बाणेन वज्राशनिसन्निभेन ।

भुजान्तरे व्यूढसुजातरूपे

वज्रेण मेरुं भगवानिवेन्द्रः ॥

१४२

यो वज्रपाताशनिसन्निपाता-

न्न चुक्षुभे नापि चचाल राजा ।

स रामबाणाभिहतो भृशार्त-

श्चचाल चापं च मुमोच वीरः ॥

१४३

तं विह्वलन्तं प्रसमीक्ष्य रामः

समाददे दीप्तमथार्धचन्द्रम् ।

तेनार्कवर्णं सहसा किरीटं

चिच्छेद रक्षोधिपतेर्महात्मा ॥

१४४

तं निर्विषाशीविषसन्निकाशं

शान्तार्चिषं सूर्यमिवाप्रकाशम् ।

गतश्रियं कृतकिरीटकूट-

मुवाच रामो युधि राक्षसेन्द्रम् ॥

१४५

कृतं त्वया कर्म महत्सुभीमं

हतप्रवीरश्च कृतस्त्वयाऽहम् ।

तस्मात्परिश्रान्त इव व्यवस्य-

न्न त्वां शरैर्मृत्युवशं नयामि ॥

१४६

गच्छानुजानामि रणार्दितस्त्वं

प्रविश्य रात्रिञ्चरराज लङ्काम् ।

आश्वास्य निर्याहि रथी च धन्वी

तदा बलं द्रक्ष्यसि मे रथस्थः ॥

१४७

स एवमुक्तो हतदर्पहर्षो

निकृत्तचापः स हताश्वसूतः ।

शरार्दितः कृतमहाकिरीटो

विवेश लङ्कां सहसा स राजा ॥

१४८

तस्मिन् प्रविष्टे रजनीचरेन्द्रे

महाबले दानवदेवशत्रौ ।

हरीन् विशल्यान् सह लक्ष्मणेन

चकार रामः परमाहवाग्रे ॥

१४९

तस्मिन् प्रभिन्ने त्रिदशेन्द्रशतौ

सुरासुरा भूतगणा दिशश्च ।

ससागराः सर्पिमहोरगाश्च

तथैव भूम्यम्बुचराश्च हृष्टाः ॥

१५०

इति एकोनषष्ठितमः सर्गः ॥



षष्ठितमः सर्गः ॥

स प्रविश्य पुर्वीं लङ्कां रामबाणभयार्दितः ।

भग्नदर्पस्तदा राजा बभूव व्यथितेन्द्रियः ॥

१

मातङ्ग इव सिंहेन गरुडेनेव पन्नगः ।

अभिभूतोऽभवद्राजा राघवेण महात्मना ॥

२

ब्रह्मदण्डप्रकाशानां विद्युत्सदृशवर्चसाम् ।

स्मरन् राघवबाणनां विव्यथे राक्षसेश्वरः ॥

३

स काञ्चनमयं दिव्यमाश्रित्य परमासनम् ।

विप्रेक्षमाणो रक्षांसि रावणो वाक्यमब्रवीत् ॥

४

सर्वं तत्सलु मे मोघं यत्तप्तं परमं तपः ।
यत्समानो महेन्द्रेण मानुषेणास्मि निर्जितः ॥ ५

इदं तद्ब्रह्मणो घोरं वाक्यं मामभ्युपस्थितम् ।
मानुषेभ्यो विजानीहि भयं त्वमिति तत्तथा ॥ ६

देवदानवगन्धर्वैर्यक्षराक्षसपन्नगैः ।
अवध्यत्वं मया प्राप्तं मानुषेभ्यो न याचितम् ॥ ७

विदितं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् ।
इक्ष्वाकुकुलनाथेन अनरण्येन यत्पुरा ॥ ८

उत्पत्स्यते हि मद्वंशे पुरुषो राक्षसाधम ।
यस्त्वां सपुत्रं सामात्यं सबलं साध्वसारथिम् ॥ ९

निहनिष्यति संग्रामे त्वां कुलाधम दुर्मते ।
शप्तोऽहं वेदवत्या च यदा सा धर्षिता पुरा ॥ १०

सेयं सीता महाभागा जाता जनकनन्दिनी ।
उमा नन्दीश्वरश्चापि रम्भा वरुणकन्यका ॥ ११

यथोक्तास्तपसा प्राप्तं न मिथ्या ऋषिभाषितम् ।
एतदेवाभ्युपागम्य यत्नं कर्तुमिहार्ह्य ॥ १२

- राक्षसाश्चापि तिष्ठन्तु चर्यागोपुरमूर्धसु ।
 स चाप्रतिमगम्भीरो देवदानवदर्पहा ।
 ब्रह्मशापाभिभूतस्तु कुम्भकर्णो विबोध्यताम् ॥ १३
- स पराजितमात्मानं प्रहस्तं च निषूदितम् ।
 ज्ञात्वा रक्षोबलं भीममादिदेश महाबलः ॥ १४
- द्वारेषु यत्नः क्रियतां प्राकारश्चाधिरूढताम् ॥ १५
- निद्रावशसमाविष्टः कुम्भकर्णो विबोध्यताम् ।
 सुखं स्वपिति निश्चिन्तः कालोपहतचेतनः ॥ १६
- नव षट् सप्त चाष्टौ च मासान् स्वपिति राक्षसः ।
 मन्त्रं कृत्वा प्रसुप्तोऽयमितस्तु नवमेऽहनि ॥
 तं तु बोधयत क्षिप्रं कुम्भकर्णं महाबलम् ॥ १७
- स तु संख्ये महाबाहुः ककुदः सर्वरक्षसाम् ।
 वानरान् राजपुत्रौ च क्षिप्रमेव बधिष्यति ॥ १८
- एष केतुः परः संख्ये मुख्यो वै सर्वरक्षसाम् ।
 कुम्भकर्णः सदा शेते मूढो ग्राम्यसुखे रतः ॥ १९
- रामेण हि निरस्तस्य संग्रामेऽस्मिन्सुदारुणे ।
 भविष्यति न मे शोकः कुम्भकर्णे विबोधिते ॥ २०

किं करिष्याम्यहं तेन शक्रतुल्यबलेन हि ।
ईदृशे व्यसने प्राप्ते यो न साहाय्यं कल्पते ॥ २१

ते तु तद्वचनं श्रुत्वा राक्षसेन्द्रस्य राक्षसाः ।
जग्मुः परमसंभ्रान्ताः कुम्भकर्णनिवेशनम् ॥ २२

ते रावणसमादिष्टा मांसशोणितभोजनाः ।
गन्धमारुयांस्तथा भक्ष्यानादाय सहसा ययुः ॥ २३

तां प्रविश्य महाद्वारां सर्वतो योजनायताम् ।
कुम्भकर्णगुहां रम्यां सर्वगन्धप्रवाहिनीम् ॥ २४

कुम्भकर्णस्य निःश्वासादवधूता महाबलाः ।
प्रतिष्ठमानाः कृच्छ्रेण यत्नात्प्रविविशुर्गुहाम् ॥ २५

तां प्रविश्य गुहां रम्यां शुभां काञ्चनकुट्टिमाम् ।
ददृशुर्नैर्ऋतव्याघ्रं शयानं भीमदर्शनम् ॥ २६

ते तु तं विकृतं सुप्तं विकीर्णमिव पर्वतम् ।
कुम्भकर्णं महानिद्रं सहिताः प्रत्यबोधयन् ॥ २७

ऊर्ध्वरोमाञ्चिततनुं श्वसन्तमिव पन्नगम् ।
त्रासयन्तं महाश्वसैः शयानं भीमदर्शनम् ॥ २८

भीमनासापुटं तं तु पातालविपुलाननम् ।
शयने न्यस्तसर्वाङ्गं मेदोरुधिरगन्धिनम् ॥ २९

ददृशुर्नैर्ऋतव्याघ्रं कुम्भकर्णं महाबलम् ।
काञ्चनाङ्गदनदूषाङ्गं किरीटिनमरिन्दमम् ॥ ३०

ततश्चकुर्महात्मानः कुम्भकर्णाग्रतस्तदा ।
मांसानां मेरुसङ्काशं राशिं परमतर्पणम् ॥ ३१

मृगाणां महिषाणां च वराहाणां च सञ्चयान् ।
चक्रुर्नैर्ऋतशार्दूला राशिमन्नस्य चाद्भुतम् ॥ ३२

ततः शोणितकुम्भांश्च मद्यानि विविधानि च ।
पुरस्तात्कुम्भकर्णस्य चक्रुस्त्रिदशशत्रवः ॥ ३३

लिलिपुश्च परार्धेन चन्दनेन परन्तपम् ।
दिव्यैराच्छादयामासुर्माल्यैर्गन्धैः सुगन्धिभिः ॥ ३४

धूपं सुगन्धं ससृजुस्तुष्टुवुश्च परन्तपम् ।
जलदा इव चोन्नेदुर्यातुधानास्ततस्ततः ॥ ३५

शङ्खानापूरयामासुः शशाङ्कसदृशप्रभान् ।
तुमुलं युगपच्चापि विनेदुश्चाप्यमर्षिताः ॥ ३६

नेदुरास्फोटयामासुश्चिक्षिपुस्ते निशाचराः ।

कुम्भकर्णविबोधार्थं चक्रुस्ते विपुलं स्वनम् ॥

३७

सशङ्खभेरीपणवप्रणाद-

मास्फोटितक्ष्वेलितसिंहनादम् ।

दिशो द्रवन्तं त्रिदिवं तिरन्तं

श्रुत्वा विहङ्गाः सहसा निपेतुः ॥

३८

यदा भृशं तैर्निनदैर्महात्मा

न कुम्भकर्णो बुबुधे प्रसुप्तः ।

ततो मुसुण्ठीर्मुसलानि सर्वे

रक्षोगणास्ते जगृहुर्गदाश्च ॥

३९

तं शैलशृङ्गैर्मुसलैर्गदाभि-

वृक्षैस्तलैर्मुद्गरमुष्टिभिश्च ।

सुखप्रसुप्तं भुवि कुम्भकर्णं

रक्षांस्युदग्राणि तदा निजघ्नुः ॥

४०

तस्य निश्वासवातेन कुम्भकर्णस्य रक्षसः ।

राक्षसा बलवन्तोऽपि स्थातुं नाशक्नुवन्पुरः ॥

४१

ततोऽस्य पुरतो गाढं राक्षसा भीमविक्रमाः ।

मृदङ्गपणवान्भेरीः शङ्खकुम्भगणास्तदा ॥

४२

- दशराक्षससाहस्रा युगपत्पर्यवादयन् ॥ ४३
- नीलाञ्जनचयाकारास्ते तु तं प्रत्यबोधयन् ।
अभिघ्नन्तो नदन्तश्च नैव संविविदे तु सः ॥ ४४
- यदा चैनं न शेकुस्ते प्रतिबोधयितुं तदा ।
ततो गुरुतरं यत्नं दारुणं समुपाक्रमन् ॥ ४५
- अश्वानुष्टान्स्वरान्नागाञ्जघ्नुर्दण्डकशाङ्कुशैः ।
भेरीशङ्खमृदङ्गांश्च सर्वप्राणैरवादयन् ॥ ४६
- निजघ्नुश्चास्य गात्राणि महाकाष्ठकटङ्करैः ।
मुद्गरैर्मुसलैश्चैव सर्वप्राणसमुद्यतैः ॥ ४७
- तेन शब्देन महता लङ्का समभिपूरिता ।
सपर्वतवना सर्वा सोऽपि नैव प्रबुध्यते ॥ ४८
- ततः सहस्रं भेरीणां युगपत्समहन्यत ।
मृष्टकाञ्चनकोणान्नामसक्तानां समन्ततः ॥ ४९
- एवमप्यतिनिद्रस्तु यदा नैव प्रबुध्यते ।
शापस्य वशमापन्नस्ततः क्रुद्धा निशाचराः ॥ ५०
- महाक्रोधसमाविष्टाः सर्वे भीमपराक्रमाः ।
तद्रक्षो बोधयिष्यन्तश्चक्रुरन्ये पराक्रमम् ॥ ५१

अन्ये भेरीः समाजघ्नुरन्ये चक्रुर्महास्वनम् ।

केशानन्ये प्रलुलुपुः कर्णावन्ये दशन्ति च ॥ ५२

उदकुम्भशतान्यन्ये समसिञ्चन्त कर्णयोः ।

न कुम्भकर्णः पस्पन्दे महानिद्रावशं गतः ॥ ५३

अन्ये च बलिनस्तस्य कूटमुद्गरपाणयः ।

मूर्ध्नि वक्षसि गात्रेषु पातयन्कूटमुद्गरान् ॥ ५४

रज्जुबन्धनबद्धाभिः शतघ्नीभिश्च सर्वतः ।

बध्यमानो महाकायो न प्राबुध्यत राक्षसः ॥ ५५

वारणानां सहस्रं च शरीरेऽस्य प्रघावितम् ।

कुम्भकर्णस्ततो बुद्धः स्पर्शं परमबुध्यत ॥ ५६

स पात्यमानैर्गिरिशृङ्गवृक्षै-

रचिन्तयंस्तान् विपुलान्प्रहारान् ।

निद्राक्षयात् क्षुद्रयपीडितश्च

विजृम्भमाणः सहस्रोत्पपात ॥ ५७

स नागभोगाचलशृङ्गकल्पौ

विक्षिप्य बाहू गिरिशृङ्गसारौ ।

विवृत्य बक्तं बडबामुखाभं

निशाचरोऽसौ विकृतं जजृम्भे ॥ ५८

तस्य जाजृम्भमाणस्य वक्त्रं पातालसन्निभम् ।
ददृशे मेरुशृङ्गाग्रे दिवाकर इवोदितः ॥ ५९

स जृम्भमाणोऽतिबलः प्रतिबुद्धो निशाचरः ।
निश्वासश्चास्य सञ्जज्ञे पर्वतादिव मारुतः ॥ ६०

रूपमुत्तिष्ठतस्तस्य कुम्भकर्णस्य तद्वभौ ।
तपान्ते सबलाकस्य मेघस्येव विवर्षतः ॥ ६१

तस्य दीप्ताग्निसदृशे विद्युत्सदृशवर्चसी ।
ददृशाते महानेत्रे दीप्ताविव महाग्रहौ ॥ ६२

ततस्त्वदर्शयन्सर्वान् भक्ष्यांश्च विविधान्बहून् ।
वराहान्महिषांश्चैव स बभक्ष महाबलः ॥ ६३

अदन्बुभुक्षितो मांसं शोणितं तृषितः पिबन् ।
मेदःकुम्भांश्च मद्यं च पपौ शक्ररिपुस्तदा ॥ ६४

ततस्तृप्त इति ज्ञात्वा समुत्पेतुर्निशाचराः ।
शिरोभिश्च प्रणम्यैनं सर्वतः पर्यवारयन् ॥ ६५

निद्राविशदनेत्रस्तु कलुषीकृतलोचनः ।
चारयन्सर्वतो दृष्टिं तान्ददर्श निशाचरान् ॥ ६६

स सर्वान्सान्त्वयामास नैर्ऋतान्नैर्ऋतर्षभः ।

बोधनाद्विस्मितश्चापि राक्षसानिदमब्रवीत् ॥ ६७

किमर्थमहमादृत्य भवद्भिः प्रतिबोधितः ।

कच्चित्सुकुशलं राज्ञो भयं वा नेह विद्यते ॥ ६८

अथवा ध्रुवमन्येभ्यो भयं परमुपस्थितम् ।

यदर्थमेवं त्वरितैर्भवद्भिः प्रतिबोधितः ॥ ६९

अद्य राक्षसराजस्य भयमुत्पाटयाम्यहम् ।

पातयिष्ये महेन्द्रं वा शातयिष्ये तथाऽनलम् ॥ ७०

न ह्यल्पकारणे सुप्तं बोधयिष्यति मां गुरुः ।

तदाख्यातार्थतत्वेन मत्प्रबोधनकारणम् ॥ ७१

एवं ब्रुवाणं संरब्धं कुम्भकर्णमरिन्दमम् ।

यूपाक्षः सचिवो राज्ञः कृताञ्जलिरुवाच ह ॥ ७२

न नो दैवकृतं किञ्चिद्भयमस्ति कदाचन ।

मानुषान्नो भयं राजंस्तुमुलं संप्रबाधते ॥ ७३

न दैत्यदानवेभ्यो वा भयमस्ति हि तादृशम् ।

यादृशं मानुषं राजन् भयमस्मानुपस्थितम् ॥ ७४

वानरैः पर्वताकारैर्लङ्घ्यं परिवारिता ।

सीताहरणसन्तप्ताद्रामान्नस्तुमुलं भयम् ॥ ७५

एकेन वानरेणेयं पूर्वं दग्धा महापुरी ।

कुमारो निहतश्चाक्षः सानुयात्रः सकुञ्जरः ॥ ७६

स्वयं रक्षोधिपश्चापि पौलस्त्यो देवकण्ठकः ।

मृतेति संयुगे मुक्तो रामेणादित्यतेजसा ॥ ७७

यन्न देवैः कृतो राजा नापि दैत्यैर्न दानवैः ।

कृतः स इह रामेण विमुक्तः प्राणसंशयात् ॥ ७८

स यूपाक्षवचः श्रुत्वा भ्रातुर्युधि पराजयम् ।

कुम्भकर्णो विवृत्ताक्षो यूपाक्षमिदमब्रवीत् ॥ ७९

सर्वमद्यैव यूपाक्ष हरिसैन्यं सलक्ष्मणम् ।

राघवं च रणे हत्वा पश्चाद्द्रक्ष्यामि रावणम् ॥ ८०

राक्षसांस्तर्पयिष्यामि हरीणां मांसशोणितैः ।

रामलक्ष्मणयोश्चापि स्वयं पास्यामि शोणितम् ॥ ८१

तत्तस्य वाक्यं ब्रुवतो निशम्य

सगर्वितं रोषविवृद्धदोषम् ।

महोदरो नैर्ऋतयोधमुख्यः

कृताञ्जलिर्वाक्यमिदं बभाषे ॥

८२

रावणस्य वचः श्रुत्वा गुणदोषौ विमृश्य च ।

पश्चादपि महाबाहो शत्रून् युधि विजेष्यसि ॥

८३

महोदरवचः श्रुत्वा राक्षसैः परिवारितः ।

कुम्भकर्णो महातेजाः संप्रतस्थे महाबलः ॥

८४

तं समुत्थाप्य भीमाक्षं भीमरूपपराक्रमम् ।

राक्षसास्त्वरिता जग्मुर्दशग्रीवनिवेशनम् ॥

८५

ततो गत्वा दशग्रीवमासीनं परमासने ।

ऊचुर्बद्धाञ्जलिपुटाः सर्व एव निशाचराः ॥

८६

प्रबुद्धः कुम्भकर्णोऽयं भ्राता ते राक्षसर्षभ ।

कथं तत्रैव निर्यातु द्रक्ष्यस्येनमिहागतम् ॥

८७

रावणस्त्वब्रवीद्दृष्टो राक्षसांस्तानुपस्थितान् ।

ष्टुमेनमिहेच्छामि यथान्यायं च पूज्यताम् ॥

८८

।थेत्युक्त्वा तु ते सर्वे पुनरागम्य राक्षसाः ।

कुम्भकर्णमिदं वाक्यमूचू रावणचोदिताः ॥

८९

द्रष्टुं त्वां काङ्क्षते राजा सर्वराक्षसपुङ्गवः ।
गमने क्रियतां बुद्धिर्भातरं संप्रहर्षय ॥

९०

कुम्भकर्णस्तु दुर्धर्षो भ्रातुराज्ञाय शासनम् ।
तथेत्युक्त्वा महाबाहुः शयनादुत्पपात ह ॥

९१

प्रक्षाल्य वदनं हृष्टः स्नातः परमभूषितः ।
पिपासुस्त्वरयामास पानं बलसमीरणम् ॥

९२

ततस्ते त्वरितास्तस्य राक्षसा रावणाज्ञया ।
मद्यकुम्भांश्च विविधान् क्षिप्रमेवोपहारयन् ॥

९३

पीत्वा घटसहस्रे द्वे गमेनायोपचक्रमे ।
ईषत्समुत्कटो मत्तस्तेजोबलसमन्वितः ॥

९४

कुम्भकर्णो ययौ हृष्टः कालान्तकयमोपमः ।
भ्रातुः स भवनं गच्छन् रक्षोबलसमन्वितः ।
कुम्भकर्णः पदन्यासैरकम्पयत मेदिनीम् ॥

९५

स राजमार्गं वपुषा प्रकाशयन्
सहस्ररश्मिर्धरणीमिवांशुभिः ।

जगाम तत्राञ्जलिमालया वृतः

शतक्रतुर्गेहमिव स्वयंभुवः ॥

९६

तं राजमार्गस्थममित्रघातिनं
 वनौकसस्ते सहसा बहिः स्थिताः ।
 दृष्ट्वाऽप्रमेयं गिरिशृङ्गकरूपं
 वितलसुस्ते हरियूथपालाः ॥

९७

केचिच्छरण्यं शरणं स्म रामं
 व्रजन्ति केचिद्यथिताः पतन्ति ।
 केचिद्दिशः स्म व्यथिताः प्रयान्ति
 केचिद्भयार्ता भुवि शेरते स्म ॥

९८

तमद्रिशृङ्गप्रतिमं किरीटिनं
 स्पृशन्तमादित्यमिवात्मतेजसा ।
 वनौकसः प्रेक्ष्य विवृद्धमदूभुतं
 भयार्दिता दुद्रुविरे ततस्ततः ॥

९९

इति षष्ठितमः सर्गः ॥



एकषष्ठितमः सर्गः ॥



ततो रामो महातेजा धनुरादाय वीर्यवान् ।
 किरीटिनं महाकायं कुम्भकर्णं ददर्श ह ॥

१

- तं दृष्ट्वा राक्षसश्रेष्ठं पर्वताकारदर्शनम् ।
क्रममाणमिवाकाशं पुरा नारायणं प्रभुम् ॥ २
- सतोयाम्बुदसङ्काशं काञ्चनाङ्गदभूषणम् ।
दृष्ट्वा पुनः प्रदुद्राव वानराणां महाचमूः ॥ ३
- विद्रुतां वाहिनीं दृष्ट्वा वर्धमानं च राक्षसम् ।
सविस्मयमिदं रामो विभीषणमुवाच ह ॥ ४
- कोऽसौ पर्वतसङ्काशः किरीटी हरिलोचनः ।
लङ्कायां दृश्यते वीर सविद्युदिव तोयदः ॥ ५
- पृथिव्याः केतुभूतोऽसौ महानेकोऽत्र दृश्यते ।
यं दृष्ट्वा वानराः सर्वे विद्रवन्ति ततस्ततः ॥ ६
- आचक्ष्व मे महान् कोऽसौ रक्षो वा यदि वाऽसुरः ।
न मयैवंविधं भूतं दृष्टपूर्वं कदाचन ॥ ७
- स पृष्ठो राजपुत्रेण रामेणाक्लिष्टकर्मणा ।
विभीषणो महाप्राज्ञः काकुत्स्थमिदमब्रवीत् ॥ ८
- येन वैवस्वतो युद्धे वासवश्च पराजितः ।
सैष विश्रवसः पुत्रः कुम्भकर्णः प्रतापवान् ॥
अस्य प्रमाणात्सदृशो राक्षसोऽन्यो न विद्यते ॥ ९

एतेन देवा युधि दानवाश्च

यक्षा भुजङ्गाः पिशिताशनाश्च ।

गन्धर्वविद्याधरकिन्नराश्च

सहस्रशो राघव संप्रभग्नाः ॥

१०

शूलपाणिं विरूपाक्षं कुम्भकर्णं महाबलम् ।

हन्तुं न शेकुस्त्रिदशाः कालोऽयमिति मोहिताः ॥ ११

प्रकृत्या ह्येष तेजस्वी कुम्भकर्णो महाबलः ।

अन्येषां राक्षसेन्द्राणां वरदानकृतं बलम् ॥ १२

एतेन जातमात्रेण क्षुधार्तेन महात्मना ।

भक्षितानि सहस्राणि सत्त्वानां सुबहून्यपि ॥ १३

तेषु संभक्ष्यमाणेषु प्रजा भयनिपीडिताः ।

यान्ति स्म शरणं शक्रं तमप्यर्थं न्यवेदयन् ॥ १४

स कुम्भकर्णं कुपितो महेन्द्रो

जघान वज्रेण शितेन वज्री ।

स शक्रवज्राभिहतो महात्मा

चचाल कोपाच्च भृशं ननाद ॥

१५

तस्य नानद्यमानस्य कुम्भकर्णस्य धीमतः ।

श्रुत्वा निनादं विव्रस्ता भूयो भूमिर्वितत्रसे ॥ १६

ततः कोपान्महेन्द्रस्य कुम्भकर्णो महाबलः ।
विकृष्यैरावताहन्तं जघानोरसि वासवम् ॥ १७

कुम्भकर्णप्रहारार्तो विजज्वाल स वासवः ॥ १८

ततो विषेदुः सहसा देवा ब्रह्मर्षिदानवाः ।
प्रजाभिः सह शक्रश्च ययौ स्थानं स्वयंभुवः ॥ १९

कुम्भकर्णस्य दौरात्म्यं शशंसुस्ते प्रजापतेः ।
प्रजानां भक्षणं चापि देवानां चापि धर्षणम् ॥
आश्रमध्वंसनं चापि परस्त्रीहरणं भृशम् ॥ २०

एवं प्रजा यदि त्वेष भक्षयिष्यति नित्यशः ।
अचिरेणैव कालेन शून्यो लोको भविष्यति ॥ २१

वासवस्य वचः श्रुत्वा सर्वलोकपितामहः ।
रक्षांस्यावाहयामास कुम्भकर्णं ददर्श ह ॥ २२

कुम्भकर्णं समीक्ष्यैव वितत्रास प्रजापतिः ।
दृष्ट्वा विश्वास्य चैवैनं स्वयंभूरिदमब्रवीत् ॥ २३

ध्रुवं लोकविनाशाय पौलस्त्येनासि निर्मितः ।
तस्मात्वमद्य प्रभृति मृतकल्पः शयिष्यसे ॥ २४

ब्रह्मशापाभिभूतोऽथ निपपाताग्रतः प्रभोः ।

ततः परमसंभ्रान्तो रावणो वाक्यमब्रवीत् ॥

२५

विवृद्धः काञ्चनो वृक्षः फलकाले निकृत्यते ।

न नसारं स्वकं न्याय्यं शप्तुमेवं प्रजापते ॥

२६

न मिथ्यावचनश्च त्वं स्वप्स्यत्येष न संशयः ।

कालस्तु क्रियतामस्य शयने जागरे तथा ॥

२७

रावणस्य वचः श्रुत्वा स्वयंभूरिदमब्रवीत् ।

शयिता ह्येष षण्मासानेकाहं जागरिष्यति ॥

२८

एकेनाह्ना त्वसौ वीरश्चरन् भूमिं बुभुक्षितः ।

व्यात्तास्यो भक्षयेल्लोकान् संक्रुद्ध इव पावकः ॥

२९

असौ व्यसनमापन्नः कुम्भकर्णमबोधयत् ।

त्वत्पराक्रमभीतश्च राजा संप्रति रावणः ॥

३०

स एष निर्गतो वीरः शिबिराद्धीमविक्रमः ।

वानरान्भृशसंक्रुद्धो भक्षयन्परिधावति ॥

३१

कुम्भकर्णं समीक्ष्यैव हरयोऽद्य प्रविद्रुताः ।

कथमेनं रणे क्रुद्धं वारयिष्यन्ति वानराः ॥

३२

उच्यन्तां वानराः सर्वे यन्त्रमेतत्समुच्छ्रितम् ।
इति विज्ञाय हरयो भविष्यन्तीह निर्भयाः ॥ ३३

विभीषणवचः श्रुत्वा हेतुमत्सुमुखोद्गतम् ।
उवाच राघवो वाक्यं नीलं सेनापतिं तदा ॥ ३४

गच्छ सैन्यानि सर्वाणि व्यूह्य तिष्ठस्व पावके ।
द्वाराण्यादाय लङ्कायाश्चर्याश्चाप्यथ संक्रमान् ॥ ३५

शैलशृङ्गाणि वृक्षांश्च शिलाश्चाप्युपसंहर ।
तिष्ठन्तु वानराः सर्वे सायुधाः शैलपाणयः ॥ ३६

राघवेण समादिष्टो नीलो हरिचमूपतिः ।
शशास वानरानीकं यथावत्कपिकुञ्जरः ॥ ३७

ततो गवाक्षः शरभो हनुमानङ्गदस्तदा ।
शैलशृङ्गाणि शैलाभा गृहीत्वा द्वारमभ्ययुः ॥ ३८

रामवाक्यमुपश्रुत्य हरयो जितकाशिनः ।
पादपैरर्दयन्वीरा वानराः परवाहिनीम् ॥ ३९

ततो हरीणां तदनीकमुग्रं
रराज शैलोद्यतदीप्तहस्तम् ।

गिरेः समीपानुगतं यथैव

महन्महाम्भोधरजालमुग्रम् ॥

४०

इति एकषष्ठितमः सर्गः ॥



द्विषष्ठितमः सर्गः ॥



स तु राक्षसशार्दूलो निद्रामदसमाकुलः ।

राजमार्गं श्रिया जुष्टं ययौ विपुलविक्रमः ॥

१

राक्षसानां सहस्रैश्च वृतः परमदुर्जयः ।

गृहेभ्यः पुष्पवर्षेण कीर्यमाणस्तदा ययौ ॥

२

स हेमजालविततं भानुभास्वरदर्शनम् ।

ददर्श विपुलं रम्यं राक्षसेन्द्रनिवेशनम् ॥

३

स तत्तदा सूर्य इवाभ्रजालं

प्रविश्य रक्षोधिपतेर्निवेशम् ।

ददर्श दूरेऽग्रजमासनस्थं

स्वयंभुवं शक्र इवासनस्थम् ॥

४

भ्रातुः स भवनं गच्छन् रक्षोगणसमन्वितम् ।

कुम्भकर्णः पदन्यासैरकम्पयत मेदिनीम् ॥

५

सोऽभिगम्य गृहं भ्रातुः कक्ष्यामभिविगाह्य च ।
ददर्शोद्विग्नमासीनं विमाने पुष्पके गुरुम् ॥ ६

अथ दृष्ट्वा दशग्रीवः कुम्भकर्णमुपस्थितम् ।
तूर्णमुत्थाय संहृष्टः सन्निकर्षमुपानयत् ॥ ७

अथासीनस्य पर्यङ्के कुम्भकर्णो महाबलः ।
भ्रातुर्ववन्दे चरणौ किं कृत्यमिति चाब्रवीत् ॥
उत्पत्य चैनं मुदितो रावणः परिष्वजे ॥ ८

स भ्राता संपरिष्वक्तो यथावच्चाभिनन्दितः ।
कुम्भकर्णः शुभं दिव्यं प्रतिपेदे वरासनम् ॥ ९

स तदासनमाश्रित्य कुम्भकर्णो महाबलः ।
संरक्तनयनः कोपाद्रावणं वाक्यमब्रवीत् ॥ १०

किमर्थमहमादृत्य त्वया राजन् विबोधितः ।
शंस कस्माद्भयं तेऽस्ति कोऽद्य प्रेतो भविष्यति ॥ ११

भ्रातरं रावणः क्रुद्धं कुम्भकर्णमवस्थितम् ।
ईषत्तु परिवृत्ताभ्यां नेत्राभ्यां वाक्यमब्रवीत् ॥ १२

अद्य ते सुमहान्कालः शयानस्य महाबल ।
सुखितस्त्वं न जानीषे मम रामकृतं भयम् ॥ १३

एष दाशरथी रामः सुग्रीवसहितो बली ।
समुद्रं सबलस्तीर्त्वा मूलं नः परिकृन्तति ॥ १४

हन्त पश्यस्व लङ्कायां वनान्युपवनानि च ।
सेतुना सुखमागम्य वानरैर्कार्णवीकृतम् ॥ १५

ये रक्षसां मुख्यतमा हतास्ते वानरैर्युधि ।
वानराणां क्षयं युद्धे न पश्यामि कदाचन ॥ १६

न चापि वानरा युद्धे जितपूर्वाः कदाचन ॥ १७

तदेतद्भयमुत्पन्नं त्रायस्वेमां महाबल ।
नाशय त्वमिमानद्य तदर्थं बोधितो भवान् ॥ १८

सर्वक्षपितकोशं च स त्वमभ्यवपद्य माम् ।
त्रायस्वेमां पुरीं लङ्कां बालवृद्धावशेषिताम् ॥ १९

भ्रातुरर्थे महाबाहो कुरु कर्म सुदुष्करम् ।
मयैवं नोक्तपूर्वो हि कश्चिद्भ्रातः परन्तप ॥

त्वय्यस्ति तु मम स्नेहः परा संभावना च मे ॥ २०

देवासुरेषु युद्धेषु बहुशो राक्षसर्षभ ।

त्वया देवाः प्रतिव्यूह्य निर्जिताश्चासुरा युधि ॥ २१

तदेतत्सर्वमातिष्ठ वीर्यं भीमपराक्रम ।

न हि ते सर्वभूतेषु दृश्यते सदृशो बली ॥ २२

कुरुष्व मे प्रियहितमेतदुत्तमं

यथाप्रियं प्रियरण बान्धवप्रिय ।

स्वतेजसा विधम सपलवाहिनीं

शरद्धनं पवन इवोद्यतो महान् ॥ २३

इति द्विषष्टितमः सर्गः ॥



त्रिषष्टितमः सर्गः ॥

तस्य राक्षसराजस्य निशम्य परिदेवितम् ।

कुम्भकर्णो बभाषेऽथ वचनं प्रजहास च ॥ १

दृष्टो दोषो हि योऽस्माभिः पुरा मन्त्रविनिर्णये ।

हितेष्वनभियुक्तेन सोऽयमासादितस्त्वया ॥ २

शीघ्रं खल्वभ्युपेतं त्वां फलं पापस्य कर्मणः ।

निरयेष्वेव पतनं यथा दुष्कृतकर्मणः ॥ ३

प्रथमं वै महाराज कृत्यमेतदचिन्तितम् ।

केवलं वीर्यदर्पेण नानुबन्धो विचारितः ॥ ४

यः पश्चात्पूर्वकार्याणि कुर्यादैश्वर्यमास्थितः ।

पूर्वं चोत्तरकार्याणि न स वेद नयानयौ ॥ ५

देशकालविहीनानि कर्माणि विपरीतवत् ।

क्रियमाणानि दुष्यन्ति हवींष्यप्रयतेष्विव ॥ ६

त्रयाणां पञ्चधा योगं कर्मणां यः प्रपश्यति ।

सचिवैः समयं कृत्वा स सभ्ये वर्तते पथि ॥ ७

यथागमं च यो राजा समयं विचिकीर्षति ।

बुध्यते सचिवान्बुद्ध्या सुहृदश्चानुपश्यति ॥ ८

धर्ममर्थं च कामं च सर्वान् वा रक्षसां पते ।

भजेत पुरुषः काले लीणि द्वन्द्वानि वा पुनः ॥ ९

त्रिषु चैतेषु यच्छ्रेष्ठं श्रुत्वा तन्नावबुध्यते ।

राजा वा राजमात्रो वा व्यर्थं तस्य बहुश्रुतम् ॥ १०

उपप्रदानं सान्त्वं वा भेदं काले च विक्रमम् ।

योगं च रक्षसां श्रेष्ठं तावुमौ च नयानयौ ॥ ११

काले धर्मार्थकामान् यः संमन्व्य सचिवैः सह ।

निषेवेतात्मवाँल्लोके न स व्यसनमाप्नुयात् ॥ १२

हितानुबन्धमालोच्य कार्याकार्यमिहात्मनः ।

राजा सहार्थतत्त्वज्ञैः सचिवैः स हि जीवति ॥ १३

अनभिज्ञाय शास्त्रार्थान् पुरुषाः पशुबुद्धयः ।

प्रागल्भ्याद्वक्तुमिच्छन्ति मन्त्रेष्वभ्यन्तरीकृताः ॥

अशास्त्रविदुषां तेषां न कार्यमहितं वचः ।

अर्थशास्त्रानभिज्ञानां विपुलां श्रियमिच्छताम् ॥ १५

अहितं च हिताकारं धाष्टर्याज्जल्पन्ति ये नराः ।

अवेक्ष्य मन्त्रबाह्यास्ते कर्तव्याः कृत्यदूषणाः ॥ १६

विनाशयन्तो भर्तारं सहिताः शत्रुभिर्बुधैः ।

विपरीतानि कृत्यानि कारयन्तीह मन्त्रिणः ॥ १७

तान्भर्ता मित्रसङ्काशानमित्रान्मन्त्रनिर्णये ।

व्यवहारेण जानीयात् सचिवानुपसंहितान् ॥ १८

चपलस्येह कृत्यानि सहसाऽनुप्रधावतः ।

छिद्रमन्ये प्रपद्यन्ते क्रौञ्चस्य खमिव द्विजाः ॥ १९

यो हि शत्रुमविज्ञाय नात्मानमभिरक्षति ।

अवाप्नोति हि सोऽनर्थान् स्थानाच्च व्यवरोप्यते ॥ २०

यदुक्तमिह ते पूर्वं क्रियतामनुजेन च ।

तदेव नो हितं कार्यं यदिच्छसि च तत्कुरु ॥ २१

तत्तु श्रुत्वा दशग्रीवः कुम्भकर्णस्य भाषितम् ।

भ्रुकुटिं चैव सञ्चक्रे क्रुद्धश्चैनमभाषत ॥ २२

मान्यो गुरुरिवाचार्यः किं मां त्वमनुशाससि ।

किमेवं वाक्छूमं कृत्वा काले युक्तं विधीयताम् ॥ २३

विभ्रमाचित्तमोहाद्वा बलवीर्याश्रयेण वा ।

नाभिपन्नमिदानीं यद्व्यर्थास्तस्य पुनः कथाः ॥ २४

अस्मिन्काले तु यद्युक्तं तदिदानीं विधीयताम् ।

गतं तु नानुशोचन्ति गतं तु गतमेव हि ॥

ममापनयजं दोषं विक्रमेण समीकुरु ॥ २५

यदि खल्वस्ति मे स्नेहो विक्रमं चावगच्छसि ।

यदि वा कार्यमेतत्ते हृदि कार्यतमं मतम् ॥ २६

स सुहृदो विपन्नार्थं दीनमभ्यवपद्यते ।

स बन्धुर्योपनीतेषु साहाय्यायोपकल्पते ॥ २७

तमथैवंब्रुवाणं तु वचनं धीरदारुणम् ।

रुष्टोऽयमिति विज्ञाय शनैः श्लक्ष्णमुवाच ह ॥ २८

अतीव हि समालक्ष्य भ्रातरं क्षुभितेन्द्रियम् ।
कुम्भकर्णः शनैर्वाक्यं बभाषे परिसान्त्वयन् ॥ २९

अलं राक्षसराजेन्द्र सन्तापमुपपद्य ते ।
रोषं च संपरित्यज्य स्वस्थो भवितुमर्हसि ॥ ३०

नैतन्मनसि कर्तव्यं मयि जीवति पार्थिव ।
तमहं नाशयिष्यामि यत्कृते परितप्यसे ॥ ३१

अवश्यं तु हितं वाच्यं सर्वावस्थं मया तव ।
बन्धुभावादभिहितं भ्रातृस्नेहाच्च पार्थिव ॥ ३२

सदृशं यत्तु कालेऽस्मिन् कर्तुं स्निग्धेन बन्धुना ।
शत्रूणां कदनं पश्य क्रियमाणं मया रणे ॥ ३३

अथ पश्य महाबाहो मया समरमूर्धनि ।
हते रामे सह भ्रात्रा द्रवन्तीं हरिवाहिनीम् ॥ ३४

अद्य रामस्य तद्दृष्ट्वा मयानीतं रणाच्छिरः ।
सुखी भव महाबाहो सीता भवतु दुःखिता ॥ ३५

अद्य रामस्य पश्यन्तु निधनं सुमहत्प्रियम् ।
लङ्कायां राक्षसाः सर्वे ये ते निहतबान्धवाः ॥ ३६

अद्य शोकपरीतानां स्वबन्धुवधकारणात् ।
शत्रोर्युधि विनाशेन करोम्यास्त्रप्रमार्जनम् ॥ ३७

अद्य पर्वतसङ्काशं ससूर्यमिव तोयदम् ।
विकीर्णं पश्य समरे सुग्रीवं प्लवगोत्तमम् ॥ ३८

कथं त्वं राक्षसैरेभिर्मया च परिरक्षितः ।
जिघांसुभिर्दाशरथिं वध्यसे त्वमिहानघ ॥ ३९

अद्य पूर्वं हते तेन मयि त्वां हन्ति राघवः ।
नाहमात्मनि सन्तापं गच्छेयं राक्षसाधिप ॥ ४०

कामं त्विदानीमपि मां व्यादिश त्वं परन्तप ।
न परः प्रेषणीयस्ते युद्धायातुलविक्रम ॥ ४१

अहमुत्सादयिष्यामि शत्रूंस्तव महाबल ॥ ४२

यदि शक्रो यदि यमो यदि पावकमारुतौ ।
तानहं योधयिष्यामि कुबेरवरुणावपि ॥ ४३

गिरिमात्रशरीरस्य शितशूलधरस्य मे ।
नर्दतस्तीक्ष्णदंष्ट्रस्य बिभीयाच्च पुरन्दरः ॥ ४४

अथ वा त्यक्तशस्त्रस्य मृद्गतस्तरसा रिपून् ।

न मे प्रतिमुखे स्थातुं कश्चिच्छक्तो जिजीविषुः ॥ ४५

नैव शक्या न गदया नासिना निशितैः शरैः ।

हस्ताभ्यामेव संरब्धो हनिष्याम्यपि वज्रिणम् ॥ ४६

यदि मे मुष्टिवेगं स राघवोऽद्य सहिष्यति ।

ततः पास्यन्ति बाणौघा रुधिरं राघवस्य तु ॥ ४७

चिन्तया बाध्यसे राजन् किमर्थं मयि तिष्ठति ।

सोऽहं शत्रुविनाशाय तव निर्यातुमुद्यतः ॥ ४८

मुञ्च रामाद्भयं राजन् हनिष्यामीह संयुगे ।

राघवं लक्ष्मणं चैव सुग्रीवं च महाबलम् ॥ ४९

हनुमन्तं च रक्षोघ्नं लङ्का येन प्रदीपिता ।

हरींश्चापि हनिष्यामि संयुगे समवस्थितान् ॥

असाधारणमिच्छामि तव दातुं महद्यशः ॥ ५०

यदि चेन्द्राद्भयं राजन् यदि वापि स्वयंभुवः ।

तत्तेऽहं नाशयिष्यामि नैशं तम इवांशुमान् ॥ ५१

अपि देवाः शयिष्यन्ते क्रुद्धे मयि महीतले ।

यमं च शमयिष्यामि भक्षयिष्यामि पावकम् ॥ ५२

आदित्यं पातयिष्यामि सनक्षत्रं महीतले ।

शतक्रतुं वधिष्यामि पास्यामि वरुणालयम् ॥ ५३

पर्वतांश्चूर्णयिष्यामि दारयिष्यामि मेदिनीम् ।

दीर्घकालं प्रसुप्तस्य कुम्भकर्णस्य विक्रमम् ॥ ५४

अद्य पश्यन्तु भूतानि भक्ष्यमाणानि सर्वशः ।

नन्विदं त्रिदिवं सर्वमाहारस्य न पूर्यते ॥ ५५

वधेन ते दाशरथेः सुखार्हं

सुखं समाहर्तुमहं व्रजामि ।

निकृत्य रामं सह लक्ष्मणेन

खादामि सर्वान् हरियूथमुख्यान् । ५६

रमस्व कामं पिब चाग्र्यवारुणीं

कुरुष्व कृत्यानि विनीयतां ज्वरः ।

मयाऽद्य रामे गमिते यमक्षयं

चिराय सीता वशगा भविष्यति ॥ ५७

इति त्रिषष्टितमः सर्गः ॥



चतुःषष्टितमः सर्गः ॥

यदुक्तमतिकायस्य बलिनो बाहुशालिनः ।

कुम्भकर्णस्य वचनं श्रुत्वोवाच महोदरः ॥ १

- कुम्भकर्ण कुले जातो धृष्टः प्राकृतदर्शनः ।
अवलितो न शक्नोषि कृत्यं सर्वत्र वेदितुम् ॥ २
- न हि राजा तु जानीते कुम्भकर्ण नयानयौ ।
त्वं तु कैशोरकाद्धृष्टः केवलं वक्तुमिच्छसि ॥ ३
- स्थानं वृद्धिं च हानिं च देशकालविभागवित् ।
आत्मनश्च परेषां च बुध्यते राक्षसर्षभः ॥ ४
- यत्तु शक्यं बलवता कर्तुं प्राकृतबुद्धिना ।
अनुपासितवृद्धेन कः कुर्यात्तादृशं बुधः ॥ ५
- यास्तु धर्मार्थकामांस्त्वं ब्रवीषि पृथगाश्रयान् ।
अनुबोद्धुं स्वभावं तान्न हि लक्षणमस्ति ते ॥ ६
- कर्म चैव हि सर्वेषां कारणानां प्रयोजनम् ।
श्रेयः पापीयसां चात्र फलं भवति कर्मणाम् ॥ ७
- निःश्रेयसफलावेव धर्मार्थावितरावपि ।
अधर्मानर्थयोः प्राप्तिः फलं च प्रत्यवायिकम् ॥ ८
- ऐहलौकिकपारत्नं कर्म पुंभिर्निषेव्यते ।
कर्माण्यपि तु कल्याणि लभते काममास्थितः ॥ ९

तत्र क्लृप्तमिदं राज्ञा हृदि कार्यं मतं च नः ।
शत्रौ हि साहसं यत्स्यात् किमिवात्रापनीयताम् ॥ १

एकस्यैवाभियाने तु हेनुर्यः प्राकृतस्त्वया ।
तत्राप्यनुपपन्नं ते वक्ष्यामि यदसाधु च ॥ १

येन पूर्वं जनस्थाने बहवोऽतिबला हताः ।
राक्षसा राघवं तं त्वं कथमेको जयिष्यसि ॥ १

ये पुरा निर्जितास्तेन जनस्थाने महौजसः ।
राक्षसांस्तान्पुरे सर्वान् भीतानद्यापि पश्यसि ॥ १

तं सिंहमिव संक्रुद्धं रामं दशरथात्मजम् ।
सर्पं सुप्तमिवाबुध्या प्रबोधयितुमिच्छसि ॥ १

ज्वलन्तं तेजसा नित्यं क्रोधेन च दुरासदम् ।
कस्तं मृत्युमिवासह्यमासादयितुमर्हति ॥ १

संशयस्थमिदं सर्वं शत्रोः प्रतिसमासने ।
एकस्य गमनं तत्र न हि मे रोचते भृशम् ॥ १

हीनार्थस्तु समृद्धार्थं को रिपुं प्राकृतं यथा ।
निश्चितं जीवितत्यागे वशमानेतुमिच्छति ॥ १

- यस्य नास्ति मनुष्येषु सदृशो राक्षसोत्तम ।
कथमाशंससे योद्धुं तुल्येनेन्द्रविवस्वतोः ॥ १८
- एवमुक्त्वा तु संरब्धं कुम्भकर्णो महोदरः ।
उवाच रक्षसां मध्ये रावणं लोकरावणम् ॥ १९
- लब्ध्वा पुनस्त्वं वैदेहीं किमर्थं संप्रजल्पसि ।
यदीच्छसि तदा सीता वशगा ते भविष्यति ॥ २०
- दृष्टः कश्चिदुपायो मे सीतोपस्थानकारकः ।
रुचिरश्चेत्स्वया बुद्ध्या राक्षसेश्वर तं शृणु ॥ २१
- अहं द्विजिह्वः संह्लादी कुम्भकर्णो वितर्दनः ।
पञ्च रामवधायैते निर्यान्त्वित्यवघोषय ॥ २२
- ततो गत्वा वयं युद्धं दास्यामस्तस्य यत्नतः ।
जेष्यामो यदि ते शत्रून्त्रोपायैः कृत्यमस्ति नः ॥ २३
- अथ जीवति नः शत्रुर्वयं च कृतसंयुगाः ।
ततः समभिपत्स्यामो मनसा यत्समीहितम् ॥ २४
- वयं युद्धादिहेष्यामो रुघिरेण समुक्षिताः ।
विदार्य स्वतनुं बाणै रामनामाङ्कितैः शितैः ॥ २५

भक्षितो राघवोऽस्माभिर्लक्ष्मणश्चेति वादिनः ।

तव पादौ ग्रहीष्यामस्त्वं नः कामं प्रपूरय ॥ २६

ततोऽवघोषय पुरे गजस्कन्धेन पार्थिव ।

हतो रामः सह भ्रात्रा ससैन्य इति सर्वतः ॥ २७

प्रीतो नाम ततो भूत्वा भृत्यानां त्वमरिन्दम ।

भोगांश्च परिवारांश्च कामां वसु दापय ॥ २८

ततो माल्यानि वासांसि वीराणामनुलेपनम् ।

पेयं च बहु योधेभ्यः स्वयं च मुदितः पिब ॥ २९

ततोऽस्मिन्बहुलीभूते कौलीने सर्वतो गते ।

भक्षितः ससुहृद्रामो राक्षसैरिति विश्रुते ॥ ३०

प्रविश्याश्वास्य चापि त्वं सीतां रहसि सान्त्वय ।

धनधान्यैश्च कामैश्च रत्नैश्चैनां प्रलोभय ॥ ३१

अनयोपधया राजन् भयशोकानुबन्धया ।

अकामा त्वद्वशं सीता नष्टनाथा गमिष्यति ॥ ३२

रञ्जनीयं हि भर्तारं विनष्टमवगम्य सा ।

नैराश्यात्स्त्रीलघुत्वाच्च त्वद्वशं प्रतिपत्स्यते ॥ ३३

सा पुरा सुखसंवृद्धा सुखार्हा दुःखकर्षिता ।
त्वय्यधीनं सुखं ज्ञात्वा सर्वथोपगमिष्यति ॥ ३४

एतत्सुनीतं मम दर्शनेन
रामं हि दृष्ट्वैव भवेदनर्थः ।
इहैव ते सेत्स्यति मोत्सुकोभू-
र्महानयुद्धेन सुखस्य लाभः ॥ ३५

अनष्टसैन्यो ह्यनवाप्तसंशयो
रिपूनयुद्धेन जयञ्जनाधिपः ।
यशश्च पुण्यं च महन्महीपते
श्रियं च कीर्तिं च चिरं समश्नुते ॥ ३६

इति चतुःषष्टितमः सर्गः ॥



पञ्चषष्टितमः सर्गः ॥

स तथोक्तस्तु निर्भर्त्स्य कुम्भकर्णो महोदरम् ।
अब्रवीद्राक्षसश्रेष्ठं भ्रातरं रावणं ततः ॥ १

सोऽहं तव भयं घोरं वधात्तस्य दुरात्मनः ।
रामस्याद्य प्रमार्जामि निर्वैरो हि सुखी भव ॥ २

गर्जन्ति न वृथा शूरा निर्जला इव तोयदाः ।
पश्य सम्पाद्यमानं तु गर्जितं युधि कर्मणा ॥

न मर्षयति चात्मानं संभावयति नात्मना ।
अदर्शयित्वा शूरास्तु कर्म कुर्वन्ति दुष्करम् ॥

विक्रवानामबुद्धीनां राज्ञा पण्डितमानिनाम् ।
शृण्वता सादितमिदं त्वद्विधानां महोदर ॥

युद्धे कापुरुषैर्नित्यं भवद्भिः प्रियवादिभिः ।
राजानमनुगच्छद्भिः कृत्यमेतद्भि सादितम् ॥

राजशेषा कृता लङ्का क्षीणः कोशो बलं हतम् ।
राजानमिममासाद्य सुहृच्चिह्नमित्रकम् ॥

एष निर्धाम्यहं युद्धमुद्यतः शत्रुनिर्जये ।
दुर्नयं भवतामद्य समीकर्तुं महाहवे ॥

एवमुक्तवतो वाक्यं कुम्भकर्णस्य धीमतः ।
प्रत्युवाच ततो वाक्यं प्रहसन् राक्षसाधिपः ॥

महोदरोऽयं रामात् तु परितस्तो न संशयः ।
न हि रोचयते तात युद्धं युद्धविशारद ॥

- कश्चिन्मे त्वत्समो नास्ति सौहृदेन बलेन च ।
गच्छ शत्रुवधाय त्वं कुम्भकर्णं जयाय च ॥ ११
- तस्मात् तु भयनाशार्थं भवान् संबोधितो मया ।
अयं हि कालः सुहृदां राक्षसानामरिन्दम ॥ १२
- तद्गच्छ शूलमादाय षाशहस्त इवान्तकः ।
वानरान् राजपुत्रौ च भक्षयादित्यतेजसौ ॥ १३
- समालोक्य तु ते रूपं विद्रविष्यन्ति वानराः ।
रामलक्ष्मणयोश्चापि हृदये प्रस्फुटिष्यतः ॥ १४
- एवमुक्त्वा महाराजः कुम्भकर्णं महाबलम् ।
पुनर्जातमिवात्मानं मेने राक्षसपुङ्गवः ॥ १५
- कुम्भकर्णबलाभिज्ञो जानंस्तस्य पराक्रमम् ।
बभूव मुदितो राजा शशाङ्क इव निर्मलः ॥
इत्येवमुक्तः संहृष्टो निर्जगाम महाबलः ॥ १६
- राज्ञस्तु वचनं श्रुत्वा कुम्भकर्णः समुद्यतः ।
आददे निशितं शूलं वेगान्छत्रुनिबर्हणम् ॥ १७
- सर्वकालायसं दीप्तं तप्तकाञ्चनभूषणम् ।
इन्द्राशनिसमं भीमं वज्रप्रतिमगौरवम् ॥ १८

देवदानवगन्धर्वयक्षकिन्नरसूदनम् ।

रक्तमालयं महाधाम स्वतश्चोद्धतपावकम् ॥ १९

आदाय निशितं शूलं शत्रुशोणितरञ्जितम् ।

कुम्भकर्णो महातेजा रावणं वाक्यमब्रवीत् ॥ २०

गमिष्याम्यहमेकाकी तिष्ठत्विह बलं महत् ।

अद्य तान्क्षुभितान्क्रुद्धो भक्षयिष्यामि वानरान् ॥ २१

कुम्भकर्णवचः श्रुत्वा रावणो वाक्यमब्रवीत् ॥ २२

सैन्यैः परिवृतो गच्छ शूलमुद्गरपाणिभिः ।

वानरा हि महात्मानः शीघ्राः सुव्यवसायिनः ॥ २३

एकाकिनं प्रमत्तं वा नयेयुर्दशनैः क्षयम् ।

तस्मात्परमदुर्धर्षैः सैन्यैः परिवृतो व्रज ॥ २४

रक्षसामहितं सर्वं शत्रुपक्षं निषूदय ॥ २५

अथासनात्समुत्पत्य स्रजं मणिकृतान्तराम् ।

आबबन्ध महातेजाः कुम्भकर्णस्य रावणः ॥ २६

अङ्गदान्यङ्गुलीवेष्टान् वराण्याभरणानि च ।

हारं च शशिसङ्काशमाबबन्ध महात्मनः ॥ २७

दिव्यानि च सुगन्धीनि माल्यदामानि रावणः ।
श्रोत्रे चासञ्जयामास श्रीमती चास्य कुण्डले ॥ २७

काञ्चनाङ्गदकेयूरनिष्काभरणमूषितः ।
कुम्भकर्णो बृहत्कर्णः सुहुतोऽग्निरिवावभौ ॥ २८

श्रोणीसूत्रेण महता मेचकेन व्यराजत ।
अमृतोत्पादने नद्धो भुजङ्गेनेव मन्दरः ॥ २९

स काञ्चनं भारसहस्रनिर्मितं
वियुत्प्रभं दीप्तमिवात्मभासा ।
आबध्यमानः कवचं रराज
सन्ध्याभ्रसंवीत इवादिराजः ॥ ३०

सर्वाभरणनद्धाङ्गः शूलपाणिः स राक्षसः ।
त्रिविक्रमकृतोत्साहो नारायण इवावभौ ॥ ३१

भ्रातरं संपरिष्वज्य कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ।
प्रणम्य शिरसा तस्मै संप्रतस्थे महाबलः ॥ ३२

निष्पतन्तं महाकायं महानादं महाबलम् ।
तमाशीर्भिः प्रशस्ताभिः प्रेषयामास रावणः ॥ ३३

शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषैः सैन्यैश्चापि वरायुधैः ।
तं गजैश्च तुरङ्गैश्च स्यन्दनैश्चाम्बुदस्वनैः ॥ ३४

अनुजग्मुर्महात्मानं रथिनो रथिनां वरम् ।
सर्पैरुष्टैः स्वरैरश्वैः सिंहद्विपमृगद्विजैः ॥ ३५

अनुजग्मुश्च तं घोरं कुम्भकर्णं महाबलम् ॥ ३६

स पुष्पवर्षैरवकीर्यमाणो
धृतातपत्रः शितशूलपाणिः ।
मदोत्कटः शोणितगन्धमत्तो
विनिर्ययौ दानवदेवशत्रुः ॥ ३७

पदातयश्च बहवो महानादा महाबलाः ।
अन्वयू राक्षसा भीमा भीमाक्षाः शस्त्रपाणयः ॥ ३८

रक्ताक्षाः सुमहाकाया नीलाञ्जनचयोपमाः ।
शूलानुद्यम्य खड्गांश्च निशितांश्च परश्वधान् ॥ ३९

बहुव्यामांश्च परिधान् गदाश्च मुसलानि च ।
तालस्कन्धांश्च विपुलान् क्षेपणीयान्दुरासदान् ॥ ४०

अथान्यद्वपुरादाय दारुणं रोमहर्षणम् ।
निष्पपात महातेजाः कुम्भकर्णो महाबलः ॥ ४१

धनुःशतपरीणाहः स षट्शतसमुच्छ्रितः ।
रौद्रः शकटचक्राक्षो महापर्वतसन्निभः ॥ ४२

सन्निवर्त्य च रक्षांसि दग्धशैलोपमो महान् ।
कुम्भकर्णो महावक्त्रः प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ ४३

अथ वानरमुख्यानां तानि यूथानि भागशः ।
निर्दहिष्यामि संक्रुद्धः शलभानिव पावकः ॥ ४४

नापराध्यन्ति मे कामं वानरा वनचारिणः ।
जातिरस्मद्विधानां सा पुरोद्यानविभूषणम् ॥ ४५

पुररोधस्य मूलं तु राघवः सहलक्ष्मणः ।
हृते तस्मिन्हृतं सर्वं तं वधिष्यामि संयुगे ॥ ४६

एवं तस्य ब्रुवाणस्य कुम्भकर्णस्य राक्षसाः ।
नादं चक्रुर्महाघोरं कम्पयन्त इवार्णवम् ॥ ४७

तस्य निष्पततस्तूर्णं कुम्भकर्णस्य धीमतः ।
बभूवुर्घोररूपाणि निमित्तानि समन्ततः ॥ ४८

उल्काशनियुता मेघा बभूवुर्गर्दभारुणाः ।
ससागरवना चैव वसुधा समकम्पत ॥ ४९

घोररूपाः शिवा नेदुः सज्वालकबलैर्मुखैः ।

मण्डलान्यपसव्यानि बबन्धुश्च विहङ्गमाः ॥

५७

निष्पपात च शूलोऽस्य गृध्रो वै पथि गच्छतः ।

प्रास्फुरन्नयनं चास्य सव्यो बाहुरकम्पत ॥

५१

निपपात तदा चोल्का ज्वलन्ती भीमनिःस्वना ।

आदित्यो निष्प्रभश्चासीन्न प्रवाति सुखोऽनिलः ॥

५२

अचिन्तयन्महोत्पातानुत्थितान्रोमहर्षणान् ।

निर्ययौ कुम्भकर्णस्तु कृतान्तबलचोदितः ॥

५३

स लङ्घयित्वा प्राकारं पञ्च्यां पर्वतसन्निभः ।

ददृशभ्रघनप्रख्यं वानरानीकमद्भुतम् ॥

५४

ते दृष्ट्वा राक्षसश्रेष्ठं वानराः पर्वतोपमम् ।

वायुनुन्ना इव घना ययुः सर्वा दिशस्तदा ॥

५५

तद्वानरानीकमतिप्रचण्डं

दिशो द्रवद्भिन्नमिवाभ्रजालम् ।

स कुम्भकर्णः समवेक्ष्य हर्षा-

न्नादाय भूयो घनवद्घनाभः ॥

५६

ते तस्य घोरं निनदं निशम्य

यथा निनादं दिवि वारिदस्य ।

पेतुर्घरण्यां बहवः प्लवङ्गा

निकृत्तमूला इव सालवृक्षाः ॥

५७

विपुलपरिघवान् स कुम्भकर्णो

रिपुनिधनाय विनिःसृतो महात्मा ।

कपिगणभयमादधत्सुभीमं

प्रभुरिव किङ्करदण्डवान् युगान्ते ॥

५८

इति षट्षष्टितमः सर्गः ॥



षट्षष्टितमः सर्गः ॥



स लङ्घयित्वा प्राकारं गिरिकूटोपमो महान् ।

निर्ययौ नगरात् तूर्णं कुम्भकर्णो महाबलः ॥

१

स ननाद महानादं समुद्रमभिनादयन् ।

जनयन्निव निर्घातान् विधमन्निव पर्वतान् ॥

२

तमवध्यं मघवता यमेन वरुणेन वा ।

भीमाक्षं प्रेक्ष्य निर्यान्तं वानरा विप्रदुद्रुवुः ॥

३

तांस्तु विद्रवतो दृष्ट्वा वालिपुत्रोऽङ्गदोऽब्रवीत् ।

नलं नीलं गवाक्षं च कुमुदं च महाबलम् ॥ ४

आत्मानमत्र विस्मृत्य वीर्याण्यभिजनानि च ।

क्व गच्छत भयत्रस्ताः प्राकृता हरयो यथा ॥ ५

साधु सौम्या निवर्तध्वं किं प्राणान्परिरक्षथ ।

नालं युद्धाय वै रक्षो महतीयं विभीषिका ॥ ६

महतीमुत्थितामेनां राक्षसानां विभीषिकाम् ।

विक्रमाद्विधमिष्यामो निवर्तध्वं प्लवङ्गमाः ॥ ७

कृच्छ्रेण तु समाश्वस्य सङ्गम्य च ततस्ततः ।

वृक्षाद्रिहस्ता हरयः संप्रतस्थू रणाजिरम् ॥ ८

ते निवृत्य तु संक्रुद्धाः कुम्भकर्णं वनौकसः ।

निजधनुः परमक्रुद्धाः समदा इव कुञ्जराः ॥ ९

प्रांशुभिर्गिरिशृङ्गैश्च शिलाभिश्च महाबलः ।

पादपैः पुष्पिताग्रैश्च हन्यमानो न कम्पते ॥ १०

तस्य गालेषु पतिता भिद्यन्ते शतशः शिलाः ।

पादपाः पुष्पिताग्राश्च भग्नाः पेतुर्महीतले ॥ ११

सोऽपि सैन्यानि संक्रुद्धो वानराणां महौजसाम् ।

ममन्थ परमायत्तो वनान्यग्निरिवोत्थितः ॥ १२

लोहितार्द्रास्तु बहवः शेरते वानरर्षभाः ।

निरस्ताः पतिता भूमौ ताम्रपुष्पा इव द्रुमाः ॥ १३

लङ्घयन्त प्रधावन्तो वानरा नावलोकयन् ।

केचित्समुद्रे पतिताः केचिद्गगनमाश्रिताः ॥ १४

वध्यमानास्तु ते वीरा राक्षसेन बलीयसा ।

सागरं येन ते तीर्णाः पथा तेन प्रदुद्रुवुः ॥ १५

ते स्थलानि तथा निम्नं विषण्णवदना भयात् ।

ऋक्षा वृक्षान्समारूढाः केचित्पर्वतमाश्रिताः ॥ १६

ममञ्जुरर्णवे केचिद्गुहाः केचित्समाश्रिताः ।

निपेतुः प्लवगाः केचित् केचिन्नैवावतस्थिरे ॥ १७

केचिद्भूमौ निपतिताः केचित्सुप्ता मृता इव ।

तान्समीक्ष्याङ्गदो भग्मान् वानरानिदमब्रवीत् ॥ १८

अवतिष्ठत युध्यामो निवर्तध्वं प्लवङ्गमाः ।

भग्नानां वो न पश्यामि परिक्रम्य महीमिमाम् ॥ १९

स्थानं सर्वे निवर्तध्वं किं प्राणान्परिरक्षथ ।

निरायुधानां द्रवतामसङ्गगतिपौरुषाः ॥ २०

दारा ह्यपहसिष्यन्ति स वै घातस्तु जीविनाम् ।

कुलेषु जाताः सर्वे स्म विस्तीर्णेषु महत्सु च ॥ २१

क्व गच्छथ भयत्रस्ता हरयः प्राकृता यथा ।

अनार्याः खलु यद्भीतास्त्यक्त्वा वीर्यं प्रधावत ॥ २२

विकथनानि वो यानि ब्रुवतां वै जनसंसदि ।

तानि वः क्व च यातानि सौहृदानि महान्ति च ॥ २३

भीरुप्रवादाः श्रूयन्ते यस्तु जीवति धिक्कृतः ।

मार्गः सत्पुरुषैर्जुष्टः सेव्यतां त्यज्यतां भयम् ॥ २४

शयामहेऽथ निहताः पृथिव्यामल्पजीविताः ।

दुष्प्रापं ब्रह्मलोकं वा प्राप्नुमो युधि सूदिताः ॥ २५

संप्राप्नुयामः कीर्तिं वा निहत्वा शत्रुमाहवे ।

जीवितं वीरलोकस्य मोक्षयामो वसु वानराः ॥ २६

न कुम्भकर्णः काकुत्स्थं दृष्ट्वा जीवन्गमिष्यति ।

दीप्यमानमिवासाद्य पतङ्गो ज्वलनं यथा ॥ २७

पलायनेन चोद्दिष्टाः प्राणान् रक्षामहे वयम् ।
एकेन बहवो भग्ना यशो नाशं गमिष्यति ॥ २८

एवं ब्रुवाणं तं शूरमङ्गदं कनकाङ्गदम् ।
द्रवमाणास्ततो वाक्यमूचुः शूरविगर्हितम् ॥ २९

कृतं नः कदनं घोरं कुम्भकर्णेन रक्षसा ।
न स्थानकालो गच्छामो दयितं जीवितं हि नः ॥ ३०

एतावदुक्त्वा वचनं सर्वे ते भेजिरे दिशः ।
भीमं भीमाक्षमायान्तं दृष्ट्वा वानरयूथपाः ॥ ३१

द्रवमाणास्तु ते वीरा अङ्गदेन वलीमुखाः ।
सान्त्वैश्चैवानुमानैश्च ततः सर्वे निवर्तिताः ॥ ३२

प्रहर्षमुपनीताश्च बालिपुत्रेण धीमता ।
आज्ञाप्रतीक्षास्तस्तुश्च सर्वे वानरयूथपाः ॥ ३३

ऋषभशरभमैन्दधूम्रनीलाः

कुमुदसुषेणगवाक्षरम्भताराः ।

द्विविदपनसवायुपुत्रमुख्या-

स्त्वरिततराभिमुखं रणं प्रयाताः ॥ ३४

इति षट्षष्टितमः सर्गः ॥



सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥

ते निवृत्ता महाकायाः श्रुत्वाऽङ्गदवचस्तदा ।

नैष्ठिकीं बुद्धिमासाद्य सर्वे संग्रामकाङ्क्षिणः ॥ १

समुदीरितवीर्याश्च समारोपितविक्रमाः ।

पर्यवस्थापिता वाक्यैरङ्गदेन वलीमुखाः ॥ २

प्रयाताश्च गता हर्षं मरणे कृतनिश्चयाः ।

चक्रुः सुतुमुलं युद्धं वानरास्त्यक्तजीविताः ॥ ३

अथ वृक्षान्महाकायाः सानूनि सुमहान्ति च ।

वानरास्तूर्णमुद्यम्य कुम्भकर्णमभिद्रुताः ॥ ४

स कुम्भकर्णः संक्रुद्धो गदामुद्यम्य वीर्यवान् ।

अर्दयन्सुमहाकायः समन्ताद्व्याक्षिपद्रिपून् ॥ ५

शतानि सप्त चाष्टौ च सहस्राणि च वानराः ।

प्रकीर्णाः शेरते भूमौ कुम्भकर्णेन पोथिताः ॥ ६

षोडशाष्टौ च दश च विंशस्त्रिंशत्तथैव च ।

परिक्षिप्य च बाहुभ्यां खादन् विपरिधावति ॥ ७

भक्षयन्भृशसंकुद्धो गरुडः पन्नगानिव ।

कृच्छ्रेण च समाश्रस्ताः सङ्गम्य च ततस्ततः ॥

वृक्षाद्रिहस्ता हरयस्तस्थुः संग्राममूर्धनि ॥

८

ततः पर्वतमुत्पात्य द्विविदः प्लवगर्षभः ।

दुद्राव गिरिशृङ्गाभं प्रलम्ब इव तोयदः ॥

९

तं समुत्पत्य चिक्षेप कुम्भकर्णस्य वानरः ।

तमप्राप्तो महाकायं तस्य सैन्येऽपतत्तदा ॥

१०

ममर्दाश्चान्गजांश्चापि रथांश्चैव नगोत्तमः ॥

११

तानि चान्यानि रक्षांसि पुनश्चान्यद्भिरेः शिरः ।

उत्पात्य द्विविदो वेगान्ममर्द प्लवगर्षभः ॥

१२

तच्छैलवेगाभिहतं हताश्वं हतसारथि ।

रक्षसां रुधिरक्लिन्नं बभूवायोधनं महत् ॥

१३

रथिनो वानरेन्द्राणां शरैः कालान्तकोपमैः ।

शिरांसि नदतां जुहुः सहसा भीमनिःस्वनाः ॥

१४

वानराश्च महात्मानः समुत्पात्य मेढ्राद्रुमान् ।

रथानश्चान्गजानुष्टान् राक्षसानभ्यसूदयन् ॥

१५

हनुमाञ्शैलशृङ्गाणि वृक्षांश्च विविधान्वहून् ।

ववर्ष कुम्भकर्णस्य शिरस्यम्बरमास्थितः ॥

१६

तानि पर्वतशृङ्गाणि शूलेन तु बिभेद सः ।

वभञ्ज वृक्षवर्षं च कुम्भकर्णो महाबलः ॥

१७

ततो हरीणां तदनीकमुग्रं

दुद्राव शूलं निशितं प्रगृह्य ।

तस्थौ ततोऽस्यापततः पुरस्ता-

न्महीधराग्रं हनुमान्प्रगृह्य ॥

१८

स कुम्भकर्णं कुपितो जघान

वेगेन शैलोत्तमभीमकायम् ।

स चुक्षुमे तेन तदाभिभूतो

मेदार्द्रगातो रुधिरावसिक्तः ॥

१९

स शूलमाविध्य तडित्प्रकाशं

गिरिं यथा प्रज्वलिताग्रशृङ्गम् ।

बाहून्तरे मारुतिमाजघान

गुहोऽचलं क्रौञ्चमिवोग्रशक्त्या ॥

२०

स शूलनिर्भिन्नमहामुजान्तरः

प्रविह्वलः शोणितमुद्रमन्मुखात् ।

ननाद भीमं हनुमान्महाहवे
युगान्तमेघस्तनितस्वनोपमम् ॥ २१

ततो विनेदुः सहसा प्रहृष्टा
रक्षोगणास्तं व्यथितं समीक्ष्य ।
प्लवङ्गमास्तु व्यथिता भयार्ताः
प्रदुद्रुवुः संयति कुम्भकर्णम् ॥ २२

ततस्तु नीलो बलवान् पर्यवस्थापयन्बलम् ।
प्रविचिक्षेप शैलाग्रं कुम्भकर्णाय धीमते ॥ २३

तमापतन्तं संप्रेक्ष्य मुष्टिनाभिजघान ह ।
मुष्टिप्रहाराभिहतं तच्छैलाग्रं व्यशीर्यत ॥
सविस्फुलिङ्गं सज्वालं निपपात महीतले ॥ २४

ऋषभः शरभो नीलो गवाक्षो गन्धमादनः ।
पञ्च वानरशार्दूलाः कुम्भकर्णमुपाद्रवन् ॥ २५

शैलैर्वृक्षैस्तलैः पादैर्मुष्टिभिश्च महाबलाः ।
कुम्भकर्णं महाकायं सर्वतोऽभिप्रदुद्रुवुः ॥ २६

स्पर्शानिव प्रहारांस्तान् वेदयानो न विव्यथे ।
ऋषभं तु महावेगं बाहुभ्यां परिष्वजे ॥ २७

कुम्भकर्णभुजाभ्यां तु पीडितो वानरर्षभः ।
निपषातर्षभो भीमः प्रमुखाद्वान्तशोणितः ॥ २८

मुष्टिना शरभं हत्वा जानुना नीलमाहवे ।
आजघान गवाक्षं तु तलेनेन्द्ररिपुस्तदा ॥ २९

दत्तप्रहारव्यथिता मुमुहुः शोणितोक्षिताः ।
निपेतुस्ते तु मेदिन्यां निकृत्ता इव किंशुकाः ॥ ३०

तेषु वानरमुख्येषु पतितेषु महात्मसु ।
वानराणां सहस्राणि कुम्भकर्णं प्रदुद्रुवुः ॥ ३१

तं शैलमिव शैलाभाः सर्वे ते प्लवगर्षभाः ।
समारुह्य समुत्पत्य ददंशुश्च महाबलाः ॥ ३२

तं नखैर्दशनैश्चापि मुष्टिभिर्जानुभिस्तथा ।
कुम्भकर्णं महाकायं ते जघ्नुः प्लवगर्षभाः ॥ ३३

स वानरसहस्रैस्तैराचितः पर्वतोपमः ।
रराज राक्षसव्याघ्रो गिरिरात्मरुहैरिव ॥ ३४

बाहुभ्यां वानरान्सर्वान् प्रगृह्य सुमहाबलः ।
भक्षयामास संक्रुद्धो गरुडः पन्नगानिव ॥ ३५

प्रक्षिप्ताः कुम्भकर्णेन वक्त्रे पातालसन्निभे ।

नासापुटाभ्यां निर्जग्मुः कर्णाभ्यां चैव वानराः ॥ ३६

भक्षयन्भृशसंकुद्धो हरीन्पर्वतसन्निभः ।

बभञ्ज वानरान्सर्वान् संकुद्धो राक्षसोत्तमः ॥ ३७

मांसशोणितसंक्लेदां भूमिं कुर्वन् स राक्षसः ।

चचार हरिसैन्येषु कालाग्निरिव मूर्च्छितः ॥ ३८

वज्रहस्तो यथा शक्रः पाशहस्त इवान्तकः ।

शूलहस्तो बभौ तस्मिन् कुम्भकर्णो महाहवे ॥ ३९

यथा शुष्काण्यरण्यानि ग्रीष्मे दहति पावकः ।

तथा वानरसैन्यानि कुम्भकर्णो विनिर्दहत् ॥ ४०

ततस्ते वध्यमानास्तु हतयूथा विनायकाः ।

वानरा भयसंविम्बा विनेदुर्विस्वरं भृशम् ॥ ४१

अनेकशो वध्यमानाः कुम्भकर्णेन वानराः ।

राघवं शरणं जग्मुर्व्यथिताः खिन्नचेतसः ॥ ४२

प्रभभ्रान्वानरान्दृष्ट्वा वज्रहस्तमुतात्मजः ।

अभ्यधावत वेगेन कुम्भकर्णं महाहवे ॥ ४३

शैलशृङ्गं महद्गृह्य विनदंश्च मुहुर्मुहुः ।

त्रासयन्राक्षसान्सर्वान् कुम्भकर्णपदानुगान् ॥ ४४

चिक्षेप शैलशिखरं कुम्भकर्णस्य मूर्धनि ॥ ४५

स तेनाभिहतो मूर्ध्नि शैलेनेन्द्ररिपुस्तदा ।

कुम्भकर्णः प्रजज्वाल कोपेन महता तदा ॥ ४६

सोऽभ्यधावत वेगेन वालिपुत्रममर्षणः ।

कुम्भकर्णो महानादस्त्रासयन्सर्ववानरान् ॥

शूलं ससर्ज रोषेण ह्यङ्गदे तु महाबलः ॥ ४७

तमापतन्तं बलवान् युद्धमार्गविशारदः ।

लाघवान्मोचयामास बलवान्वानर्षभः ॥ ४८

उत्पत्य चैनं सहसा तलेनोरस्यताडयत् ।

स तेनाभिहतः कोपात् प्रमुमोहाचलोपमः ॥ ४९

स लब्धसंज्ञोऽतिबलो मुष्टिमावर्त्य राक्षसः ।

अपहस्तेन चिक्षेप विसंज्ञः स पपात ह ॥ ५०

तस्मिन् प्लवगशार्दूले विसंज्ञे पतिते भुवि ।

तच्छूलं समुपादाय सुग्रीवमभिदुद्रुवे ॥ ५१

तमापतन्तं संप्रेक्ष्य कुम्भकर्णं महाबलम् ।
उत्पपात तदा वीरः सुग्रीवो वानराधिपः ॥ ५२

पर्वताग्रं समुद्धृत्य समाविध्य महाकपिः ।
अभिदुद्राव वेगेन कुम्भकर्णं महाबलम् ॥ ५३

तमापतन्तं संप्रेक्ष्य कुम्भकर्णः प्लवङ्गमम् ।
तस्थौ विकृतसर्वाङ्गो वानरेन्द्रसमुन्मुखः ॥ ५४

कपिशोणितदिग्धाङ्गं भक्षयन्तं प्लवङ्गमान् ।
कुम्भकर्णं स्थितं दृष्ट्वा सुग्रीवो वाक्यमब्रवीत् ॥ ५५

पातिताश्च त्वया वीराः कृतं कर्म सुदुष्करम् ।
भक्षितानि च सैन्यानि प्राप्तं ते परमं यशः ॥ ५६

त्यज तद्वानरानीकं प्राकृतैः किं करिष्यसि ।
सहस्रैकनिपातं मे पर्वतस्यास्य राक्षस ॥ ५७

तद्वाक्यं हरिराजस्य सत्वधैर्यसमन्वितम् ।
श्रुत्वा राक्षसशार्दूलः कुम्भकर्णोऽब्रवीद्वचः ॥ ५८

प्रजापतेस्तु पौत्रस्त्वं तथैवर्क्षरजःसुतः ।
श्रुतपौरुषसंपन्नः तस्माद्दर्जसि वानर ॥ ५९

स कुम्भकर्णस्य वचो निशम्य
 व्याविध्य शूलं सहसा मुमोच ।
 तेनाजघानोरसि कुम्भकर्णं
 शैलेन वज्राशनिसन्निभेन ॥

६०

तच्छैलशृङ्गं सहसा विकीर्णं
 भुजान्तरे तस्य तदा विशाले ।
 ततो विषेदुः सहसा प्लवङ्गा
 रक्षोगणाश्चापि मुदा विनेदुः ॥

६१

स शैलशृङ्गाभिहतश्चुकोप
 ननाद कोपाच्च विवृत्य वक्त्रम् ।
 व्याविध्य शूलं च तडित्प्रकाशं
 चिक्षेप हर्यृक्षपतेर्वधाय ॥

६२

तत्कुम्भकर्णस्य भुजप्रविद्धं
 शूलं शितं काञ्चनदामजुष्टम् ।
 क्षिप्तं समुत्पत्य निगृह्य दोभ्यां
 बभञ्ज वेगेन सुतोऽनिलस्य ॥

६३

कृतं भारसहस्रस्य शूलं कालायसं महत् ।
 बभञ्ज जानुन्यारोप्य ग्रहष्टः प्लवगर्षभः ॥

६४

शूलं भग्नं हनुमता दृष्ट्वा वानरवाहिनी ।
दृष्ट्वा ननाद बहुशः सर्वतश्चापि दुद्रुवे ॥ ६५

सिंहनादं च ते चक्रुः प्रहृष्टा वनगोचराः ।
मारुतिं पूजयाञ्चक्रुर्दृष्ट्वा शूलं तथागतम् ॥ ६६

स तत्तदा भग्नमवेक्ष्य शूलं
चुकोप रक्षोधिपतिर्महात्मा ।
उत्पात्य लङ्कामलयात् स शृङ्गं
जघान सुग्रीवमुपेत्य तेन ॥ ६७

स शैलशृङ्गामिहतो विसंज्ञः
पपात भूमौ युधि वानरेन्द्रः ।
तं प्रेक्ष्य भूमौ पतितं विसंज्ञं
नेदुः प्रहृष्टास्त्वथ यातुधानाः ॥ ६८

तमभ्युपेत्याद्भुतघोरवीर्यं
स कुम्भकर्णो युधि वानरेन्द्रम् ।
जहार सुग्रीवमभिप्रगृह्य
यथाऽनिलो मेघमतिप्रचण्डः ॥ ६९

स तं महामेघनिकाशरूप-
मुत्पात्य गच्छन् युधि कुम्भकर्णः ।

रराज मेरुप्रतिमानरूपो

मेरुर्यथाऽभ्युच्छित्तघोरशृङ्गः ॥ ७

ततस्तमुत्पात्य जगाम वीरः

संस्तूयमानो युधि राक्षसेन्द्रैः ।

शृण्वन्निनादं त्रिदशालयानां

प्लवङ्गराजग्रहविस्मितानाम् ॥ ७

ततस्तमादाय तदा स मेने

हरीन्द्रमिन्द्रोपममिन्द्रवीर्यः ।

अस्मिन् हते सर्वमिदं हतं स्यात्

सराघवं सैन्यमितीन्द्रशत्रुः ॥ ७

विद्रुतां वाहिनीं दृष्ट्वा वानराणां ततस्ततः ।

कुम्भकर्णेन सुग्रीवं गृहीतं चापि वानरम् ॥ ७

हनुमांश्चिन्तयामास मतिमान्मारुतात्मजः ।

एवं गृहीते सुग्रीवे किं कर्तव्यं मया भवेत् ॥ ७

यद्वै न्याय्यं मया कर्तुं तत्करिष्यामि सर्वथा ।

भूत्वा पर्वतसङ्काशो नाशयिष्यामि राक्षसम् ॥ ७

मया हते संयति कुम्भकर्णे

महाबले मुष्टिविकीर्णदेहे ।

विमोचिते वानरपार्थिवे च

भवन्तु हृष्टाः प्लवगाः समस्ताः ॥ ७६

अथवा स्वयमप्येष मोक्षं प्राप्स्यति पार्थिवः ।
गृहीतोऽयं यदि भवेत् त्रिदशैः सासुरोरगैः ॥ ७७

मन्ये न तावदात्मानं बुध्यते वानराधिपः ।
शैलप्रहाराभिहतः कुम्भकर्णेन संयुगे ॥ ७८

अयं मुहूर्तात्सुग्रीवो लब्धसंज्ञो महाहवे ।
आत्मनो वानराणां च यत्पथ्यं तत्करिष्यति ॥ ७९

मया तु मोक्षितस्यास्य सुग्रीवस्य महात्मनः ।
अप्रीतिश्च भवेत्कष्टा कीर्तिनाशश्च शाश्वतः ॥ ८०

तस्मान्मुहूर्तं काङ्क्षिष्ये विक्रमं पार्थिवस्य नः ।
भिन्नं च वानरानीकं तावदाश्वासयाम्यहम् ॥ ८१

इत्येवं चिन्तयित्वा तु हनूमान्मारुतात्मजः ।
भूयः संस्तम्भयामास वानराणां महाचमूम् ॥ ८२

स कुम्भकर्णोऽथ विवेश लङ्कां
स्फुरन्तमादाय महाहरिं तम् ।

विमानचर्यागृहगोपुरस्थैः

पुष्पाग्र्यवर्षैरवकीर्यमाणः ॥

लाजगन्धोदवर्षैस्तु सिच्यमानः शनैः शनैः ।

राजमार्गस्य शीतत्वात् संज्ञामाप महाबलः ॥

ततः स संज्ञामुपलभ्य कृच्छ्रा-

हलीयसस्तस्य भुजान्तरस्थः ।

अवेक्षमाणः पुरराजमार्गं

विचिन्तयामास मुहुर्महात्मा ॥

एवं गृहीतेन कथं नु नाम

शक्यं मया संप्रतिकर्तुमद्य ।

तथा करिष्यामि यथा हरीणां

भविष्यतीष्टं च हितं च कार्यम् ॥

ततः कराग्रैः सहसा समेत्य

राजा हरीणाममरेन्द्रशत्रुम् ।

खरैश्च कर्णौ दशनैश्च नासां

ददंश पार्श्वेषु च कुम्भकर्णम् ॥

स कुम्भकर्णो हतकर्णनासो

विदारितस्तेन विमर्दितश्च ।

रोषाभिभूतः क्षतजार्द्रगात्रः

सुग्रीवमाविध्य पिपेष भूमौ ॥

८८

स भूतले भीमबलाभिपिष्टः

सुरारिभिस्तैरभिहन्यमानः ।

जगाम खं वेगवदभ्युपेत्य

पुनश्च रामेण समाजगाम ॥

८९

कर्णनासात्रिहीनस्तु कुम्भकर्णो महाबलः ।

रराज शोणितैः सिक्तो गिरिः प्रस्रवणैरिव ॥

९०

शोणिताद्रो महाकायो राक्षसो भीमविक्रमः ।

युद्धायाभिमुखो भूयो मनश्चक्रे महाबलः ॥

९१

अमर्षाच्छोणितोद्गारी शुशुभे रावणानुजः ।

नीलाञ्जनचयप्रख्यः ससंध्य इव तोयदः ॥

९२

गते तु तस्मिन्सुरराजशत्रुः

क्रोधात्पदुद्राव रणाय भूयः ।

अनायुधोऽस्मीति विचिन्त्य रौद्रो

घोरं तदा मुद्गरमाससाद ॥

९३

ततः स पुर्याः सहसा महौजा

निष्क्रम्य तद्वानरसैन्यमुग्रम् ।

तेनैव रूपेण बभञ्ज रुष्टः

प्रहारमुष्ट्या च पदेन सद्यः ॥

९४

बभक्ष रूक्षो युधि कुम्भकर्णः

प्रजा युगान्तमिरिव प्रदीप्तः ।

बुभुक्षितः शोणितमांसगृध्नुः

प्रविश्य तद्वानरसैन्यमुग्रम् ॥

९५

चखाद रक्षांसि हरीन् पिशाचा-

नृक्षांश्च मोहाद्युधि कुम्भकर्णः ।

यथैव मृत्युर्हरते युगान्ते

स भक्षयामास हरींश्च मुख्यान् ॥

९६

एकं द्वौ त्रीन् बहून्क्रुद्धो वानरान्सह राक्षसैः ।

समादायैकहस्तेन प्रचिक्षेप त्वरन्मुखे ॥

९७

संप्रस्रवंस्तदा मेदः शोणितं च महाबलः ।

वध्यमानो नगेन्द्राग्रैर्भक्षयामास वानरान् ॥

९८

ते भक्ष्यमाणा हरयो रामं जग्मुस्तदा गतिम् ।

कुम्भकर्णो भृशं क्रुद्धः कपीन् खादन् प्रधावति ॥ ९९

शतानि सप्त चाष्टौ च विंशत् त्रिंशत्तथैव च ।

संपरिष्वज्य बाहुभ्यां खादन् विपरिधावति ॥ १००

मेदोवसाशोणितदिग्धगात्रः

कण्ठावसक्तग्रथितान्त्रमालः ।

ववर्ष शूलानि सुतीक्ष्णदंष्ट्रः

कालो युगान्ताग्निरिव प्रवृद्धः ॥ १०१

तस्मिन्काले सुमित्रायाः पुत्रः परबलार्दनः ।

चकार लक्ष्मणः क्रुद्धो युद्धं परपुरञ्जयः ॥ १०२

स कुम्भकर्णस्य शराञ्शरीरे सप्त वीर्यवान् ।

निचखानाददे बाणान् विससर्ज च लक्ष्मणः ॥ १०३

भियमानस्तदा तैस्तु विषेहे तत् स राक्षसः ।

ततश्चुकोप बलवान् सुमित्रानन्दवर्धनः ॥ १०४

अथास्य कवचं शुभ्रं जाम्बूनदमयं शुभम् ।

प्रच्छादयामास शरैः सन्ध्याभ्रैरिव तोयदः ॥ १०५

नीलाञ्जनचयप्रख्यैः शरैः काञ्चनभूषणैः ।

आवार्यमाणः शुशुभे मेघैः सूर्य इवांशुमान् ॥ १०६

ततः स राक्षसो भीमः सुमित्रानन्दवर्धनम् ।

सावज्ञमेव प्रोवाच वाक्यं मेघौघनिःस्वनम् ॥ १०७

अन्तकस्यापि क्रुद्धस्य भयदातारमाहवे ।

युध्यता मामभीतेन ख्यापिता वीरता त्वया ॥ १०८

प्रगृहीतायुधस्येव मृत्योरिव महामृधे ।

तिष्ठन्नप्यग्रतः पूज्यः को मे युद्धप्रदायकः ॥ १०९

ऐरावतगजारूढो घृतः सर्वामरैः प्रभुः ।

नैव शक्रोऽपि समरे स्थितपूर्वः कदाचन ॥ ११०

शृणु मे वीर संक्षोभं श्लाघनीयोऽसि मे रिपुः ॥ १११

अद्य त्वयाऽहं सौमिते बालेनापि पराक्रमैः ।

तोषितो गन्तुमिच्छामि त्वामनुज्ञाप्य राघवम् ॥ ११२

सत्त्वधैर्यबलोत्साहैस्तोषितोऽहं रणे त्वया ।

राममेवैकमिच्छामि हन्तुं यस्मिन् हते हतम् ॥ ११३

रामे मया चेन्निहते येऽन्ये स्थास्यन्ति संयुगे ।

तानहं योधयिष्यामि स्वबलेन प्रमाथिना ॥ ११४

इत्युक्तवाक्यं तद्रक्षः प्रोवाच स्तुतिसंहितम् ।

मृधे घोरतरं वाक्यं सौमित्रिः प्रहसन्निव ॥ ११५

यत्त्वं शक्रादिभिर्देवैरसह्यं प्राह पौरुषम् ।

तत्सत्यं नान्यथा वीर दृष्टस्तेऽद्य पराक्रमः ॥ ११६

एष दाशरथी रामस्तिष्ठत्यद्रिरिवापरः ।

मनोरथो रात्रिचरस्तत्समीपे भविष्यति ॥ ११७

इति श्रुत्वा ह्यनाहत्य लक्ष्मणं स निशाचरः ।

अतिक्रम्य च सौमित्रिं कुम्भकर्णो महाबलः ॥

राममेवाभिदुद्राव दारयन्निव मेदिनीम् ॥ ११८

अथ दाशरथी रामो रौद्रमस्त्रं प्रयोजयन् ।

कुम्भकर्णस्य हृदये ससर्ज निशिताञ्जशरान् ॥ ११९

तस्य रामेण विद्धस्य सहसाऽभिप्रधावतः ।

अङ्गारमिश्राः क्रुद्धस्य मुखान्निश्चेरुरर्चिषः ॥ १२०

रामास्त्रविद्धो घोरं वै नदन् राक्षसपुङ्गवः ।

अभ्यधावत संक्रुद्धो हरीन् विद्रावयन् रणे ॥ १२१

तस्योरसि निमग्नाश्च शरा बर्हिणवाससः ।

रेजुर्नोलाद्रिनिकटे प्रनृत्तस्येव बर्हिणः ॥ १२२

इस्ताच्चापि परिभ्रष्टा पपातोर्व्या महागदा ।

आयुधानि च सर्वाणि विप्रकीर्यन्त मृतले ॥ १२३

स निरायुधमात्मानं यदा मेने महाबलः ।

मुष्टिभ्यां चरणाभ्यां च चकार कदनं महत् ॥ १२४

स बाणैरतिविद्धाङ्गः क्षतजेन समुक्षितः ।

रुधिरं प्रतिसुप्ताव गिरिः प्रस्रवणं यथा ॥ १२५

स तीव्रेण च कोपेन रुधिरेण च मूर्च्छितः ।

वानरान् राक्षसानृक्षान् खादन्विपरिधावति ॥ १२६

अथ शृङ्गं समाविध्य भीमं भीमपराक्रमः ।

चिक्षेप राममुद्दिश्य बलवानन्तकोपमः ॥ १२७

अप्राप्तमन्तरा रामः सप्तभिस्तैरजिह्वगैः ।

शरैः काञ्चनचित्राङ्गैश्चिच्छेद पुरुषर्षभः ॥ १२८

तन्मैरुशिखराकारं द्योतमानमिव श्रिया ।

द्वे शते वानरेन्द्राणां पतमानमपातयत् ॥ १२९

तस्मिन्काले स धर्मात्मा लक्ष्मणो वाक्यमब्रवीत् ।

कुम्भकर्णवधे युक्तो योगान्परिमृशान्बहून् ॥ १३०

नैवायं वानरान् राजन्नापि जानाति राक्षसान् ।

मत्तः शोणितगन्धेन स्वान्परांश्चैव खादति ॥ १३१

साध्वेनमधिरोहन्तु सर्वे ते वानरर्षभाः ।

यूथपाश्च यथा मुख्यास्तिष्ठन्त्वस्य समन्ततः ॥ १३२

अप्ययं दुर्मतिः काले गुरुभारप्रपीडितः ।
प्रपतन्राक्षसो भूमौ नान्यान्हन्यात्प्लवङ्गमाः ॥ १३३

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।
ते समारुरुर्हुष्टाः कुम्भकर्णं प्लवङ्गमाः ॥ १३४

कुम्भकर्णस्तु संक्रुद्धः समारूढः प्लवङ्गमैः ।
व्यधूनयत् तान्वेगेन दुष्टहस्तीव हस्तिपान् ॥ १३५

तान्दृष्ट्वा निर्धुतान्रामो दुष्टोऽयमिति राक्षसः ।
समुत्पपात वेगेन धनुरुत्तममाददे ॥ १३६

क्रोधताम्रेक्षणो वीरो निर्दहन्निव चक्षुषा ।
राघवो राक्षसं रोषादभिदुद्राव वेगितः ॥ १३७

यूथपान्हर्षयन्सर्वान् कुम्भकर्णमयार्दितान् ॥ १३८

स चापमादाय भुजङ्गकल्पं
दृढज्यमुग्रं तपनीयचित्रम् ।
हरीन्समाश्वास्य समुत्पपात
रामो निबद्धोत्तमतूणबाणः ॥ १३९

स वानरगणैस्तैस्तु वृतः परमदुर्जयः ।
लक्ष्मणानुचरो रामः संप्रतस्थे महाबलः ॥ १४०

स ददर्श महात्मानं किरीटिनमरिन्दमम् ।
शोणिताप्लुतरक्ताक्षं कुम्भकर्णं महाबलम् ॥ १४१

सर्वान्समभिधावन्तं यथा रुष्टं दिशागजम् ।
मार्गमाणं हरीन्क्रुद्धं राक्षसैः परिवारितम् ॥ १४२

विन्ध्यमन्दरसङ्काशं काञ्चनाङ्गदभूषणम् ।
स्रवन्तं रुधिरं वक्त्राद्वर्षमेघमिवोत्थितम् ॥ १४३

जिह्वया परिलिह्यन्तं शोणितं शोणितेक्षणम् ।
मृद्नन्तं वानरानीकं कालान्तकयमोपमम् ॥ १४४

तं दृष्ट्वा राक्षसश्रेष्ठं प्रदीप्तानलवर्चसम् ।
विस्फारयामास तदा कार्मुकं पुरुषर्षभः ॥ १४५

स तस्य चापनिर्घोषात् कुपितो राक्षसर्षभः ।
अमृष्यमाणस्तं घोषमभिदुद्राव राघवम् ॥ १४६

ततस्तु बातोद्धतमेघकरूपं
भुजङ्गराजोत्तमभोगबाहुम् ।

तमापतन्तं धरणीधराभ-

मुवाच रामो युधि कुम्भकर्णम् ॥ १४७

आगच्छ रक्षोधिप मा विषाद-

मवस्थितोऽहं प्रगृहीतचापः ।

अवेहि मां शक्रसपत्न रामं

मया मुहूर्ताद्भविता विचेताः ॥

१४८

रामोऽयमिति विज्ञाय जहास विकृतस्वनम् ।

अभ्यधावत संक्रुद्धो हरीन्विद्रावयन् रणे ॥ १४९

पातयन्निव सर्वेषां हृदयानि वनौकसाम् ।

प्रहस्य विकृतं भीमं स मेघस्तनितोपमम् ॥

कुम्भकर्णो महातेजा राघवं वाक्यमब्रवीत् ॥ १५०

नाहं विराधो विज्ञेयो न कबन्धः खरो न च ।

न वाली न च मारीचः कुम्भकर्णोऽहमागतः ॥ १५१

पश्य मे सुदूरं घोरं सर्वकालायसं महत् ।

अनेन निर्जिता देवा दानवाश्च पुरा मया ॥ १५२

विकर्णनास इति मां नावज्ञातुं त्वमर्हसि ।

स्वरूपाऽपि हि न मे पीडा कर्णनासविनाशनात् ॥

दर्शयेक्ष्वाकुशार्दूल वीर्यं गात्रेषु मे लघु ।

ततस्त्वां भक्षयिष्यामि दृष्टपौरुषविक्रमम् ॥ १५४

स कुम्भकर्णस्य वचो निशम्य

रामः सुपुङ्गवान् विससर्ज बाणान् ।

तैराहतो वज्रसमप्रवेगै-

र्न चुक्षुभे न व्यथते सुरारिः ॥

१५५

यैः सायकैः सालबरा निकृता

वाली हतो वानरपुङ्गवश्च ।

ते कुम्भकर्णस्य तदा शरीरे

वज्रोपमा न व्यथयांप्रचक्रुः ॥

१५६

स वारिधारा इव सायकांस्तान्

पिबञ्जशरीरेण महेन्द्रशत्रुः ।

जघान रामस्य शरप्रवेगं

व्याविध्य तं मुद्गरमुग्रवेगम् ॥

१५७

ततस्तु रक्षः क्षतजानुलिप्तं

वित्रासनं देवमहाचमूनाम् ।

व्याविध्य तं मुद्गरमुग्रवेगं

विद्रावयामास चमूं हरीणाम् ॥

१५८

वायव्यमादाय ततो महास्रं

रामः प्रचिक्षेप निशाचराय ।

समुद्रं तेन जघान बाहुं

स कृत्तबाहुस्तुमुलं ननाद ॥

१५९

स तस्य बाहुर्गिरिशृङ्गकल्पः

समुद्रो राघवबाणकृतः ।

पपात तस्मिन् हरिराजसैन्ये

जघान तां वानरवाहिनीं च ॥

१६०

ते वानरा भग्नहतावशेषाः

पर्यन्तमाश्रित्य तदा विषण्णाः ।

प्रवेपिताङ्गा ददृशुः सुघोरं

नरेन्द्ररक्षोधिपसन्निपातम् ॥

१६१

स कुम्भकर्णोऽस्त्रनिकृत्तबाहु-

र्महेन्द्रकृत्ताग्र इवाचलेन्द्रः ।

उत्पाटयामास करेण वृक्षं

ततोऽभिदुद्राव रणे नरेन्द्रम् ॥

१६२

तं तस्य बाहुं सहसालवृक्षं

समुद्यतं पन्नगभोगकल्पम् ।

ऐन्द्रास्त्रयुक्तेन जघान रामो

बाणेन जाम्बूनदचितितेन ॥

१६३

स कुम्भकर्णस्य भुजो निकृत्तः

पपात भूमौ गिरिसन्निकाशः ।

विवेष्टमानोऽभिजघान वृक्षा-

ञ्जैलाञ्जिला वानरराक्षसांश्च ॥

१६४

तं छिन्नबाहुं समवेक्ष्य रामः

समापतन्तं सहसा नदन्तम् ।

द्वावर्धचन्द्रौ निशितौ प्रगृह्य

चिच्छेद पादौ युधि राक्षसस्य ॥

१६५

तौ तस्य पादौ प्रदिशो दिशश्च

गिरीन् गुहाश्चैव महार्णवं च ।

लङ्कां च सेनां कपिराक्षसानां

विनादयन्तौ विनिपेतुश्च ॥

१६६

निकृत्तबाहुर्विनिकृत्तपादो

विदार्य वक्त्रं बडवामुखाभम् ।

दुद्राव रामं सहसाऽभिगर्जन्

राहुर्यथा चन्द्रमिवान्तरिक्षे ॥

१६७

अपूरयत् तस्य मुखं शिताग्रै

रामः शरैर्मपिनद्धपुङ्खैः ।

स पूर्णवक्त्रो न शशाक वक्तुं

चुकूज कृच्छ्रेण मुमोह चापि ॥

३६८

अथाददे सूर्यमरीचिकल्पं

स ब्रह्मदण्डान्तककालकल्पम् ।

अरिष्टमैन्द्रं निशितं सुपुङ्खं

रामः शरं मारुततुल्यवेगम् ॥

१६९

तं वज्रजाम्बूनदचारुपुङ्खं

प्रदीप्तसूर्यज्वलनप्रकाशम् ।

महेन्द्रवज्राशनितुल्यवेगं

रामः प्रचिक्षेप निशाचराय ॥

२७०

स सायको राघवबाहुचोदितो

दिशः स्वभासा दश संप्रकाशयन् ।

सधूमवैश्वानरदीप्तदर्शनो

जगाम शक्राशनिवीर्यविक्रमः ॥

१७१

स तन्महापर्वतकूटसन्निभं

विवृतदंष्ट्रं चलचारुकुण्डलम् ।

चकर्त रक्षोधिपतेः शिरस्तथा

यथैव वृत्रस्य पुरा पुरन्दरः ॥

१७२

कुम्भकर्णशिरो भाति कुण्डलालंकृतं महत् ।

आदित्येऽभ्युदिते रालौ मध्यस्थ इव चन्द्रमाः ॥ १७३

तद्रामबाणाभिहतं पपात

रक्षःशिरः पर्वतसन्निकाशम् ।

बभञ्ज चर्यागृहगोपुराणि

प्राकारमुच्चं तमपातयच्च ॥

१७४

तच्चातिकायं हिमवत्प्रकाशं

रक्षस्तदा तोयनिधौ पपात ।

ग्राहान्वरान् मीनवरान्भुजङ्गान्

ममर्द भूमिं च तदा विवेश ॥

१७५

तस्मिन् हते ब्राह्मणदेवशलौ

महाबले संयति कुम्भकर्णे ।

चचाल भूर्भूमिधराश्च सर्वे

हर्षाच्च देवास्तुमुलं प्रणेदुः ॥

१७६

ततस्तु देवर्षिमहर्षिपन्नगाः

सुराश्च भूतानि सुपर्णगुह्यकाः ।

सयक्षगन्धर्वगणा नभोगताः

प्रहर्षिता रामपराक्रमेण ॥

१७७

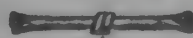
ततस्तु ते तस्य वधेन भूरिणा
 मनस्विनो नैर्ऋतराजबान्धवाः ।
 विनेदुरुच्चैर्व्यथिता रघूत्तमं
 हरिं समीक्ष्यैव यथा पुरा सुराः ॥ १७८

स देवलोकस्य तमो निहत्य
 सूर्यो यथा राहुमुखाद्विमुक्तः ।
 तथा व्यभासीद्भुवि वानरौघे
 निहत्य रामो युधि कुम्भकर्णम् ॥ १७९

प्रहर्षमीयुर्बहवस्तु वानराः
 प्रबुद्धपद्मप्रतिमैरिवाननैः ।
 अपूजयन् राघवमिष्टमागिनं
 हृते रिपौ भीमबले दुरासदे ॥ १८०

स कुम्भकर्णं सुरसङ्घमर्दनं
 महत्सु युद्धेषु पराजितश्रमम् ।
 ननन्द हत्वा भरताग्रजो रणे
 महासुरं वृत्रमिवामराधिपः ॥ १८१

इति सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥



अष्टषष्टितमः सर्गः ॥

कुम्भकर्णं हतं दृष्ट्वा रघवेण महात्मना ।

राक्षसा राक्षसेन्द्राय रावणाय न्यवेदयन् ॥

राजन् स कालसङ्काशः संयुक्तः कालधर्मणा ॥ १

विद्राव्य वानरीं सेनां भक्षयित्वा च वानरान् ।

प्रतपित्वा मुहूर्तं च प्रशान्तो रामतेजसा ॥ २

कायेनार्धप्रविष्टेन समुद्रं भीमदर्शनम् ।

निकृत्तकण्ठोरुभुजो विक्षरन् रुधिरं बहु ॥ ३

रुध्वा द्वारं शरीरेण लङ्कायाः पर्वतोपमः ।

कुम्भकर्णस्तव भ्राता काकुत्स्थशरपीडितः ॥ ४

लगण्डभूतो विकृतो दावदग्ध इव द्रुमः ॥ ५

तं श्रुत्वा निहतं संख्ये कुम्भकर्णं महाबलम् ।

रावणः शोकसन्तप्तो मुमोह च पपात च ॥ ६

पितृव्यं निहतं श्रुत्वा देवान्तकनरान्तकौ ।

त्रिशिरश्चातिकायश्च रुरुदुः शोकपीडिताः ॥ ७

भ्रातरं निहतं श्रुत्वा रामेणाक्लिष्टकर्मणा ।

महोदरमहापाश्र्वौ शोकाक्रान्तौ बभूवतुः ॥

८

ततः कृच्छ्रात्समासाद्य संज्ञां राक्षसपुङ्गवः ।

कुम्भकर्णवधाद्दीनो विललाप स रावणः ॥

९

हा वीर रिपुदर्पघ्न कुम्भकर्ण महाबल ।

त्वं मां विहाय वै दैवाद्यातोऽसि यमसादनम् ॥ १०

मम शल्यमनुद्धृत्य बान्धवानां महाबल ।

शत्रुसैन्यं प्रताप्यैकः क मां संत्यज्य गच्छसि ॥ ११

इदानीं खल्वहं नास्मि यस्य मे दक्षिणो भुजः ।

पतितो यं समाश्रित्य न बिभेमि सुरासुरान् ॥ १२

कथमेवंविधो वीरो देवदानवदर्पहा ।

कालामिरुद्रप्रतिमो रणे रामेण वै हतः ॥

१३

यस्य ते वज्रनिष्पेषो न कुर्याद्व्यसनं सदा ।

स कथं रामबाणार्तः प्रसुप्तोऽसि महीतले ॥

१४

एते देवगणाः सार्धमृषिभिर्गगने स्थिताः ।

निहतं त्वां रणे दृष्ट्वा निनदन्ति प्रहर्षिताः ॥

१५

ध्रुवमद्यैव संहृष्टा लब्धलक्षाः पुवङ्गमाः ।

आरोक्ष्यन्तीह दुर्गाणि लङ्काद्वाराणि सर्वतः ॥ १६

राज्येन नास्ति मे कार्यं किं करिष्यामि सीतया ।

कुम्भकर्णविहीनस्य जीविते नास्ति मे रतिः ॥ १७

यद्यहं भ्रातृहन्तारं न हन्मि युधि राघवम् ।

ननु मे मरणं श्रेयो न चेदं व्यर्थजीवितम् ॥ १८

अद्यैव तं गमिष्यामि देशं यत्रानुजो मम ।

न हि भ्रातृन् समुत्सृज्य क्षणं जीवितुमुत्सहे ॥ १९

देवा हि मां हसिष्यन्ति दृष्ट्वा पूर्वापकारिणम् ।

कथमिन्द्रं जयिष्यामि कुम्भकर्णं हते त्वयि ॥ २०

तदिदं मामनुप्राप्तं विभीषणवचः शुभम् ।

यदज्ञानान्मया तस्य न गृहीतं महात्मनः ॥ २१

विभीषणवचो यावत् कुम्भकर्णप्रहस्तयोः ।

विनाशोऽयं समुत्पन्नो मां व्रीडयति दारुणः ॥ २२

तस्यायं कर्मणः प्राप्तो विपाको मम शोकदः ।

यन्मया धार्मिकः श्रीमान् स निरस्तो विभीषणः ॥ २३

इति बहुविधमाकुलान्तरात्मा

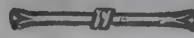
कृपणमतीव विलप्य कुम्भकर्णम् ।

न्यपतदथ दशाननो भृशार्त-

स्तमनुजमिन्द्ररिपुं हतं विदित्वा ॥

२४

इति अष्टषष्ठितमः सर्गः ॥



एकोनसप्ततितमः सर्गः ॥

एवं विलपमानस्य रावणस्य दुरात्मनः ।

श्रुत्वा शोकाभितप्तस्य त्रिशिरा वाक्यमब्रवीत् ॥ १

एवमेव महावीर्यो हतो नस्तात मध्यमः ।

न तु सत्पुरुषा राजन् विलपन्ति यथा भवान् ॥ २

नूनं लिभुवनस्यापि पर्याप्तस्त्वमसि प्रभो ।

स कस्मात्प्राकृत इव शोचस्यात्मानमीदृशम् ॥ ३

ब्रह्मदत्तास्ति ते शक्तिः कवचः सायको धनुः ।

सहस्रखरसंयुक्तो रथो मेघस्वनो महान् ॥ ४

त्वयाऽसकृद्विश्लेण विशस्ता देवदानवाः ।

स सर्वायुधसम्पन्नो राघवं शास्तुमर्हति ॥ ५

कामं तिष्ठ महाराज निर्गमिष्याम्यहं रणम् ।

उद्धरिष्यामि ते शत्रून् गरुडः पन्नगानिव ॥ ६

शम्बरो देवराजेन नरको विष्णुना यथा ।

तथाऽद्य शयिता रामो मया युधि निपातितः ॥ ७

श्रुत्वा त्रिशिरसो वाक्यं रावणो राक्षसाधिपः ।

पुनर्जातमिवात्मानं मन्यते कालचोदितः ॥ ८

श्रुत्वा त्रिशिरसो वाक्यं देवान्तकनरान्तकौ ।

अतिकायश्च तेजस्वी बभूवुर्युद्धहर्षिताः ॥ ९

ततोऽहमहमित्येव गर्जन्तो नैर्ऋतर्षभाः ।

रावणस्य सुता वीराः शक्रतुल्यपराक्रमाः ॥ १०

अन्तरिक्षगताः सर्वे सर्वे मायाविशारदाः ।

सर्वे त्रिदशदर्पणाः सर्वे च रणदुर्मदाः ॥ ११

सर्वे सबलसम्पन्नाः सर्वे विस्तीर्णकीर्तयः ।

सर्वे समरमासाद्य न श्रूयन्ते पराजिताः ॥ १२

देवैरपि सगन्धर्वैः सकिन्नरमहोरगैः ।

सर्वेऽस्त्रविदुषो वीराः सर्वे युद्धविशारदाः ॥

सर्वे प्रवरविज्ञानाः सर्वे लब्धवरास्तथा ॥ १३

स तैस्तदा भास्करतुल्यवर्चसैः

सुतैर्वृतः शत्रुबलप्रमर्दनैः ।

रराज राजा मघवान् यथामरै-

वृतो महादानवदर्पनाशनैः ॥

१४

स पुत्रान् संपरिष्वज्य भूषयित्वा च भूषणैः ।

आशीर्भिश्च प्रशस्ताभिः प्रेषयामास संयुगम् ॥

१५

युद्धोन्मत्तं च मत्तं च भ्रातरौ चापि रावणः ।

रक्षणार्थं कुमारानां प्रेषयामास संयुगे ॥

१६

तेऽभिवाद्य महात्मानं रावणं रिपुरावणम् ।

कृत्वा प्रदक्षिणं चैव महाकायाः प्रतस्थिरे ॥

१७

सर्वौषधीभिर्गन्धैश्च समालभ्य महाबलाः ।

निर्जग्मुर्नैर्ऋतश्रेष्ठाः षडेते युद्धकाङ्क्षिणः ॥

१८

त्रिशिरश्चातिकायश्च देवान्तकनरान्तकौ ।

महोदरमहापार्थ्वौ निर्जग्मुः कालचोदिताः ॥

१९

ततः सुदर्शनं नाम नीलजीमूतसन्निभम् ।

ऐरावतकुले जातमारुरोह महोदरः ॥

२०

सर्वायुधसमायुक्तं तूणीभिश्च स्वलंकृतम् ।

रराज गजमास्थाय सवितेवास्तमूर्धनि ॥

२१

हयोत्तमसमायुक्तं सर्वायुधसमाकुलम् ।

आरुरोह रथश्रेष्ठं त्रिशिरा रावणात्मजः ॥

२२

त्रिशिरा रथमास्थाय विरराज धनुर्धरः ।

सविद्युदुल्कः शैलाग्रे सेन्द्रचाप इवाम्बुदः ॥

२३

त्रिभिः किरीटैः शुशुमे त्रिशिराः स रथोत्तमे ।

हिमवानिव शैलेन्द्रत्रिभिः काञ्चनपर्वतैः ॥

२४

अतिकायोऽपि तेजस्वी राक्षसेन्द्रसुतस्तदा ।

आरुरोह रथश्रेष्ठं श्रेष्ठः सर्वधनुष्मताम् ॥

२५

सुचक्राक्षं सुसंयुक्तं स्वनुकर्षं सुकूबरम् ।

तूणीबाणासनैर्दोषं प्रासासिपरिघाकुलम् ॥

२६

स काञ्चनविचित्रेण मकुटेन विराजिता ।

भूषणैश्च बभौ मेरुः किरणैरिव भासयन् ॥

२७

स रराज रथे तस्मिन् राजसूनुर्महाबलः ।

वृत्तो नैर्ऋतशार्दूलैर्वज्रपाणिरिवामरैः ॥

२८

हयमुच्चैःश्रवःप्रख्यं श्वेतं कनकभूषणम् ।
मनोजवं महाकायमारुरोह नरान्तकः ॥ २९

गृहीत्वा प्रासमुल्काभं विरराज नरान्तकः ।
शक्तिमादाय तेजस्वी गुहः शिखिगतो यथा ॥ ३०

देवान्तकः समादाय परिधं वज्रभूषणम् ।
परिगृह्य गिरिं दोर्भ्यां वपुर्विष्णोर्विडम्बयन् ॥ ३१

महापार्श्वो महाकायो गदामादाय वीर्यवान् ।
विरराज गदापाणिः कुबेर इव संयुगे ॥ ३२

प्रतस्थिरे महात्मानो बलैरप्रतिमैर्वृताः ।
सुरा इवामरावत्या बलैरप्रतिमैर्वृताः ॥ ३३

ताङ्गजैश्च तुरङ्गैश्च रथैश्चाम्बुदनिस्वनैः ।
अनुजग्मुर्महात्मानो राक्षसाः प्रवरायुधाः ॥ ३४

ते विरेजुर्महात्मानः कुमाराः सूर्यवर्चसः ।
किरीटिनः श्रिया जुष्टा ग्रहा दीप्ता इवाम्बरे ॥ ३५

प्रगृहीता बभौ तेषां छत्राणामावलिः सिता ।
शारदाभ्रपतीकाशा हंसावलिरिवाम्बरे ॥ ३६

मरणं वाऽपि निश्चित्य शत्रूणां वा पराजयम् ।

इति कृत्वा मतिं वीरा निर्जग्मुः संयुगार्थिनः ॥ ३७

जगर्जुश्च प्रणेदुश्च चिक्षिपुश्चापि सायकान् ।

जगृहुश्चापि ते वीरा निर्यान्तो युद्धदुर्मदाः ॥ ३८

क्ष्वेलितास्फोटनिनदैश्चचाल च वसुन्धरा ।

रक्षसां सिंहनादैश्च पुस्फोटेव तदाऽम्बरम् ॥ ३९

तेऽभिनिष्क्रम्य मुदिता राक्षसेन्द्रा महाबलाः ।

ददृशुर्वानरानीकं समुद्यतशिलानगम् ॥ ४०

हरयोऽपि महात्मानो ददृशुर्नैर्ऋतं बलम् ।

हस्त्यश्चरथसंबाधं किङ्किणीशतनादितम् ॥ ४१

नीलजीमूतसङ्काशं समुद्यतमहायुधम् ।

दीप्तानलरविप्रख्यैः सर्वतो नैर्ऋतैर्वृतम् ॥ ४२

तद्दृष्ट्वा बलमायान्तं लब्धलक्षाः प्लवङ्गमाः ।

समुद्यतमहाशैलाः संप्रणेदुर्महाबलाः ॥ ४३

अमृष्यमाणा रक्षांसि प्रतिनर्दन्ति वानराः ॥ ४४

ततः समुद्घुष्टरवं निशम्य

रक्षोगणा वानरयूथपानाम् ।

अमृष्यमाणाः परहर्षमुग्रं

महाबला भीमतरं विनेदुः ॥

४५

ते राक्षसबलं घोरं प्रविश्य हरियूथपाः ।

विचेरुद्यतैः शैलैर्नगाः शिखरिणो यथा ॥

४६

केचिदाकाशमाविश्य केचिदुर्व्यां प्लवङ्गमाः ।

रक्षःसैन्येषु संक्रुद्धाश्चेरुर्द्रुमशिलायुधाः ॥

४७

द्रुमांश्च विपुलस्कन्धान् गृह्य वानरपुङ्गवाः ।

तद्युद्धमभवद्घोरं रक्षोवानरसंकुलम् ॥

४८

ते पादपशिलाशैलैश्चक्रुर्वृष्टिमनुत्तमाम् ।

बाणौघैर्वार्यमाणाश्च हरयो भीमविक्रमाः ॥

४९

सिंहनादान् विनेदुश्च रणे वानरराक्षसाः ।

शिलाभिश्चूर्णयामासुर्यातुघानान् प्लवङ्गमाः ॥

५०

निजघ्नुः संयुगे क्रुद्धाः कवचाभरणावृतान् ।

केचिद्रथगतान्वीरान् गजवाजिगतानपि ॥

५१

निजघ्नुः सहसाऽऽप्लुत्य यातुघानान्प्लवङ्गमाः ।

शैलशृङ्गाचिताङ्गास्ते मुष्टिभिर्वान्तलोचनाः ॥

५२

चेलुः पेतुश्च नेदुश्च तत्र राक्षसपुङ्गवाः ।

राक्षसाश्च शरैस्तीक्ष्णैर्विभिदुः कपिवुञ्जरान् ॥ ५३

शूलमुद्गरखड्गैश्च जघ्नुः प्रासैश्च शक्तिभिः ।

अन्योन्यं पातयामासुः परस्परजयैषिणः ॥ ५४

रिपुशोणितदिग्धाङ्गास्तत्र वानरराक्षसाः ।

ततः शैलैश्च खड्गैश्च विसृष्टैर्हरिराक्षसैः ॥ ५५

मुहूर्तेनावृता भूमिरभवच्छोणिताप्लुता ।

विकीर्णपर्वताकारै रक्षोभिररिमर्दनैः ॥

आसीद्वसुमती पूर्णा तदा युद्धमदान्वितैः ॥ ५६

आक्षिप्ताः क्षिप्यमाणाश्च भग्नशूलाश्च वानरैः ।

पुनरङ्गैस्तथा चक्रुरासन्ना युद्धमदभुतम् ॥ ५७

वानरान्वानरैरेव जघ्नुस्ते रजनीचराः ।

राक्षसान् राक्षसैरेव जघ्नुस्ते हरियूथपाः ॥ ५८

आक्षिप्य च शिलास्तेषां निजघ्नू राक्षसा हरीन् ।

तेषां चाच्छिद्य शस्त्राणि जघ्नू रक्षांसि वानराः ॥ ५९

निजघ्नुः शैलशूलास्त्रैर्विभिदुश्च परस्परम् ।

सिंहनादान् विनेदुश्च रणे वानरराक्षसाः ॥ ६०

छिन्नवर्मतनुत्राणा राक्षसा वानरैर्हताः ।

रुधिरं प्रस्रुतास्तत्र रससारमिवद्रुमाः ॥ ६१

रथेन च रथं चापि वारणेनैव वारणम् ।

हयेन च हयं केचिन्निजधनुर्वानरा रणे ॥ ६२

प्रहृष्टमनसः सर्वे प्रगृहीतमहाशिलाः ।

हरयो राक्षसाञ्जघ्नुर्द्रुमैश्च बहुशाखिभिः ॥ ६३

तद्युद्धमभवद्घोरं रक्षोवानरसंकुलम् ॥ ६४

क्षुरप्रैर्धचन्द्रैश्च भलैश्च निशितैः शरैः ।

राक्षसा वानरेन्द्राणां चिच्छिदुः पादपाञ्जिलाः ॥ ६५

विकीर्णैः पर्वताग्रैश्च द्रुमैश्छिन्नैश्च संयुगे ।

हतैश्च कपिरक्षोभिर्दुर्गमा वसुधाऽभवत् ॥ ६६

ते वानरा गर्वितहृष्टचेष्टाः

संग्राममासाद्य भयं विमुच्य ।

युद्धं तु सर्वे सह राक्षसैस्तै-

र्नानायुधाश्चक्रुरदीनसत्त्वाः ॥ ६७

तस्मिन् प्रवृत्ते तुमुले विमर्दे

प्रहृष्यमाणेषु बलीमुखेषु ।

निपात्यमानेषु च राक्षसेषु

महर्षयो देवगणाश्च नेदुः ॥

६

ततो हयं मारुततुल्यवेग-

मारुह्य शक्तिं निशितां प्रगृह्य ।

नरान्तको वानरराजसैन्यं

महार्णवं मीन इवाविवेश ॥

६९

स वानरान् सप्तशतानि वीरः

प्रासेन दीप्तेन विनिर्भिभेद ।

एकः क्षणेनेन्द्ररिपुर्महात्मा

जघान सैन्यं हरिपुङ्गवानाम् ॥

७०

ददृशुश्च महात्मानं हयपृष्ठे प्रतिष्ठितम् ।

चरन्तं हरिसैन्येषु विद्याधरमहर्षयः ॥

७१

स तस्य ददृशे मार्गो मांसशोणितकर्दमाः ।

पतितैः पर्वताकारैर्वानरैरभिसंवृतः ॥

७२

यावद्विक्रमितुं बुद्धिं चक्रुः प्लवगपुङ्गवाः ।

तावदेतानतिक्रम्य निर्भिभेद नरान्तकः ॥

७३

ज्वलन्तं प्रासमुद्यम्य संग्रामाग्रे नरान्तकः ।

ददाह हरिसैन्यानि वनानीव विभावसुः ॥

७४

यावदुत्पाटयामासुर्वृक्षाञ्शैलान् वनौकसः ।

तावत्प्रासहताः पेतुर्वज्रकृत्ता इवोचलाः ॥ ७५

दिक्षु सर्वासु बलवान् विचचार नरान्तकः ।

प्रमृद्नन् सर्वतो युद्धे प्रावृट्काले यथाऽनिलः ॥ ७६

न शेकुर्धावितुं वीरा न स्थातुं स्पन्दितुंभयात् ।

उत्पतन्तं स्थितं यान्तं सर्वान् विव्याध वीर्यवान् ॥ ७७

एकेनान्तककल्पेन प्रासेनादित्यतेजसा ।

भिन्नानि हरिसैन्यानि निपेतुर्धरणीतले ॥ ७८

वज्रनिष्पेषसदृशं प्रासस्याभिनिपातनम् ।

न शेकुर्वानराः सोढुं ते विनेदुर्महास्वनम् ॥ ७९

पततां हरिवीराणां रूपाणि प्रचकाशिरे ।

वज्रभिन्नाग्रकूटानां शैलानां पततामिव ॥ ८०

ये तु पूर्वं महात्मानः कुम्भकर्णेन पातिताः ।

ते स्वस्था वानरश्रेष्ठाः सुग्रीवमुपतस्थिरे ॥ ८१

विप्रेक्षमाणः सुग्रीवो ददर्श हरिवाहिनीम् ।

नरान्तकभयत्रस्तां विद्रवन्तीमितस्ततः ॥ ८२

विद्रुतां बाहिनीं दृष्ट्वा स ददर्श नरान्तकम् ।

गृहीतप्रासमायान्तं हयपृष्ठे प्रतिष्ठितम् ॥ ८३

अथोवाच महातेजाः सुग्रीवो वानराधिपः ।

कुमारमङ्गदं वीरं शक्रतुल्यपराक्रमम् ॥ ८४

गच्छ त्वं राक्षसं वीरं योऽसौ तुरगमास्थितः ।

क्षोभयन्तं हरिबलं क्षिप्रं प्राणैर्वियोजय ॥ ८५

स भर्तुर्वचनं श्रुत्वा निष्पपाताङ्गदस्ततः ।

अनीकान्मेघसङ्काशान् मेघानीकानिवांशुमान् ॥ ८६

शैलसङ्घातसङ्काशो हरिणामुत्तमोऽङ्गदः ।

रराजाङ्गदसन्नद्धः सधातुरिव पर्वतः ॥ ८७

निरायुधो महातेजाः केवलं नखदंष्ट्रवान् ।

नरान्तकमभिक्रम्य वालिपुत्रोऽब्रवीद्वचः ॥ ८८

तिष्ठ किं प्राकृतैरेभिर्हरिभिस्त्वं करिष्यसि ।

अस्मिन्वज्रसमस्पर्शं प्रासं क्षिप ममोरसि ॥

अङ्गदस्य वचः श्रुत्वा प्रचुक्रोध नरान्तकः ॥ ८९

सन्दश्य दशनैरोष्ठं विनिःश्वस्य भुजङ्गवत् ।

अभिगम्याङ्गदं क्रुद्धो वालिपुत्रं नरान्तकः ॥ ९०

प्रासं समाविध्य तदाऽङ्गदाय
समुज्ज्वलन्तं सहस्रोत्ससर्ज ।

स वालिपुत्रोरसि वज्रकल्पे
बभूव भग्नो न्यपतच्च भूमौ ॥ ९१

तं प्रासमालोक्य तदा विभग्नं
सुपर्णकृतोरगभोगकल्पम् ।

तलं समुद्यम्य स वालिपुत्र-
स्तुरङ्गमं तस्य जघान मूर्ध्नि ॥ ९२

निमग्नतालुः स्फुटिताक्षिताधरो
निष्क्रान्तजिह्वोऽचलसन्निकाशः ।

स तस्य वाजी निपपात भूमौ
तलप्रहारेण विकीर्णमूर्धा ॥ ९३

नरान्तकः क्रोधवशं जगाम
हतं तुरङ्गं पतितं निरीक्ष्य ।

स मुष्टिमुद्यम्य महाप्रभावो
जघान शीर्षे युधि वालिपुत्रम् ॥ ९४

अथाऽङ्गदो मुष्टिविभिन्नमूर्धा
सुस्राव तीव्रं रुधिरं भृशोष्णम् ।

मुहुर्विज्ज्वाल मुमोह चापि

संज्ञां समासाद्य विसिष्टिमये च ॥

९५

अथाङ्गदो वज्रसमानवेगं

संवर्त्य मुष्टिं गिरिशृङ्गकल्पम् ।

निपातयामास तदा महात्मा

नरान्तकस्योरसि वालिपुत्रः ॥

९६

स मुष्टिनिष्पिष्टविभिन्नवक्षा

ज्वालावमच्छोणितदिग्धगात्रः ।

नरान्तको भूमितले पपात

यथाऽचलो वज्रनिपातभग्नः ॥

९७

अथान्तरिक्षे त्रिदशोत्तमानां

वनौकसां चैव महाप्रणादः ।

बभूव तस्मिन्निहतेऽग्र्यवीरे

नरान्तके वालिसुतेन संख्ये ॥

९८

अथाङ्गदो राममनःप्रहर्षणं

सुदुष्करं तत्कृतवान् हि विक्रमम् ।

विसिष्टिमये सोऽप्यतिवीर्यविक्रमः

पुनश्च युद्धे स बभूव हर्षितः ॥

९९

इति एकोनसप्ततितमः सर्गः ॥



सप्ततितमः सर्गः ॥

नरान्तकं हतं दृष्ट्वा चुक्रुशुर्नैर्ऋतर्षभाः ।
देवान्तकस्त्रिमूर्धा च पौलस्त्यश्च महोदरः ॥ १

आरूढो मेघसङ्काशं वारणेन्द्रं महोदरः ।
वालिपुत्रं महावीर्यमभिदुद्राव वीर्यवान् ॥ २

भ्रातृव्यसनसन्तप्तस्तथा देवान्तको बली ।
आदाय परिघं दीप्तमङ्गदं समभिद्रवत् ॥ ३

रथमादित्यसङ्काशं युक्तं परमवाजिभिः ।
आस्थाय तिशिरा वीरो वालिपुत्रमथाभ्ययात् ॥ ४

स त्रिभिर्देवदर्पन्नैर्नैर्ऋतेन्द्रैरभिद्रुतः ।
वृक्षमुत्पाटयामास महाविटपमङ्गदः ॥ ५

देवान्तकाय तं वीरश्चिक्षेप सहसाऽङ्गदः ।
महावृक्षं महाशाखं शक्रो दीप्तमिवाशनिम् ॥ ६

तिशिरास्तं प्रचिच्छेद शरैराशीविषोपमैः ।
स वृक्षं कृतमालोक्य उत्प्रात तदाऽङ्गदः ॥ ७

स ववर्ष ततो वृक्षाञ्जैलांश्च कपिकुञ्जरः ।
तान्प्रचिच्छेद संक्रुद्धस्त्रिशिरा निशितैः शरैः ॥ ८

परिघात्रेण तान्वृक्षान् बभञ्ज स सुरान्तकः ।
त्रिशिराश्चाङ्गदं वीरमभिदुद्राव सायकैः ॥ ९

गजेन समभिद्रुत्य वालिपुत्रं महोदरः ।
जघानोरसि संक्रुद्धस्तोमैर्वज्रसन्निभैः ॥ १०

देवान्तकश्च संक्रुद्धः परिघेण तदाऽङ्गदम् ।
उपगम्याभिहत्याशु व्यपचक्राम वेगवान् ॥ ११

स त्रिभिर्नैर्ऋतश्रेष्ठैर्युगपत्समभिद्रुतः ।
न विव्यथे महातेजा वालिपुत्रः प्रतापवान् ॥ १२

स वेगवान्महावेगं कृत्वा परमदुर्जयः ।
तलेन समभिद्रुत्य जघानास्य महागजम् ॥ १३

तस्य तेन प्रहारेण नागराजस्य संयुगे ।
पेततुर्लोचने तस्य विननाद स वारणः ॥ १४

विषाणं चास्य निष्कृष्य वालिपुत्रो महाबलः ।
देवान्तकमभिप्लुत्य ताडयामास संयुगे ॥ १५

स विह्वलितसर्वाङ्गो वातोद्धूत इव द्रुमः ।

लाक्षारससवर्णं च सुस्नाव रुधिरं मुखात् ॥ १६

अथाश्वास्य महातेजाः कृच्छ्राद्देवान्तको बली ।

आविध्य परिधं घोरमाजघान तदाऽङ्गदम् ॥ १७

परिघाभिहतश्चापि वानरेन्द्रात्मजस्तदा ।

जानुभ्यां पतितो भूमौ पुनरेवोत्पपात ह ॥ १८

तमुत्पतन्तं त्रिशिरास्त्रिभिर्बाणैरजिह्वगैः ।

घोरैर्हरिपतेः पुत्रं ललाटेऽभिजघान ह ॥ १९

ततोऽङ्गदं परिक्षिप्तं त्रिभिर्नैर्ऋतपुङ्गवैः ।

हनुमानपि विज्ञाय नीलश्चापि प्रतस्थतुः ॥ २०

ततश्चिक्षेप शैलाग्रं नीलस्त्रिशिरसे तदा ।

तद्रावणमुतो धीमान् बिभेद निशितैः शरैः ॥ २१

तद्वाणशतनिर्मितं विदारितशिलातलम् ।

सविम्फुलिङ्गं सज्वालं निपपात गिरेः शिरः ॥ २२

ततो जृम्भितमालोक्य हर्षाद्देवान्तकस्तदा ।

परिघेणाभिदुद्राव मारुतात्मजमाहवे ॥ २३

तमापतन्तमुत्प्लुत्य हनुमान्मारुतात्मजः ।

आजघान तदा मूर्ध्नि वज्रकल्पेन मुष्टिना ॥ २४

शिरसि प्रहरन् वीरस्तदा वायुसुतो बली ।

नादेनाकम्पयच्चैव राक्षसान् स महाकपिः ॥ २५

स मुष्टिनिष्पिष्टविकीर्णमूर्धा

निर्वान्तदन्ताक्षिविलम्बिजिह्वः ।

देवान्तको राक्षसराजसूनु-

र्गतासुरार्थ्य सहसा पपात ॥ २६

तस्मिन् हते राक्षसयोधमुख्ये

महाबले संयति देवशत्रौ ।

क्रुद्धस्त्रिमूर्धा निशिताग्रमुग्रं

ववर्ष नीलोरसि बाणवर्षम् ॥ २७

महोदरस्तु संक्रुद्धः कुञ्जरं पर्वतोपमम् ।

भूयः समधिरुह्याशु मन्दरं रश्मिमानिव ॥ २८

ततो बाणमयं वर्षं नीलस्योरस्यपातयत् ।

गिरौ वर्षं तडिच्चक्रचापवानिव तोयदः ॥ २९

ततः शरौघैरभिवर्ष्यमाणो

विभिन्नगात्रः कपिसैन्यपालः ।

नीलो बभूवाथ निसृष्टगालो

विष्टम्भितस्तेन महाबलेन ॥

३०

ततस्तु नीलः प्रतिलभ्य संज्ञां

शैलं समुत्पात्य सवृक्षषण्डम् ।

ततः समुत्पत्य भृशोग्रवेगो

महोदरं तेन जघान मूर्ध्नि ॥

३१

ततः स शैलेन्द्रनिपातभग्नो

महोदरस्तेन महाद्विपेन ।

विपोथितो भूमितले गतासुः

पपात वज्राभिहतो यथाऽद्रिः ॥

३२

पितृव्यं निहतं दृष्ट्वा त्रिशिराश्चापमाददे ।

हनुमन्तं च संक्रुद्धो विव्याध निशितैः शरैः ॥

३३

स वायुसूनुः कुपितश्चिक्षेप शिखरं गिरेः ।

त्रिशिरास्तच्छरैस्तीक्ष्णैर्बिभेद बहुधा बली ॥

३४

तद्यर्थं शिखरं दृष्ट्वा द्रुमवर्षं महाकपिः ।

विससर्ज रणे तस्मिन् रावणस्य सुतं प्रति ॥

३५

तमापतन्तमाकाशे द्रुमवर्षं प्रतापवान् ।

त्रिशिरा निशितैर्बाणैश्चिच्छेद च ननाद च ॥

३६

हनुमांस्तु तमुत्पत्य हयांस्त्रिशिरसस्तदा ।

विददार नखैः क्रुद्धो गजेन्द्रं मृगराडिव ॥

३७

अथ शक्तिं समादाय कालरातिमिवान्तकः ।

चिक्षेपानिलपुत्राय त्रिशिरा रावणात्मजः ॥

३८

दिवः क्षिप्तामिवोल्कां तां शक्तिं क्षिप्तामसङ्गताम् ।

गृहीत्वा हरिशार्दूलो बभञ्ज च ननाद च ॥

३९

तां दृष्ट्वा घोरसङ्काशां शक्तिं भग्नां हनूमता ।

प्रहृष्टा वानरगणा विनेदुर्जलदा इव ॥

४०

ततः खड्गं समुद्यम्य त्रिशिरा राक्षसोत्तमः ।

निजघान तदा व्यूढे वायुपुत्रस्य वक्षसि ॥

४१

खड्गप्रहाराभिहतो हनूमान्मारुतात्मजः ।

आजघान त्रिमूर्धानं तलेनोरसि वीर्यवान् ॥

४२

स तलाभिहतस्तेन सस्तहस्तायुधो भुवि ।

निपपात महातेजास्त्रिशिरास्त्यक्तचेतनः ॥

४३

स तस्य पततः खड्गं समाच्छिद्य महाकपिः ।

ननाद गिरिसङ्काशस्त्रासयन् सर्वनैर्ऋतान् ॥

४४

अमृष्यमाणस्तं घोषमुत्पपात निशाचरः ।

उत्पत्य च हनूमन्तं ताडयामास मुष्टिना ॥

तेन मुष्टिप्रहारेण संचुकोप महाकपिः ॥ ४५

कुपितश्च निजग्राह किरीटे राक्षसर्षभम् ।

हनूमान् रोषताम्राक्षो राक्षसं परवीरहा ॥ ४६

स तस्य शीर्षाण्यसिना शितेन

किरीटजुष्टानि सकुण्डलानि ।

क्रुद्धः प्रचिच्छेद सुतोऽनिलस्य

त्वष्टुः सुतस्येव शिरांसि शक्रः ॥ ४७

तान्यायताक्षाण्यगसन्निभानि

प्रदीप्तवैश्वानरलोचनानि ।

पेतुः शिरांसीन्द्ररिपोर्धरण्यां

ज्योतींषि मुक्तानि यथार्कमार्गात् ॥ ४८

तस्मिन् हते देवरिपौ त्रिशिर्षे

हनूमता शक्रपराक्रमेण ।

नेदुः प्लवङ्गाः प्रचचाल भूमी

रक्षांस्यथो दुद्रुविरे समन्तात् ॥ ४९

हतं त्रिशिरसं दृष्ट्वा तथैव च महोदरम् ।
हतौ प्रेक्ष्य दुराधर्षौ देवान्तकनरान्तकौ ॥ ५०

चुकोप परमामर्षो मत्तो राक्षसपुङ्गवः ॥ ५१

जग्राहार्चिष्मतीं घोरां गदां सर्वायसीं शुभाम् ।
हेमपट्टपरिक्षिप्तां मांसशोणितलेपनाम् ॥ ५२

विराजमानां वपुषा शत्रुशोणितरञ्जिताम् ।
तेजसा संप्रदीप्ताग्रां रक्तमाल्यविभूषिताम् ॥ ५३

ऐरावतमहापद्मसार्वभौमभयावहाम् ।
गदामादाय संक्रुद्धो मत्तो राक्षसपुङ्गवः ॥
हरीन्समभिदुद्राव युगान्ताग्निरिव ज्वलन् ॥ ५४

अथर्षभः समुत्पत्य वानरो रावणानुजम् ।
मत्तानीकमुपागम्य तस्थौ तस्याग्रतो बली ॥ ५५

तं पुरस्थात् स्थितं दृष्ट्वा वानरं पर्वतोपमम् ।
आजघानोरसि क्रुद्धो गदया वज्रकल्पया ॥ ५६

स तयाऽभिहतस्तेन गदया वानरर्षभः ।
भिन्नवक्षाः समाधूतः सुस्राव रुधिरं बहु ॥ ५७

स संप्राप्य चिरात् संज्ञामृषभो वानरर्षभः ।
क्रुद्धो विस्फुरमाणोष्ठो महापार्श्वमुदैक्षत ॥

५८

स वेगवान् वेगवदभ्युपेत्य
तं राक्षसं वानरसैन्यमुख्यः ।
संवर्त्य मुष्टिं सहसा जघान
बाह्वन्तरे शैलनिकाशरूपः ॥

५९

स कृत्तमूलः सहसैव वृक्षः
क्षितौ पपात क्षतजोक्षिताङ्गः ।
तां चास्य घोरां यमदण्डकल्पां
गदां प्रगृह्णाशु ननाद भूयः ॥

६०

मुहूर्तमासीत् स गतासुकल्पः
प्रत्यागतात्मा सहसा सुरारिः ।
उपेत्य सन्ध्याभ्रसमानवर्ण-
स्तं वारिराजात्मजमाजघान ॥

६१

स मूर्च्छितो भूमितले पपात
मुहूर्तमुत्पत्य पुनः ससंज्ञः ।
तामेव तस्याद्रिवराग्रकल्पां
गदां समाविध्य जघान सङ्घे ॥

६२

सा तस्य रौद्रःसमुपेत्य देहं
रौद्रस्य देवाध्वरविप्रशतोः ।

बिभेद रक्षः क्षतजं च भूरि
सुस्राव धात्वम्भ इवादिराजः ॥ ६३

अभिजग्राह वेगेन गदां तस्य महात्मनः ।
गृहीत्वा तां गदां भीमामाविध्य च पुनः पुनः ॥ ६४

मत्तानीकं महात्मानं जघान रणमूर्धनि ॥ ६५

स स्वया गदया भग्नो विशीर्णदशनेक्षणः ।
निपपात ततो मत्तो वज्राहत इवाचलः ॥ ६६

विशीर्णनयने भूमौ गतसत्त्वे गतायुषि ।
पतिते राक्षसे तस्मिन् विद्रुतं राक्षसं बलम् ॥ ६७

तस्मिन् हते भ्रातरि रावणस्य
तन्नैर्ऋतानां बलमर्णवाभम् ।
त्यक्तायुधं केवलजीवितार्थं
दुद्राव भिन्नार्णवसन्निकाशम् ॥ ६८

इति सप्ततितमः सर्गः ॥



